For any information please contact:
Editor
Annals of Multi-Disciplinary Research
Tara Nagar Colony, Chhittupur, BHU, Varanasi
Mob.09415390515, 0542-2366370
Email: annalsmdresearch@gmail.com
www.annalsmdresearch.blogspot.com

ISSN 2249 - 8893

P.PUBLICATION

Annals of Multi-Disciplinary Research Vol. 11 Issue IV December 2021

UGC Approved Journal No - 48728

P.PUBLICATION

Annals of Multi-Disciplinary Research

ISSN 2249 - 8893

A Quarterly International Peer Reviewed Refereed Research Journal

Chief Editor :
Dr. R.P.S. Yadav

Editor :
Dr. Sarvesh Kumar

(IIJIF) Impact Factor - 3.034

ISSN 2249 - 8893

Annals of Multi-Disciplinary Research

A Quarterly International **Peer Reviewed** Refereed Research Journal

Volume 11 **Issue IV** **December 2021**

Editor

Dr. Sarvesh Kumar

UPRTOU Allahabad

Chief Editor

Dr. R. P.S. Yadav

Incharge Director,
School of Humanities
UPRTOU Allahabad
www. annalsmdresearch.com

E-mail : annalsmdresearch@gmail.com **www. annalsmdresearch.blogspot.com**

CONTENTS

- **बी.एड. प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षण अभिवृत्ति एवं शैक्षिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन** **1-3**
  अभिषेक तिवारी, शोधार्थी शिक्षक प्रशिक्षण विभाग, शिब्ली नेशनल पी. जी. कॉलेज, आजमगढ़
  डॉ. अफजाल अहमद, एसोसिएट प्रोफेसर, शिक्षक प्रशिक्षण विभाग, शिब्ली नेशनल पी. जी. कालेज, आमगढ़ सम्बद्ध वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर (उ.प्र.)
- **मुंशी प्रेमचन्द के कथा साहित्य में मानवता का चिन्तन** **4-6**
  डॉ. मोहम्मद ताहिर, एसोसिएट प्रोफेसर उर्दू विभाग, शिबली नेशनल पी.जी. कालेज, आजमगढ़ (उ.प्र.)
- **अनुदानित एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों के विद्यार्थियों की आधुनिक सम्प्रेषण माध्यमों के प्रति जागरूकता का तुलनात्मक अध्ययन** **7-9**
  संदीप कुमार सिंह, शोध छात्र,शिक्षाशास्त्र, हण्डिया पी.जी. कालेज, हण्डिया, प्रयागराज
  डॉ. नीलम सिंह, एसोसिएट प्रोफेसर, शिक्षा संकाय, हण्डिया पी०जी० कालेज, हण्डिया, प्रयागराज
- **माध्यमिक स्तर के दृष्टिबाधित बालकों के समायोजन, अधिगम शैली एवं शैक्षिक निष्पत्ति का तुलनात्मक अध्ययन** **10-13**
  उपेन्द्र दूबे, शोधार्थी शिक्षक प्रशिक्षण विभाग, कुटीर पी.जी. कालेज, चक्के जौनपुर, (सम्बद्ध वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जोनपुर (उ.प्र.))
- **समस्तीपुर शहर की जनसंख्या तथा शहरी सम्पोषणीय विकास का प्रारूप : एक भौगोलिक अध्ययन** **14-21**
  डॉ. संजय कुमार, एसोसिएट प्रोफेसर स्नातकोत्तर भूगोल विभाग, महाराज कॉलेज, आरा, वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा
  कुमार शशि शंकर, शोध छात्र, भूगोल विभाग, वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा
- **मथुरा के आन्तरिका एवं अन्तर्राज्यी व्यापार : (शुंग युग से गुपत युग तक के विशेष संदर्भ में)** **22-25**
  डॉ. शशि कुमार मिश्र, असि. प्रो. प्राचीन इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, श्री गाँधी पी. जी. कॉलेज, मालटारी, आजमगढ़
- **वित्तपोषित एवं स्ववित्तपोषित शिक्षक-प्रशिक्षण संस्थानों के प्रशिक्षकों के एन.सी.टी.ई. कार्यक्रम के प्रति जागरूकता का अध्ययन** **26-29**
  डॉ. (श्रीमती) नीलिमा श्रीवास्तव, प्राचार्या, साकेत गर्ल्स पी.जी. कालेज, दहिलामऊ प्रतापगढ़
- **एकल महिलाओं की सामाजिक प्रस्थिति का समाजशास्त्रीय अध्ययन** **30-32**
  मीरा देवी, शोधार्थिनी, समाजशास्त्र, डॉ. बी.आर. अम्बेडकर समाज विज्ञान संस्थान, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झांसी
  डॉ. मुहम्मद नईम, सहायक आचार्य, समाज कार्य विभाग, डॉ. बी.आर. अम्बेडकर समाज विज्ञान संस्थान, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झांसी (उ.प.)
- **शिक्षक असन्तोषः एक समस्यात्मक समाजशास्त्रीय अध्ययन (स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों के विशेष संन्दर्भ में)** **33-43**
  डॉ. दिलीप कुमार, असिस्टेन्ट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, भानमती स्मारक पी.जी. कालेज अकबरपुर अम्बेडकरनगर।
- **भारतीय गांवों पर शहरीकरण का प्रभाव** **44-46**
  मित्र प्रकाश, (शोध छात्र), समाजशास्त्र विभाग, उदय प्रताप स्वायत्तशासी महाविद्यालय वाराणसी

- **प्राचीन भारत में पुलिस संस्था का उद्भव एवं विकास : एक ऐतिहासिक अध्ययन** **47-52**
  डॉ. अनुराग पालीवाल, असिस्टेंट प्रोफेसर, इतिहास-विभाग, आगरा कॉलेज, आगरा
- **मध्यवर्गाय एवं कस्बाई जीवन की बदलती स्थिति एवं अखिलेश की कहानियाँ** **53-57**
  दिनेश कुमार यादव, शोधार्थी, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर
- **राष्ट्रीय आंदोलन में छत्तीसगढ़ के मुस्लिम समाज का योगदान** **58-60**
  शाहिना खान एवं डॉ. शम्पा चौब, शासकीय दूधाधारी बजरंग महिला स्नाकात्तर (स्वशासी) महाविद्यालय, रायपुर (छ. ग.)
- **भारत में धर्मनिरपेक्षता की आलोचना : समीक्षात्मक अध्ययन** **61-65**
  राकेश कुमार यादव, पूर्व शोध छात्र, राजनीति विज्ञान विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज
- **प्राथमिक विद्यालयों के छात्रों में सांस्कृतिक मूल्यों के विकास में शिक्षा की भूमिका** **66-69**
  कौशल कुमार झा, (शोधार्थी), शिक्षा संकाय, ल.ना.मि. विश्वविद्यालय, दरभंगा
- **मध्यमरामचरितम् नाटक के आदर्श नायक राम का चरित्र : एक विवेचन** **70-73**
  सत्येन्द्र कुमार यादव, शोध-छात्र,संस्कृत विभाग, स्नातकोत्तर महाविद्यालय गाजीपुर
- **वर्तमान सदी की चुनौतियां और गांधी दर्शन की प्रासंगिकता** **74-76**
  डॉ. विभा सिंह, विभागाध्यक्ष श्री वासुदेव प्राथमिक शिक्षण प्रशिक्षण संस्थान गुतवन, जलालपुर, जौनपुर।
- **उन्नाव जिले में शस्य प्रतिरूप : एक भौगोलिक अध्ययन** **77-84**
  दीपा यादव, शोधार्थी-भूगोलविभाग, जीवाजीविश्वविद्यालय ग्वालियर (म.प्र)
  डॉ. आनन्दकर सिंह, सह-प्राध्यापक भूगोल विभाग, शास. एस. एल. पी. कॉलेज, मुरारग्वालियर (म.प्र)
- **अंतर -सामुदायिक वैवाहिक संबंधः एक समाजशास्त्रीय अध्ययन** **85-89**
  (सागर नगर के जैन समुदाय के विशेष संदर्भ में)
  नेहा जैन, शोधार्थी, समाज शास्त्र एवं समाज कार्य विभाग, डॉ हरि सिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)
  प्रो. दिवाकर शर्मा, (शोध निर्देशक), समाज शास्त्र एवं समाज कार्य विभाग, डॉ हरि सिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)
- **उच्च शिक्षा के संगीत शिक्षण की गुणवत्ता में संगीत शिक्षण का मूल्यांकन** **90-92**
  डॉ. शशि शुक्ला, एसो प्रोफेसर, सा.रा.म.महाविद्यालय, बरेली।
- **चीन की कुटिलता एवं भारत** **93-95**
  डॉ. विनोद बहादुर सिंह
- **इतिहास के चिंतनात्मक-दर्शन का अर्थ** **96-98**
  संत कुमार उपाध्याय, शोधार्थी, इतिहास विभाग, वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा (बिहार)
- **दलित महिलाओं की आर्थिक एवं सामाजिक संघर्ष बिहार के संदर्भ में** **99-104**
  (एक विश्लेषणात्मक अध्ययन)
  सुनैना कुमारी, शोधार्थी स्त्री अध्ययन विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोधगया।
  डॉ. जावेद अंजुम, शोध निर्देशक, प्राध्यापक, स्नात्तकोत्तर दर्शनशास्त्र विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोधगया।

- **जनसंख्या नीति एवं प्रजनन दर** **105-107**
  डॉ. संगीता कुमारी, असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, जे. डी. वीमेन्स कॉलेज, पटना।
- **किशोर न्याय (बालको की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम 2015 के अनुरुप गठित "बाल कल्याण समिति'' की भूमिका का एक अध्ययन, सिवनी जिला मध्यप्रदेश के विशेष संदर्भ में** **108-113**
  शोभाराम डेहरिया, सहायक प्राध्यापक एवं पूर्व विभागाध्यक्ष (समाज कार्य) एवं सदस्य बाल कल्याण समिति, जिला सिवनी मध्यप्रदेश शासन
- **नाबार्ड और अन्य संस्थाओं की कृषि के विकास सूक्ष्म वित्त प्रदान करने में महत्व** **114-117**
  शुभम सिंह, शोध छात्रा, टी. डी. पी. जी. कॉलेज जौनपुर उत्तर प्रदेश
- **जनपद औरैया (उत्तर प्रदेश) में सस्य-गहनता एवं सिंचाई - गहनता सहित उनकी सापेक्षता के स्थानिक वितरण-प्रतिरूप** **118-126**
  डॉ. पूनम मिश्रा, असिस्टेन्ट प्रोफेसर (भूगोल), ज्वाला देवी विद्या मन्दिर परास्नातक महाविद्यालय (छत्रपति शाहूजी महाराज विश्वविद्यालय), कानपुर (उत्तर प्रदेश) भारत।
- **बिहार में गरीबी निवारण का बदलता स्वरूप** **127-132**
  रूपेश कुमार, शोध छात्र (अर्थशास्त्र), बी.आर.ए.बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर

बी.एड. प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षण अभिवृत्ति एवं शैक्षिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन

अभिषेक तिवारी *
डॉ. अफजाल अहमद **

भूमिका :

भारत का शैक्षिक अतीत अत्यन्त गौरवशाली और उज्ज्वल था जब विश्व के अधिकांश देशों में शिक्षा की शुरूआत भी नहीं हुई थी तब भारत में एक सुसंगठित और विकसित शिक्षा प्रणाली के द्वारा शिक्षा प्रदान की जा रही थी। शिक्षा के इस गुरूतर भार का दायित्व आचार्यों, ऋषियों मुनियों एवं गुरुजनों पर आश्रित था। प्राचीन काल से ही समाज एवं राष्ट्र की आवश्यकताओं के अनुरूप नागरिकों के शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक गुणों के विकास का गुरुतर दायित्व शिक्षक का ही होता था। शिक्षक का दायित्व समाज के संरक्षण, गुणों के हस्तान्तरण के साथ–साथ समाज में सकारात्मक परिवर्तन लाना भी था। राष्ट्र की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर समानता, स्वायत्तता, भाईचारा और सामाजिक न्याय की भावना रखने वाले समुदाय का निर्माण करना भी अध्यापक का ही दायित्व होता था। इस गुरुतर दायित्व का निर्वाह वह अत्यन्त सहजता, स्वीकार्यता एवं शालीनता से करता था क्योंकि उसमें उच्च एवं सकारात्मक शिक्षण वृत्ति तथा वंश परम्परा से शिक्षण व्यवसाय से जुड़े होने के कारण पर्याप्त अनुभव और कौशल भी होता था।

शिक्षक का कार्य सदैव से ही अत्यन्त सम्मान एवं आदर्श गुणों का सूचक माना जाता रहा है। शिक्षक को सर्वगुण सम्पन्न एवं सभी समस्याओं का समाधानकर्ता माना जाता था। इसका कारण उसकी उच्च बौद्धिक एवं मानसिक योग्यता, आध्यात्मिक और नैतिक क्षमता तथा कार्य के प्रति समर्पण भाव को माना जाता था। शिक्षक के इन गुणों और उसके स्थान में धीरे–धीरे बदलाव आता गया और परिवर्तित परिस्थितियों में बढ़ रही सामाजिक एवं राष्ट्रीय जरूरतों के अनुरूप नागरिकों को तैयार करने हेतु अधिक शिक्षकों की आवश्यकता पड़ी। शिक्षक वृत्ति का दायरा बढ़ने से शिक्षक बनाये जाने लगे। इन शिक्षकों में अपेक्षित योग्यताओं और दक्षताओं के विकास के लिए उन्हें प्रशिक्षण प्रदान करने का कार्य प्रारम्भ हुआ जिसे सेवापूर्व या बी.एड्. प्रशिक्षण के नाम से जाना जाता है। इस प्रशिक्षण को प्राप्त करने हेतु शैक्षिक योग्यताएँ एवं पाठ्यक्रम निर्धारित किये गये हैं। इन योग्यताओं और प्रशिक्षणों के द्वारा विभिन्न परिस्थितियों में अपने दायित्वों का निर्वहन करने वाले, अपनी शिक्षण वृत्ति के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण रखने वाले शिक्षकों को तैयार किया जाता है। आज शिक्षक बनने के हेतु शिक्षक में मानसिक योग्यता, शिक्षण के प्रति सकारात्मक अभिवृत्ति का होना आवश्यक माना जाता है। शिक्षक प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे छात्राध्यापकों की शिक्षण अभिवृत्ति उनकी शैक्षिक उपलब्धि को किस सीमा तक प्रभावित करती है। इसी जिज्ञासा से प्रस्तुत विषय पर शोध प्रपत्र सम्पादित किया गया है।

शोध अध्ययन उद्देश्य :

1. बी0एड0 छात्राध्यापकों एवं छात्राध्यापिकाओं की शिक्षण अभिवृत्ति की तुलना करना।
2. बी0एड0 छात्राध्यापकों एवं छात्राध्यापिकाओं की शैक्षिक उपलब्धि की तुलना करना।

परिकल्पनाएँ :

1. बी0एड0 छात्राध्यापकों एवं छात्राध्यापिकाओं की शिक्षण अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
2. बी0एड0 छात्राध्यापकों एवं छात्राध्यापिकाओं की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

---

* शोधार्थी शिक्षक प्रशिक्षण विभाग, शिब्ली नेशनल पी. जी. कॉलेज, आजमगढ़

** एसोसिएट प्रोफेसर, शिक्षक प्रशिक्षण विभाग, शिब्ली नेशनल पी. जी. कालेज, आमगढ़ सम्बद्ध वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर (उ.प्र.)

शोध विधि :

प्रस्तुत शोध प्रपत्र में वर्णानात्मक अनुसंधान की सर्वेक्षण प्रविधि का प्रयोग किया गया है। जनसंख्या के रूप में प्रयागराज जनपद के बी.0एड.0 कालेजों को चयनित किया गया है। न्यादर्श के रूप में 25–25 कुल 50 छात्राध्यापकों का चयन यादृच्छिक न्यादर्श प्रतिचयन विधि से किया गया है। बी0एड0 छात्राध्यापकों की शिक्षण अभिवृत्ति का मापन करने हेतु डॉ0 एस0पी0 अहलुवालिया द्वारा निर्मित शिक्षण अभिवृत्ति मापनी तथा शैक्षिक उपलब्धि हेतु उनके प्रथम वर्ष के प्राप्तांकों को लिया गया है। प्रदत्तों की गणना हेतु मध्यमान, मानक विचलन एवं टी अनुपात परीक्षण का प्रयोग किया गया है।

सारणी–1

बी0एड0 छात्राध्यापकों एवं छात्राध्यापिकाओं की शिक्षण अभिवृत्ति की तुलना

Variable	N	M	S.D.	D	σ D	t-value	सार्थकता
बी0एड0 छात्राध्यापक	25	53.84	8.38	4.09	2.34	1.75	0.05 स्तर पर असार्थक
बी0एड0 छात्राध्यापिका	25	57.93	8.19				

विश्लेषण :

उक्त सारणी से स्पष्ट है कि बी0एड0 छात्राध्यापकों की शिक्षण अभिवृत्ति सम्बन्धी प्राप्ताँकों का मध्यमान 53.84 तथा मानक विचलन 8.38 है जबकि बी0एड0 छात्राध्यापिकाओं के शिक्षण अभिवृत्ति सम्बन्धी प्राप्ताँकों का मध्यमान 57.93 तथा मानक विचलन 8.19 है। परिगणित टी–अनुपात 1.75 है जो स्वतन्त्रयांश (df) 48 के लिये सार्थकता स्तर 0.05 पर टी–सारणीमान 2.01 से कम है, जो असार्थक है। अतः शून्य परिकल्पना बी0एड0 छात्राध्यापकों एवं छात्राध्यापिकाओं की शिक्षण अभिवृत्ति कोई सार्थक अन्तर नहीं है को स्वीकृत कर दिया गया है अर्थात बी0एड0 छात्राध्यापकों एवं छात्राध्यापिकाओं की शिक्षण अभिवृत्ति समान है। बी0एड0 छात्राध्यापकों एवं छात्राध्यापिकाओं की शिक्षण अभिवृत्ति के समान होने का सम्भावित कारण उनको प्राप्त होने वाले प्रशिक्षण में समानता, महाविद्यालयी वातावरण में समानता, प्रशिक्षकों की शैक्षिक योग्यता एवं उनकी कार्य दशाओं में समानता तथा उनके परिवेशीय परिस्थितियों में समानता आदि हो सकते हैं।

सारणी संख्या–2

बी0एड0 छात्राध्यापकों एवं छात्राध्यापिकाओं की शैक्षिक उपलब्धि की तुलना

चर	N	M	S.D.	D	σD	t	सार्थकता
बी0एड0 छात्राध्यापक	25	361.38	38.52	10.92	10.52	1.04	0.05 स्तर पर असार्थक
बी0एड0 छात्राध्यापिका	25	372.30	35.82				

बी0एड0 छात्राध्यापकों की शैक्षिक उपलब्धि सम्बन्धी प्राप्तांकों का मध्यमान 361.38 तथा मानक विचलन 38.52 है। जबकि बी0एड0 छात्राध्यापिकाओं की शैक्षिक उपलब्धि सम्बन्धी प्राप्तांकों का मध्यमान 372.30 तथा मानक विचलन 35.82 है। परिगणित टी अनुपात 1.04 है जो स्वतंत्रयांश 48 के लिये 0.5 सार्थकता स्तर पर टी सारणी मान 2.01 से कम है जो असार्थक है। अतः शून्य परिकल्पना बी0एड0 छात्राध्यापकों एवं छात्राध्यापिकाओं की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं है, को स्वीकृत कर लिया गया। अर्थात् बी0एड0 छात्राध्यापकों एवं छात्राध्यापिकाओं की शैक्षिक उपलब्धि समान है। इसका सम्भावित कारण बी0एड0 छात्राध्यापकों एवं छात्राध्यापिकाओं के मानसिक स्तर में समानता, उनके महाविद्यालयी परिवेश में समानता, उनको प्राप्त होने वाले प्रशिक्षण में समानता, प्रशिक्षकों द्वारा सिखाये जाने वाले ज्ञान एवं कौशल में समानता आदि हो सकते हैं।

निष्कर्ष :

1. बी0एड0 छात्राध्यापकों एवं छात्राध्यापिकाओं की शिक्षण अभिवृत्ति सार्थक अन्तर नहीं प्राप्त हुआ अर्थात बी0एड0 छात्राध्यापकों एवं छात्राध्यापिकाओं की शिक्षण अभिवृत्ति समान है।
2. बी0एड0 छात्राध्यापकों एवं छात्राध्यापिकाओं की शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक अन्तर नहीं प्राप्त हुआ अर्थात् बी0एड0 छात्राध्यापकों एवं छात्राध्यापिकाओं की शैक्षिक उपलब्धि समान है।

सन्दर्भ :

1. एस0पी0 गुप्ता (2008) : उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, प्रयागराज.
2. अरूण कुमार सिंह (2010) : उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान कार्य विधि एवं पद्धतियाँ, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना.
3. रमन बिहारी लाल (2010) : शिक्षा की दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय सिद्धान्त. विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा.
4. मालती सारस्वत एवं एस0एल0 गौतम (2008): भारत में शैक्षिक प्रणाली का विकास. आलोक प्रकाशन, लखनऊ.
5. जे0सी0 अग्रवाल (2009): उदयीमान भारतीय समाज में शिक्षा. अग्रवाल पब्लिकेशन, लखनऊ
6. राजीव मालवीय (2012) : उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षा. शारदा पुस्तक भवन, प्रयागराज.
7. के0पी0 पाण्डेय (2004) : शैक्षिक अनुसंधान, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी.

***

मुंशी प्रेमचन्द के कथा साहित्य में मानवता का चिन्तन

डॉ. मोहम्मद ताहिर *

भूमिका :

राष्ट्रीयता एवं मानवता के चिन्तन में अनेक कवियों एवं साहित्यकारों ने अपने साहित्यिक सृजन से विशेष योगदान दिया है। इन रचनाकारों ने विभिन्न सामाजिक सरोकारों से जुड़े मुद्दे को अपनी रचनाओं द्वारा उजागर कर समाज में चेतना एवं नवजागरण लाने का सतत् प्रयास किया। इन रचनाकारों ने मुंशी प्रेमचन्द्र का नाम अग्रणी है वे गंगा जमुनी तहजीब के पोषक एवं सभी कौमों के समानता के हिमायती थे। उन्होंने अपनी कलम से समाज को जोड़ने के साथ–साथ समाज की विभिन्न समस्याओं को प्रमुखता से उठाया। मुंशी प्रेमचन्द्र का हिन्दी तथा साहित्य में मानवतावादी चिन्तन विकसित करने में महत्वपूर्ण योगदान है। उन्होंने कथा साहित्य को मजबूत आधार प्रदान किया उनकी सर्जनात्मकता यथार्थपरक एवं समाज को सही आइना दिखाती है। डॉ0 जैनेन्द्र ने प्रेमचन्द्र की सृजनात्मकता का उल्लेख करते हुए कहा है कि प्रेमचन्द्र जब सौन्दर्य की भावना को सजग करने की बात करते हैं तब उनका मतलब दिमागी ऐयाशी और रीतिकालीन नायिक भेद से नहीं होता वे इस तरह की सौन्दर्यात्मकता की निन्दा करते हैं। उनके साहित्यों में सौन्दर्य से आशय जनसाधारण के हृदय में उमड़ने वाले भावों से होता है जिसके द्वारा मनुष्य पराधीनता के घिनौनेपन को पहचान लेता है और उसे दूर करने के लिए उनसे लड़ता है। इसमें मानवीय अन्तर्द्वन्द्वों एवं समाज में फैले विभेदों को दूर करने की छटपटाहट दिखती है।

प्रेमचन्द्र की साहित्यिक सृजन चेतना में भारतीय समाज का वह वर्ग प्रमुखता से है जो दिन–रात विभिन्न समस्याओं से लड़ता है वह भुखमरी, लाचारी, गरीबी, शोषण, अत्याचार एवं बेगार जैसे अनेक समस्याओं से संघर्ष करता है वह दिन–रात भूख से लड़ता है, नंगा रहकर दूसरों को आराम देता है, दिन–रात कमर तोड़ मेहनत कर सेठ–साहूकारों की तिजोरियाँ भारत है और खुद गरीबी और मुफलिसी से जीवन बिताता है। प्रेमचन्द्र की पूरी हमदर्दी किसी उपेक्षित वर्ग के साथ है। उन्होंने अपने साहित्य में पसीने से तर–बतर चेहरे और घुट–घुट कर जी रहे लोगों जिनके पेट भूख से पसलियों में घुस गये हैं और आँखें पीली पड़ गयी हैं उनके लिए मुक्ति द्वारा की कामना लिए हुए वर्णन किया है। उनकी दृष्टि में साहित्य सौन्दर्य के लिए नहीं बल्कि जीवन यथार्थता के लिए है। डॉ0 इन्द्रनाथ मदान के अनुसार मुंशी प्रेमचन्द्र ने केवल उन फूलों से प्यार किया जो फल लाते हैं और उन बादलों से प्यार किया जो पानी बरसाते हैं वे बिलासी प्रेम को नहीं मानते, उन्हें सौन्दर्य रंक की झोपड़ी में दिखता है महलों में नहीं।

मुंशी प्रेमचन्द्र ने अपने समकालीन सामाजिक व्यवस्था का यथार्थ चित्रण अपने साहित्यों में किया है जिसमें जीवन की सच्चाई है तथा समाज के गरीबों, शोषितों, वंचितों तथा अल्पसंख्यकों के संघर्षो और चुनौतियों का वर्णन है। उनके साहित्य में जहाँ विदेशी सत्ता से मुक्ति के लिए वर्णन है वहीं सेठ–साहूकारों एवं जमींदारों के शोषण से त्रस्त आम जनमानस की मुक्ति की छटपटाहट भी है। उन्होंने समाज की रूग्ण परम्पराओं, रूढ़ियों, अन्धविश्वासों आदि से मुक्ति के लिए सुधारपरक आन्दोलनों को भी अपने साहित्य में स्थान देकर यथार्थ चित्रण को महत्व दिया। डॉ0 शिवकुमार मिश्र ने उनके कथा साहित्य में मानवतावादी चिन्तन का उल्लेख करते हुए लिखा कि भोगे हुए यथार्थ के साथ ही देखे गये यथार्थ में भी उनकी कृतियाँ भरी पूरी हैं। प्रेमचन्द्र बहिर्मुखी कलाकार थे कमरे के दरवाजे बन्द कर उसके भीतर घुटना और उस परिवेश को संसार मानकर यथार्थ के नाम पर उसे अपनी कृतियों में उतारना न तो उनकी रूचि के अनुकूल थी और न ही उनके बूते की बात थी।

---

* एसोसिएट प्रोफेसर उर्दू विभाग, शिबली नेशनल पी.जी. कालेज, आजमगढ़ (उ.प्र.)

प्रेमचन्द्र ने अपने समकालीन एवं पूर्ववर्ती साहित्यकारों की विलासितापूर्ण, मनोरंजन तथा काल्पनिक चिन्तनों के स्थान पर यथार्थता को महत्व प्रदान किया वे विभिन्न तिलस्मी एवं जासूसी कहानियों के स्थान पर समाज को मनोरंजन की जगह उसकी सच्ची तस्वीर दिखाने को ज्यादा जरूरी मानते हुए प्रेम, रोमांस और कौतुहल भरे साहित्य की जगह यथार्थ के धरातल पर जीवन की सच्चाई एवं विभिन्न अन्तर्द्वन्दों को उजागर करते हुए जीवन का सही आईना समाज के सामने उपस्थित किया। प्रेमचन्द्र का साहित्यिक सृजन बहुआयामी एवं जटिल है उनके विस्तृत एवं भावी राष्ट्र की सम्पूर्ण प्रगति एवं समाज के समता, न्याय एवं भाईचारे पर पुनर्स्थापना का सपना लिये हुए है। मुंशी प्रेमचन्द्र ने साहित्य के स्वरूप को व्ख्यायित करते हुए लिखा कि साहित्य में हमारी रसिकता को तृप्त करने वाली शक्ति होनी चाहिए ऐसी रचनाओं से कौमें बनती हैं वह साहित्य जो हमें विलासिता के नशे में डुबा दे, जो हमें वैराग्य, पस्त हिम्मती एवं निराशा की ओर ले जाये, जिसके नजदीक संसार दुःख का घर है और उससे निकल भागने में हमारा कल्याण है जो केवल लालच और भावुकता से डूबी हुई कथाएँ लिखकर कामुकता को भड़काये वह निर्जीव है। सजीव साहित्य तो वह है जो प्रेम से युक्त हो तथा उस प्रेम में सबको एक करने की शक्ति हो और उसका सर्वसम्मान व सर्वमान्यता हो इस प्रकार प्रेमचन्द्र ने अपने कथा साहित्य में समाज का एक व्यापक दिग्दर्शन देकर चले हैं वे समाज के दुःख दर्द एवं इसकी गुत्थियाँ सुलझाने के लिए अपनी लेखनी को हथियार बनाया है उनके विभिन्न कहानियों एवं उपन्यासों में उनके इन उद्देश्यों को पूरा करने की अभिलाषा झलकती है। उन्होंने अपने कहानी और उपन्यासों से पहले उसकी उद्देश्यपरक परिभाषा दी है जिसमें उनकी साहित्यिक उत्कृष्टता झलकती है। कहानी का उद्देश्य निर्धारित करते हुए प्रेमचन्द्र कहते हैं कि कहानी है जिसमें जीवन के किसी एक अंग या एक मनोभाव को प्रदर्शित करना लेखक का उद्देश्य होता है उसकी कहानी के पात्र, उसकी रचना धर्मिता, उसका कथा विन्यास, उसके इन्हीं भावों को पुष्ट करते हैं। उपन्यास के सन्दर्भ में भी प्रेमचन्द्र का कहना है कि उपन्यास भावी जीवन चरित्र है जो समाज के छोटे या बड़े आदमी की पहचान उसके द्वारा विभिन्न परिस्थितियों में लिए गये फैसलों एवं किए गये कार्यो पर निर्भर करता है। इसमें कल्पनाशीलता के आधार पर सच्चाई को छिपाते हुए झूठे मतों का पोषण न करके सच्ची और यथार्थपरक बातों को समाज के सामने उपस्थित करना प्रमुख होता है।

मुंशी प्रेमचन्द्र का साहित्यिक चिन्तन समाज में समतामूलक व्यवस्था को स्थापित करने को लेकर है। उन्होंने मानवता के पोषण हेतु समाज में नर–नारी समता को अपने कथा साहित्यों में प्रमुखता से उठाया है। प्रेमचन्द्र का मानना था कि आर्थिक और राजनैतिक अधिकारों से वंचित नारी समाज की उपेक्षा करके सामाजिक समता एवं एकीकरण का भाव विकसित नहीं किया जा सकता। उन्होंने अपने उपन्यास गबन में रतन के माध्यम से हिन्दू परिवारों में नारी की असहाय स्थिति का प्रश्न उठाया। देश राजनैतिक मुक्ति के संग्राम में नारी की उभरती राजनैतिक चेतना और सक्रियता को उन्होंने प्रमुखता और आशान्वित रूप में अंकित किया है। उन्होंने रंगभूमि में सोफिया, कर्मभूमि में सुखदा और शकीना और उसकी बूढ़ी माँ पठानिन जनान्दोलन का संचालन और नेतृत्व करते हुए प्रदर्शित किया। यही नहीं सामाजिक क्षेत्र में नारियों पर होने वाले जुल्मोशितम के विरूद्ध भी उन्होंने आवाज बुलन्द की है। प्रेमचन्द्र की कहानियों में स्त्रियाँ आन्दोलनों एवं जुलूसों में हिस्सा लेती हैं, समर यात्रा कहानी की नारी पात्र मृदुला अपने पति के साथ जुलूस में भाग लेती है तथा उसके बलिदान पर गर्व करती है। उनके निर्मला में बेमेल विवाह पर करारा आघात किया है, नैराश्य लीला और नरक का मार्ग कहानियों में समाज में विधवाओं की करूण दशा और इसके दुष्परिणाम के रूप में होने वाले चारित्रक पतन पर समाज को सावधान किया गया है। उनके उपन्यास गोदान में डॉ0 मालती अविवाहित रहकर भी समाज में सम्मान प्राप्त करती हैं इससे यह ज्ञात होता है कि समाज में नारियों के सम्मान में उनका आर्थिक पक्ष मजबूत होना भी महत्वपूर्ण है। प्रेमचन्द्र ने समाज में नारी गौरव एवं उसके सम्मान के लिए उसे आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक क्षेत्रों में प्रमुखता से सहभाग करने को महत्व दिया गया है। समाज में वेश्यावृत्ति की स्थिति को उन्होंने महिलाओं के लिए अभिशाप की भांति चित्रित किया है। उन्होंने अपने साहित्य सेवा सदन की पात्र सुमन के माध्यम से समाज की इस कुत्सित प्रथा को

कुशलतापूर्वक चित्रित किया है इसके साथ ही मुंशी प्रेमचन्द्र की विभिन्न कहानियों जैसे पूस की रात, सुजान भगत, नशा, पंच परमेश्वर, नमक का दरोगा, ईदगाह, सद्‌गति, बूढ़ी काकी, ठाकुर का कुआँ और सवा सेर गेहूँ आदि कहानियों के माध्यम से सामाजिक चेतना के विभिन्न आयामों को उद्‌घाटित किया है। इन कहानियों में समाज की अनेक बुराईयों जैसे जमींदारी प्रथा, सामाजिक भेदभाव, नशाखोरी, भ्रष्टाचार, ऊँच–नीच, छुआछूत एवं जातिपांति आदि भेदों को उजागिर किया गया है साथ ही समाज में प्रेम, भाईचारे, मानवता एवं पारिवारिक रिश्तों के मजबूत पक्ष को भी प्रदर्शित किया गया है। इस रूप में प्रेमचन्द्र की कहानियों का सौन्दर्यशास्त्र सामाजिक चेतना के विभिन्न आयामों को सामाहित किये हुए है।

मुंशी प्रेमचन्द्र साहित्यिक सृजन हिन्दी और उर्दू साहित्य के भण्डार में श्रीवृद्धि करने में अत्यन्त महत्वपूर्ण है वे हिन्दी लेखन के प्रति अत्यन्त जागरूक एवं इसे प्रमुख हथियार के रूप में मानते हैं। उन्होंने न केवल स्वयं बल्कि अन्य साहित्यकारों को भी समाज के यथार्थ बोध को सामने लाने हेतु प्रोत्साहित करते हैं। उन्होंने अपने इसी सामाजिक चेतना एवं नवजागरण के लिए हंस एवं माधुरी जैसी पत्रिकाओं का सम्पादन किया तथा समकालीन लेखकों को पाठकों के बीच लोकप्रिय बनाने के लिए उनकी अच्छी रचनाओं एवं चिन्तनों को पाठकों तक पहुँचाने का भरसक प्रयास किया। वे अपने सहकर्मियों को समाज की दशा एवं दिशा को बदलने, समाज में एकता एवं भाईचारा लाने, महिलाओं, गरीबों, मुफलिशों एवं पीड़ितों की आवाज बनने एवं उन्हें समाज में हक दिलाने के लिए अपनी लेखनी को मुखर बनाने हेतु फटकार भी लगाते हैं। उन्होंने कथाकार सुदर्शन को सुझाव देते हुए कहा कि मैं तो समझता था आप फारग–उल–बाग होकर अदब की ज्यादा खिदमत कर सकेंगे मगर मेरा ख्याल गलत निकला। अब महीनों गुजर जाते हैं और आपका कोई किस्सा किसी अखबार में नजर नहीं आता। चार नहीं दो सही, दो नहीं एक सही लेकिन कुछ न कुछ तो हर महीने लिखते रहिए इससे तो वह तंगदस्ती ही अच्छी थी जो आपसे कुछ न कुछ लिखवा लेती थी।

इस प्रकार मुंशी प्रेमचन्द्र का साहित्यिक चिन्तन व दृष्टिकोण बहुआयामी, व्यापक एवं यथार्थबोध की ओर उन्मुख था उन्होंने जीवन की सच्चाई को बहुत सलीखे से व्यक्त किया। उनकी लेखनी में समाज का कड़वा सच उजागर करने की अद्‌भुद क्षमता थी। उन्होंने तत्कालीन समाज के विभिन्न पक्षों को पाठकों के समक्ष उपस्थित किया तथा तत्कालीन समाज का यथार्थ स्वरूप लोगों के सामने रखा। वे व्यक्ति से लेकर राष्ट्र तक की समस्याओं से वाकिफ थे जीवन भर वे राष्ट्रहित एवं मानव कल्याण के लिए संकल्पबद्ध रहे वे निष्पक्ष भाव से साहित्यिक सृजन करते रहे तथा अपनी निष्पक्ष लेखनी से समाज को गति एवं दिशा प्रदान करने का कार्य करते रहे। उनका कथा साहित्य मानवता के विकास के लिए एक मजबूत आधार स्तम्भ की भांति है। इसमें जीवन के विविध पक्षों, उसकी यथार्थताओं, जीवन के यथार्थ राग, यथार्थ सौन्दर्य, यथार्थबोध एवं यथार्थ चिन्तन का वर्णन उनके कथा साहित्यों एवं उपन्यासों का वर्ण्य विषय रहा है। अपनी इसी विशेषता के कारण मुंशी प्रेमचन्द्र को तत्कालीन हिन्दी एवं उर्दू साहित्य में बहुत अदम एवं सम्मान के साथ याद किया जाता है।

सन्दर्भ :

1. डॉ0 शिवकुमार मिश्र, साहित्य और सामाजिक सन्दर्भ, पृष्ठ संख्या 185–188.
2. डॉ0 जैनेन्द्र कुमार, प्रेमचन्द्र : एक कृति व्यक्तित्व, पृष्ठ संख्या 93–96.
3. डॉ0 इन्द्रनाथ मदान, प्रेमचन्द्र : चिन्तन और कला, पृष्ठ संख्या 23.
4. डॉ0 रामविलास शर्मा, प्रेमचन्द्र और उनका युग, पृष्ठ संख्या 125.
5. प्रेमचन्द्र : साहित्य का उद्‌देश्य, पृष्ठ संख्या 13–14.
6. प्रेमचन्द्र : साहित्य का उद्‌देश्य, पृष्ठ सख्या 199.
7. प्रेमचन्द्र : कुछ विचार, पृष्ठ संख्या 29.
8. प्रेमचन्द्र : कुछ विचार, पृष्ठ संख्या 63.

***

अनुदानित एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों के विद्यार्थियों की आधुनिक सम्प्रेषण माध्यमों के प्रति जागरूकता का तुलनात्मक अध्ययन

संदीप कुमार सिंह *
डॉ. नीलम सिंह **

भूमिका :

भारत वर्ष की स्वाधीनता के पश्चात विभिन्न शिक्षा आयोगों एवं नीतियों के माध्यम से देश की शैक्षिक व्यवस्था को उपयोगी एवं प्रभावशाली बनाने का प्रयास किया गया। किन्तु देश में विभिन्न वर्गो के लोगों की सामाजिक–आर्थिक विषमता के कारण देश की शैक्षिक व्यवस्था का समुचित विकास नही हो पाया। किन्तु वर्तमान में विभिन्न संस्कृतियों एवं आधुनिक संसाधनों के प्रयोग से शिक्षा को उपयोगी एवं ज्ञानपरक बनाने का प्रयास किया जा रहा है। शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर छात्रों को नवीनतम् तकनीकियों एवं आधुनिक खोजों को बताकर शिक्षा के प्रति उनकी जागरूकता एवं उनकी शैक्षिक उपलब्धि को बढ़ाने का प्रयास किया जा रहा है। आधुनिक सम्प्रेक्षण माध्यमों के द्वाराविद्यार्थियों की सोच, उनकी कार्य प्रणाली एवं उनकीजागरूकताव चिन्तन को नवीन परिस्थितियों के अनुरूप विकसित करने का प्रयास किया जा रहा है। क्योंकि आधुनिक सम्प्रेक्षण माध्यमों का सकारात्मक प्रभाव विद्यार्थियों के जागरूकता एवं नवीन ज्ञान अर्जन पर पड़ता है।अतः आधुनिक सम्प्रेक्षण माध्यमों के द्वारा विद्यार्थियों की जागरूकता में वृद्धि किया जाना सम्भव है।

आधुनिकीकरण एक प्रक्रिया है, जिसके मूल में वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिक प्रगति निहित होती है। सामाजिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र यथा–खान–पान, वेश–भूषा, बोल–चाल, विवाह के तरीके, भवन निर्माण, पठन–पाठन आदि में इसे देखा जा सकता है। कुछ लेखकों का मत है कि आधुनिकीकरण, पश्चिमीकरण और युरोपीकरण का पर्याय है, किन्तु यह आधुनिकीकरण से सम्बद्ध नहीं है। जब किसी समाज का आधुनिकीकरण होता है तो उसमें प्रौद्योगिकी, विवेकशीलता, धर्मनिरपेक्षता तथा प्रजातांत्रिक नेतृत्व जैसी विशिष्टताएं परिलक्षित होती है। यह समाज विभिन्न पहलुओं में होने वाला वह परिवर्तन है जो आवश्यक रूप से लाभकारी होता है। दूसरे शब्दों में परिवर्तन यदि अच्छाई के लिए है तो इसे आधुनिकता के रूप में व्यक्त किया जायेगा। मनोवैज्ञानिक प्राचीनता तथा नवीनता के मध्य होने वाले समायोजन या संतुलन को आधुनिकता कहा जाता है। स्नातक स्तर के अनुदानित एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों के विद्यार्थियों की आधुनिक सम्प्रेषण माध्यमों के प्रति जागरूकता का मापन प्रस्तुत शोध प्रपत्र में किया गया है।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. अनुदानित एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों के छात्रों के आधुनिक सम्प्रेषण माध्यमों के प्रति जागरूकता की तुलना करना।
2. अनुदानित एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों के छात्राओं के आधुनिक सम्प्रेषण माध्यमों के प्रति जागरूकता की तुलना करना।

परिकल्पनाएं :

1. अनुदानित एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों के छात्रों के आधुनिक सम्प्रेषण माध्यमों के प्रति जागरूकता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
2. अनुदानित एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों के छात्राओं के आधुनिक सम्प्रेषण माध्यमों के प्रति जागरूकता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

---

* शोध छात्र,शिक्षाशास्त्र, हण्डिया पी.जी. कालेज, हण्डिया, प्रयागराज
** एसोसिएट प्रोफेसर, शिक्षा संकाय, हण्डिया पी०जी० कालेज, हण्डिया, प्रयागराज

अध्ययन विधि :

प्रस्तुत शोध कार्य वर्णनात्मक अनुंसधान की सर्वेक्षण प्रवधि पर आधारित है। जिसमेंप्रो0 राजेन्द्र सिंह (रज्जू भय्या) विश्वविद्यालय, प्रयागराज से सम्बद्ध अनुदानित एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों को समष्टि के रूप में लिया गया है। न्यादर्श के रूप में 50 छात्रों एवं 50 छात्राओं का चयन यादृच्छिक न्यादर्श प्रतिचयन विधि से किया गया है। शोध उपकरण के रूप में स्वनिर्मित आधुनिक सम्प्रेषण माध्यमों के प्रति जागरूकता मापनी का प्रयोग किया गया है। संकलित प्रदत्तों का विश्लेषण हेतु माध्य, मानक विचलन एवं टी–अनुपात परीक्षण का प्रयोग किया गया है।

सारणी–1

अनुदानित एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों के छात्रों की आधुनिक सम्प्रेषण माध्यमों के प्रति जागरूकता की तुलना

Variable	N	M	S.D.	D	σ D	t-value	सार्थकता
अनु0महाविद्यालय के छात्र	25	130.98	7.81	6.46	2.20	2.94	0.01 स्तर पर सार्थक
स्ववित्तपोषित महाविद्यालय के छात्र	25	124.52	7.77				

विश्लेषण एवं व्याख्या :

अनुदानित महाविद्यालयों के छात्रो की आधुनिक सम्पप्रेषण माध्यमों के प्रति जागरूकता के प्राप्ताँकों के माध्य 130.98 व प्रमाणिक विचलन 7.81 है तथा स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों के छात्रों के आधुनिक सम्प्रेषण माध्यमों के प्रति जागरूकता से प्राप्ताँकों का माध्य 124.52 व प्रमाणिक विचलन 7.77 है।प्राप्तटी–अनुपात 2.94 है जो df48हेतु सार्थकता स्तर .01 पर टी0मान 2.68 से अधिक है, जो सार्थक है। अतः शून्य परिकल्पना अनुदानित एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों के छात्रों की आधुनिक सम्प्रेषण माध्यम के प्रति जागरूकता में सार्थक अन्तर नहीं है को अस्वीकृत कर दिया गया। चूंकि अनुदानित महाविद्यालय के छात्रों के आधुनिक सम्प्रेषण माध्यमों के प्रति जागरूकता के प्राप्ताकों का माध्य स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों के छात्रों के प्राप्ताकों से उच्च है। अतः अनुदानित महाविद्यालय के छात्रों की आधुनिक सम्प्रेषण माध्यम के प्रति जागरूकता स्ववित्तपोषित महाविद्यालय के छात्रों से उच्च है। इसका सम्भावित कारण अनुदानित माहविद्यालय का परिवेश, विद्यार्थियों के इन माध्यमों के अनुप्रयोग के लिए महाविद्यालय में सुविधाओं की उपलब्धता, प्राध्यापकों द्वारा इनके प्रति सिखाया जाने वाला ज्ञान, छात्रों के स्थानीय परिवेश आदि हो सकते हैं।

सारणी–2

अनुदानित एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों के छात्राओं की आधुनिक सम्प्रेषण माध्यमों के प्रति जागरूकता की तुलना

Variable	N	M	S.D.	D	σ D	t-value	सार्थकता
अनु. महाविद्यालय की छात्रा	25	131.01	9.21	9.45	2.59	3.65	0.01 स्तर पर सार्थक
स्ववित्तपोषित महाविद्यालय की छात्रा	200	121.56	9.20				

विश्लेषण एवं व्याख्या :

अनुदानित महाविद्यालयों की छात्राओं की आधुनिक सम्पप्रेषण माध्यमों के प्रति जागरूकता के प्राप्ताँकों के माध्य 131.01 व प्रमाणिक विचलन 9.21 है तथा स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों के छात्राओं की आधुनिक सम्प्रेषण माध्यमों के प्रति जागरूकता से प्राप्ताँकों का माध्य 121.56 व प्रमाणिक विचलन 9.20 है।प्राप्तटी0–अनुपात 3.65 है जो df48हेतु सार्थकता स्तर .01 पर टी–मान 2.59 से अधिक है, जो सार्थक है। अतः शून्य परिकल्पना अनुदानित एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों की छात्राओं की आधुनिक

सम्प्रेषण माध्यम के प्रति जागरूकता में सार्थक अन्तर नहीं है को अस्वीकृत कर दिया गया। चूंकि अनुदानित महाविद्यालय की छात्राओं के आधुनिक सम्प्रेषण माध्यमों के प्रति जागरूकता के प्राप्ताकों का माध्य स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों की छात्राओं के प्राप्ताकों से उच्च है। अतः अनुदानित महाविद्यालय की छात्राओं की आधुनिक सम्प्रेषण माध्यम के प्रति जागरूकता स्ववित्तपोषित महाविद्यालय की छात्राओं से उच्च है। इसका सम्भावित कारण अनुदानित माहविद्यालय का परिवेश, विद्यार्थियों के इन माध्यमों के अनुप्रयोग के लिए महाविद्यालय में सुविधाओं की उपलब्धता, प्राध्यापकों द्वारा इनके प्रति सिखाया जाने वाला ज्ञान, छात्राओं के स्थानीय परिवेश एवं उनका मानसिक स्तर आदि हो सकते हैं।

सन्दर्भ :

1. हेमन्त कुमार गोयल : कम्प्यूटर शिक्षा, आर लाल बुक डिपों, मेरठ, 2014
2. अहिल्या रानी : कम्प्यूटर, लूसेन्ट पब्लिकेशन, पटना, 2012
3. पारस नाथ राय : अनुसंधान परिचय, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा–3, 2002,
4. प्रो0 अरूण कुमार सिंह : उच्चतर मनोवैज्ञानिक प्रयोग एवं परीक्षण पटना, भारती भवन पब्लिकेशन, 2008
5. रामपाल सिंह एवं ओ0पी0 शर्मा : शैक्षिक अनुसंधान एवं सांख्यिकी, आगरा, अग्रवाल पब्लिकेशन, 2008
6. एच0के0 कपिल : सांख्यिकीय के मूल तत्व, आगरा, विनोद पुस्तक मन्दिर, 2007
7. डी0एन0 सनसनवाल : शैक्षिक तकनीकी एवं प्रबंध, वसुन्धरा प्रकाशन, खीरी लखीमपुर 2004

***

माध्यमिक स्तर के दृष्टिबाधित बालकों के समायोजन, अधिगम शैली एवं शैक्षिक निष्पत्ति का तुलनात्मक अध्ययन

उपेन्द्र दूबे *

भूमिका :

शिक्षा व्यक्ति के सर्वांगीण विकास का सर्वोत्तम माध्यम है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली बाल केन्द्रित मानी जाती है। बालक के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, नैतिक एवं संवेगात्मक गुणों का विकस शिक्षा का प्रमुख लक्ष्य माना जाता है। शिक्षक तथा शैक्षिक पाठ्यक्रम सम्बन्धी सभी गतिविधियाँ विद्यार्थियों को ध्यान में रखकर निर्मित की जाती है। शिक्षा के लिए गठित विभिन्न आयोगों एवं समितियों ने शैक्षिक प्रणाली को बाल केन्द्रित बनाने का सुझाव दिया। इसके साथ ही बालकों में तर्क, चिन्तन, निर्णय एवं समस्या समाधान जैसी उच्च स्तरीय मानसिक दक्षताओं का विकास किया जाना शिक्षा का प्रमुख लक्ष्य माना जाता है। शिक्षा के माध्यम से बालक में एक ऐसी दक्षता का निर्माण करने की अपेक्षा की जाती है जो राष्ट्र के नव निर्माण में सहायक हो। इसीलिए कोठारी आयोग (1964–66) ने अपनी रिपोर्ट में कहा कि भारत के भाग्य का निर्माण इस समय उसकी कक्षाओं में हो रहा है। हमारे स्कूल और कालेज से निकलने वाले विद्यार्थियों की योग्यता और संख्या पर ही राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के इस महत्वपूर्ण कार्य की सफलता निर्भर करेगी जिसका प्रमुख लक्ष्य हमारे रहन–सहन का स्तर ऊँचा उठाना है।

शिक्षा को कला एवं विज्ञान दोनो का समन्वित रूप माना जाता है। शिक्षा द्वारा न केवल व्यवस्थित ज्ञान की प्राप्ति होती है बल्कि जीवन के प्रति सकारात्मक चिन्तन का विकास भी होता है। शिक्षा बालक की मनोवृत्ति को भी बदल देती है। शिक्षा का एक विशिष्ट महत्व एवं उपयोगिता होती है। यह बालक के शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक गुणों के विकास के साथ–साथ आगे बढ़ती है और प्रत्येक स्तर पर इसके विशिष्ट लक्ष्य होते है। शिक्षा का प्राथमिक स्तर जहाँ बालक के ज्ञान को आधार प्रदान करता है वहीं शिक्षा के माध्यमिक स्तर पर उसके अवबोध एवं विभिन्न मानसिक दक्षताओं का विकास होता है। शिक्षा के उच्च स्तर पर बालक में अनुप्रयोगात्मक एवं विमर्शी चिन्तन क विकास की अपेक्षा की जाती है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली का स्वरूप तेजी से बदल रहा है। वर्तमान में समाज में आधुनिकीकरण, पश्चिमीकरण, विज्ञान व तकनीकी संसाधनों का प्रभाव तेजी से पड़ा है। आज पाश्चात्य संस्कृति और कार्य व्यवहार को भारतीय समाज में तेजी से स्वीकृति प्राप्त हो रही है। इसका प्रभाव देश की वर्तमान शिक्षा प्रणाली पर भी पड़ रहा है।

शिक्षा एक व्यापक एवं सतत् प्रक्रिया है। वर्तमान विज्ञान, तकनीकी एवं संचार क्रान्ति के काल में शिक्षा के स्वरूप, उसे प्राप्त करने के तरीके और उसकी सुलभता में व्यापक परिवर्तन आ चुका है। आज विद्यार्थी विश्व में किसी प्रकार के ज्ञान को कही भी, कभी भी, किसी से भी प्राप्त कर सकता है। जिसके आधार पर वह अपनी शैक्षिक निष्पत्ति में वृद्धि व विभिन्न शैक्षिक परिस्थितियों के साथ अपना विशिष्ट समायोजन स्थापित कर सकता है। वैश्विक प्रभाव में ही ज्ञान को सीखने के लिये नयी–नयी अधिगम प्रणालियों, तकनीकियों, शैलियों एवं प्रविधियों का प्रयोग हो रहा है जिसके आधार पर अल्प श्रम, समय एवं साधन के द्वारा नवीन एवं तार्किक ज्ञान सीखा जाना सम्भव हो सका है। शिक्षा के माध्यमिक स्तर पर इन अधिगम शैलियों के प्रयोग से विद्यार्थियों के मन, चिन्तन एवं अधिगम पर अनुकूल प्रभाव पड़ा है तथा उनके ज्ञान अवबोध व अनुप्रयोग स्तर में विस्तार के कारण उनकी शैक्षिक निष्पत्ति भी बढ़ी है।

शिक्षा के माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत विशिष्ट आवश्यकता वालें विद्यार्थियों के अन्तर्गत दृष्टिबाधित बालकों को सामान्य बालकों के साथ समावेशी शिक्षा प्रदान करने का प्रयास किया जा रहा

---

* शोधार्थी शिक्षक प्रशिक्षण विभाग, कुटीर पी.जी. कालेज, चक्के जौनपुर, (सम्बद्ध वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर (उ.प्र.))

है जिसमें सभी विद्यार्थियों को एक साथ एक ही कक्षा में एक ही पाठ्यक्रम के अन्तर्गत शिक्षा प्रदान की जाती है किन्तु उनकी दिव्यांगता के कारण उनके सीखने एवं प्रतिक्रिया करने सम्बन्धी दशाओं में अन्तर पाया जाता है। विशिष्ट बालकों सीखने की गति, क्षमता एवं स्तर न्यून होता है और वे सिखाये जाने वाले ज्ञान को धीरे–धीरे सीखते हैं जिसका प्रभाव उनकी शैक्षिक निष्पत्तियों पर भी पड़ता है। विशिष्ट बालकों की विद्यालयी परिस्थितियों, कक्षा–कक्ष सम्बन्धी स्थितियों तथा अधिगम की प्रक्रिया में भी अन्तर पाया जाता है जिसके कारण वे विद्यालयी परिवेश के साथ अपना समायोजन विशिष्ट एवं भिन्न तरीके से करते हैं। माध्यमिक स्तर पर दृष्टिबाधित विद्यार्थियों की समायोजन सम्बन्धी स्थितियों का मापन प्रस्तुत शोध प्रपत्र में किया गया है क्योंकि इसके आधार पर विद्यार्थियों की समायोजन सम्बन्धी समस्याओं का समुचित निदान एवं उपचार किया जाना सम्भव हो सकता है।

माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत दृष्टिबाधित विद्यार्थियों की सामान्य विद्यार्थियों की भांति सिखाये जाने वाले ज्ञान के लिये प्रचलित अधिगम शैली से भिन्न स्थितियों का मापन एवं विभिन्न विषयों को सीखने के लिये अलग–अलग अधिगम शैलियों को अपनाये जाने की दृष्टि से प्रस्तुत अध्ययन अत्यन्त महत्वपूर्ण है। जिसके आधार पर दृष्टिबाधित विद्यार्थियों के अधिगम सम्बन्धी समस्याओं एवं आवश्यकताओं को पहचानकर इसके लिये समुचित अधिगम शैली का विकास करने में सहायता प्राप्त हो सकती है। शिक्षा के माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत दृष्टिबाधित विद्यार्थियों के शैक्षिक संप्राप्ति, उनकी समायोजन क्षमता एवं उनकी अधिगम शैली का तुलनात्मक अध्ययन किया जाना दिव्यांग विद्यार्थियों की शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, शैक्षिक एवं अधिगम सम्बन्धी समस्याओं के समुचित निदान एवं उपचारात्मक प्रविधियों के विकास की दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी एवं महत्वपूर्ण है।

उद्देश्य :

1. दृष्टिबाधित बालकों एवं बालिकाओं की शैक्षिक निष्पत्ति की तुलना करना।
2. दृष्टिबाधित बालकों एवं बालिकाओं की समायोजन की तुलना करना।
3. दृष्टिबाधित बालकों एवं बालिकाओं की अधिगम शैली की तुलना करना।

परिकल्पनाएँ :

1. दृष्टिबाधित बालकों एवं बालिकाओं की शैक्षिक निष्पत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
2. दृष्टिबाधित बालकों एवं बालिकाओं की समायोजन में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
3. दृष्टिबाधित बालकों एवं बालिकाओं की अधिगम शैली में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

शोध विधि :

प्रस्तुत शोध प्रपत्र में वर्णानात्मक अनुसंधान की सर्वेक्षण प्रविधि का प्रयोग किया गया है। जनसंख्या के रूप में जौनपुर जनपद के माध्यमिक विद्यालयों के दृष्टिबाधित विद्यार्थियों को चयनित किया गया है। न्यादर्श के रूप में 25–25 कुल 50 दृष्टिबाधित छात्र–छात्राओं का चयन यादृच्छिक न्यादर्श प्रतिचयन विधि से किया गया है। छात्र–छात्राओं की समायोजन का मापन करने हेतु प्रो0 ए0के0पी0 सिन्हा एवं प्रो0 आर0पी0 सिंह द्वारा निर्मित समायोजन अनुसूची, शैक्षिक निष्पत्ति हेतु उनके पूर्व कक्षा प्राप्तांक एवं अधिगम शैली हेतु डॉ0 करूणाशंकर मिश्र द्वारा निर्मित मापनी का प्रयोग किया गया है। प्रदत्तों की गणना हेतु मध्यमान, मानक विचलन एवं टी–अनुपात परीक्षण का प्रयोग किया गया है।

सारणी संख्या–1

माध्यमिक स्तर के दृष्टिबाधित बालक–बालिकाओं की समायोजन की तुलना

चर	N	M	S.D.	D	σD	CR	सार्थकता
दृष्टिबाधित बालक	25	67.23	8.72	2.59	2.76	0.94	0.05 स्तर पर असार्थक
दृष्टिबाधित बालिका	25	69.82	10.73				

माध्यमिक स्तर के दृष्टिबाधित बालकों की समायोजन सम्बन्धी प्राप्तांकों का मध्यमान 67.23 तथा मानक विचलन 8.72 है जबकि माध्यमिक स्तर की दृष्टिबाधित बालिकाओं की समायोजन सम्बन्धी प्राप्तांकों का मध्यमान 69.82 तथा मानक विचलन 10.73 है। परिगणित क्रान्तिक अनुपात 0.94 है जो स्वतंत्रयांश 48 के लिये 0.5 सार्थकता स्तर पर सी.आर. सारणी मान 2.01 से कम है जो असार्थक है। अतः शून्य परिकल्पना माध्यमिक स्तर के दृष्टिबाधित बालक–बालिकाओं के समायोजन में कोई सार्थक अन्तर नहीं है, को स्वीकृत कर लिया गया। अर्थात् दृष्टिबाधित बालक एवं बालिकाओं के समायोजन सम्बन्धी स्थिति समान है। इसका सम्भावित कारण दृष्टिबाधित बालक एवं बालिकाओं को विभिन्न विद्यालयी परिवेश में प्राप्त होने वाली सुविधाओं में समानता, उनके द्वारा अनुभूत की गयी समस्याओं में समानता, उनकी विभिन्न परिस्थितियों के साथ ताल–मेल स्थापित करने की क्षमता में समानता तथा उनके प्रति विद्यालयी पारिवारिक एवं समाज के दृष्टिकोण में समानता आदि हो सकते हैं।

सारणी संख्या–2

माध्यमिक स्तर के दृष्टिबाधित बालक–बालिकाओं की शैक्षिक निष्पत्ति की तुलना

चर	N	M	S.D.	D	σD	CR	सार्थकता
दृष्टिबाधित बालक	25	340.72	32.89	17.92	8.64	2.07	0.05 स्तर पर सार्थक
दृष्टिबाधित बालिका	25	358.64	28.07				

माध्यमिक स्तर के दृष्टिबाधित बालकों की शैक्षिक निष्पत्ति सम्बन्धी प्राप्तांकों का मध्यमान 340.72 तथा मानक विचलन 32.89 है। जबकि माध्यमिक स्तर की दृष्टिबाधित बालिकाओं की शैक्षिक निष्पत्ति सम्बन्धी प्राप्तांकों का मध्यमान 358.64 तथा मानक विचलन 28.07 है। परिगणित क्रान्तिक अनुपात 2.07 है जो स्वतंत्रयांश 48 के लिये 0.5 सार्थकता स्तर पर सी.आर. सारणी मान 2.01 से अधिक है जो सार्थक है। अतः शून्य परिकल्पना माध्यमिक स्तर के दृष्टिबाधित बालक–बालिकाओं की शैक्षिक निष्पत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है, को अस्वीकृत कर दिया गया। क्योंकि दृष्टिबाधित बालिकाओं की शैक्षिक निष्पत्ति सम्बन्धी प्राप्तांकों का मध्यमान दृष्टिबाधित बालकों से उच्च है। अतः दृष्टिबाधित बालिकाओं की शैक्षिक निष्पत्ति दृष्टिबाधित बालकों से उच्च है। इसका सम्भावित कारण दृष्टिबाधित बालिकाओं को प्राप्त होने वाली सुविधाओं, उनके मानसिक विकास की स्थिति, उनका परिवेश, उनमें शैक्षिक अभिरूचि आदि हो सकते हैं।

सारणी संख्या–3

माध्यमिक स्तर के दृष्टिबाधित बालक–बालिकाओं की अधिगम शैली की तुलना

चर	N	M	S.D.	D	σD	CR	सार्थकता
दृष्टिबाधित बालक	25	134.73	15.53	5.81	4.29	1.35	0.05 स्तर पर असार्थक
दृष्टिबाधित बालिका	25	140.54	14.84				

माध्यमिक स्तर के दृष्टिबाधित बालकों के अधिगम शैली सम्बन्धी प्राप्तांकों का मध्यमान 134.73 तथा मानक विचलन 15.53 है जबकि माध्यमिक स्तर की दृष्टिबाधित बालिकाओं के अधिगम शैली सम्बन्धी प्राप्तांकों का मध्यमान 140.54 तथा मानक विचलन 14.84 है। परिगणित क्रान्तिक अनुपात 1.35 है जो स्वतंत्रयांश 48 के लिये 0.5 सार्थकता स्तर पर सी.आर. सारणी मान 2.01 से कम है जो असार्थक है। अतः शून्य परिकल्पना माध्यमिक स्तर के दृष्टिबाधित बालक–बालिकाओं के अधिगम शैली में कोई सार्थक अन्तर नहीं है, को स्वीकृत कर लिया गया। अर्थात् दृष्टिबाधित बालक एवं बालिकाओं के अधिगम शैली सम्बन्धी स्थिति समान है। इसका सम्भावित कारण दृष्टिबाधित बालक एवं बालिकाओं को प्राप्त होने वाली अधिगम सामाग्री में समानता, उन्हें दिये जाने वाले शिक्षण में समानता, शिक्षकों द्वारा अपनाये जाने वाली प्रविधियों में समानता, बालक–बालिकाओं की सीखने की प्रक्रिया एवं गति में समानता, विद्यालयी परिवेश में प्राप्त होने वाली सुविधाओं में समानता आदि हो सकते हैं।

निष्कर्ष :

1. माध्यमिक स्तर के दृष्टिबाधित बालक–बालिकाओं के समायोजन में सार्थक अन्तर नहीं प्राप्त हुआ अर्थात् दृष्टिबाधित बालक एवं बालिकाओं के समायोजन सम्बन्धी स्थिति समान है।
2. माध्यमिक स्तर के दृष्टिबाधित बालक–बालिकाओं की शैक्षिक निष्पत्ति में सार्थक अन्तर प्राप्त हुआ। दृष्टिबाधित बालिकाओं की शैक्षिक निष्पत्ति दृष्टिबाधित बालकों से उच्च है।
3. माध्यमिक स्तर के दृष्टिबाधित बालक–बालिकाओं के अधिगम शैली में सार्थक अन्तर नहीं प्राप्त हुआ अर्थात् दृष्टिबाधित बालक एवं बालिकाओं के अधिगम शैली सम्बन्धी स्थिति समान है।

सन्दर्भ :

1. राजीव मालवीय (2012) : उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षा. शारदा पुस्तक भवन, प्रयागराज.
2. एस0पी0 गुप्ता (2008) : उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, प्रयागराज.
3. रमन बिहारी लाल (2010) : शिक्षा की दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय सिद्धान्त. विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा.
4. मालती सारस्वत एवं एस0एल0 गौतम (2008): भारत में शैक्षिक प्रणाली का विकास.आलोक प्रकाशन, लखनऊ.
5. जे0सी0 अग्रवाल (2009): उदयीमान भारतीय समाज में शिक्षा. अग्रवाल पब्लिकेशन, लखनऊ
6. अरूण कुमार सिंह (2010) : उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान कार्य विधि एवं पद्धतियाँ, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना.
7. आर0ए0 शर्मा (1996) : शिक्षा अनुसंधान, सूर्या पब्लिकेशन, मेरठ।

***

समस्तीपुर शहर की जनसंख्या तथा शहरी सम्पोषणीय विकास का प्रारूप : एक भौगोलिक अध्ययन

डॉ. संजय कुमार *
कुमार शशि शंकर **

निबंध सार :

विकास प्रगति का सूचक है। ऐसे कई पैमाना हैं, जिससे किसी क्षेत्र के विकास का आकलन किया जाता है। वर्तमान समय में न केवल विकास बल्कि सम्पोषणीय/सतत/टिकाऊ विकास की बात की जाने लगी है। विकास के नाम पर मानव द्वारा उपलब्ध संसाधनों के उपयोग एवं दुरूपयोग से मानव का अस्तित्व ही खतरे में पड़ गया है। विश्व स्तर पर आज ऐसे विकास की बात की जा रही है जो सम्पोषणीय हो सतत हो, एवं टिकाऊ हो। यानी विकास ऐसा हो जिसमें संसाधनों का उपयोग वर्तमान पीढ़ी द्वारा इस प्रकार से हो ताकि वह संसाध्न भविष्य की पीढ़ी के लिए भी सुरक्षित रह सके। शहर अथवा नगरों के अंतर्गत गैर प्राथमिक कार्यो की प्रधनता होती है, जहाँ उपलब्ध होनी वाली सुविधाओं में विद्युत आपूर्ति, अस्पताल, शुद्ध पेयजल आपूर्ति, परिवहन, व्यवस्था, शैक्षणिक संस्था, मलजल की निकासी, कचरा निवारण एवं प्रबंधन, संचार सुविधाओं, डाक, एवं ए.टी.एम. सुविधाओं डाक, एवं तार घरों की संख्या, वाणिज्य बैंक शाखाओं की संख्या, उनकी गहनता एवं कई अन्य सुविधाए शामिल हैं। किसी एक शोध कार्य के अन्तर्गत विकास के सभी चरों का अध्ययन सीमित समय में करना संभव नहीं है। फिर भी एक या एक से अधिक चरों/सूचकों को शामिल कर शोध कार्य को यथासम्भव पूरा करने का प्रयास किया जाएगा।

संकेत शब्द : सम्पोषणीय विकास, सतत विकास, शैक्षणिक सस्था,शहरी विकास

परिचय :

शोध–क्षेत्र समस्तीपुर जिला के भूमि संसाधन, जल संसाधन, कृषि संसाधन, मानव संसाधन, उद्योग, पर्यटन के अवसर के मूल्यांकन, प्रबंधन एवं नियोजन पर केन्द्रित है। जिला अन्तर्गत मानव संसाधन की संलग्नता कृषि, उद्योग एवं सेवा क्षेत्रों की ओर दृष्टव है। वास्तव में प्रकृति मानव तथा संस्कृति संसाधन के अभिकर्त्ता होते हैं। अस्तु संसाधन का कार्यात्मक सिद्धांत इस बात को प्रमाणित करता है कि संसाधन गतिशील होते हैं जबकि प्राचीन विचारक इस बात से सहमति प्रकट करते हैं कि वे स्थिर है। अतः एक ओर जहाँ संसाधन का विनाश होता है तो दूसरी ओर नये–नये संसाधनों का निर्माण भी होता है। सभ्यता के विकास के साथ–साथ तथा मानव ज्ञान एवं संस्कृति के विकास के अनुसार निष्क्रिय तथा अवरोधी पदार्थ संसाधन में परिवर्तित होते नहीं दिखते हैं। मानव का श्रम और ज्ञान ही सबसे बड़ा संसाधन हैं। अतः संसाधन वे स्रोत है जिन पर मानव समाज दीर्घ अवधि तक निर्भर रहती है। प्राकृतिक संसाधन जो विनाशशील है अर्थात उपयोग करने पर जिनकी समाप्ति हो जाती है वह सीमित मात्रा में है दीर्घ अवधि तक उन पर भरोसा नहीं किया जा सकता है। अतः उनके जगह पर मानव अपने ज्ञान से दूसरे संसाधनों के विकास में सतत् प्रयत्नशील है। सतत् विकास के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए पर्यावरण संरक्षण अनिवार्य है जिसके लिए हमें प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग करना होगा। विश्व में निवास करने वाली विशाल जनसंख्या में सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक व्यवस्थाओं एवं परस्पर अन्तर्सम्बन्धता की विविधता पायी जाती है जिसके कारण सतत् विकास के लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु निम्नलिखित चुनौतियाँ हमारे समक्ष हैं–

---

* एसोसिएट प्रोफेसर स्नातकोत्तर भूगोल विभाग, महाराज कॉलेज, आरा, वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा
** शोध छात्र, भूगोल विभाग, वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा

सतत् विकास की अवधारण का विकास

इक्कीसवीं शताब्दी में बदलती जलवायु के दौर में बढ़ती जनसंख्या एवं संसाधनों के अविवेकपूर्ण दोहन से पर्यावरण संकट बढ़ता जा रहा है। सन् 2050 तक दुनिया की दो–तिहाई जनसंख्या जल संकट से ग्रस्त होगी। हमें खाद्य उत्पादन को भी दो गुना करना होगा जबकि विश्व की 23 प्रतिशत कृषि भूमि अवनयित हो चुकी है। प्रतिवर्ष लगभग 12 लाख हेक्टेयर वनों को नष्ट किया जाता है। प्रमुख खाद्यान्न, मत्स्य सम्पदा का भी बड़ी मात्रा में अतिदोहन हो चुका है। इस प्रकार जैवविविधता का भी ह्रास हुआ है।

जलवायु परिवर्त्तन के कारण स्वच्छ जल के भण्डार (हिमानियाँ) तेजी से पिघल रहे है। जिनके कारण सागर तल में उत्थान हो रहा है। इससे भविष्य में अनेक द्वीप एवं तटीय क्षेत्र समुद्रों में डूब जाएँगे और तटीय लोग पर्यावरणीय शरणार्थी (Eco-Refuge) बन जाएँगे। इसलिए समय रहते सतत् विकास के सिद्धान्तों को अपना लेना चाहिए। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम 2000 की रिपोर्ट में स्पष्ट किया गया है कि भावी पीढ़ियों के लिए एक उपयुक्त सतत् व्यवस्था अपनाने का सही समय हमारे हाथ से निकलता जा रहा है जिसके लिए कृषि, उद्योग एवं सेवाओं में सामान्यतया साधारण गति से किये जाने वाले निर्णयों की पहुँच की अहम् भूमिका है। कृषि प्रधान क्षेत्रों में कृषि उद्योग एवं सेवा का रूप ले चुकी है अतः समय रहते पर्यावरणीय वहन क्षमता को मानवीय उद्योग एवं सेवा का रूप ले चुकी है अतः समय रहते पर्यावरणीय वहन क्षमता को मानवीय अस्तित्व के अनुकूल बनाये रखने के लिए सतत् विकास वर्त्तमान की अनिवार्य आवश्यकता है।

विकास के वर्त्तमान दौर में मानव जाति का भविष्य सतत् विकास पर निर्भर होता जा रहा है। औद्योगिक क्रान्ति, जनसंख्या वृद्धि, हरित क्रान्ति तथा सूचना क्रान्ति के बाद अब विनाश रहित विकास (Zero Effect Development) के लिए एक वैश्विक जन–चेतना की आवश्यकता है जिसके मूल में सतत् विकास का विचार निहित है। इस दृष्टि से सतत् विकास के लिए निम्नलिखित सुझाव कारगर सिद्ध हो सकते हैं–

1. विभिन्न पर्यावरण मुद्दों पर गहन शोधकार्य किये जाने चाहिए।
2. संसाधनों के पुनः चक्रण एवं संरक्षण पर बल दिया जाये।
3. सघन वृक्षारोपण को प्रभावी रूप से क्रियान्वित किया जाए।
4. पारिस्थितिकी सन्तुलन आवश्यक है।
5. गैर–परम्परागत ऊर्जा स्रोतों का तेजी से विकास एवं इनके उपयोग को प्रोत्साहन।
6. पर्यावरण मित्र उत्पादों को प्राथमिकता।
7. हरित जीवन पद्धति को प्रोत्साहन।
8. जैविक कृषि को बढ़ावा।
9. पर्यावरणीय मुद्दों को बढ़ावा।
10. पर्यावरणीय मुद्दों का समाजीकरण एवं मानवीकरण।
11. पर्यावरण प्रबन्धन एवं पारिस्थितिकीय अंकेक्षण को अनिवार्य किया जाए।
12. जनसंख्या नियंत्रण।
13. अधिकतम उपयोग, अधिकतम लाभ, अधिकतम उपभोग एवं अधिकतम वृद्धि पर बल देने वाले सीमान्त अर्थव्यवस्था के स्थान पर संयमित उत्पादन, विवेकपूर्ण उपभोग, संरक्षण नवीनीकरण एवं विवेकपूर्ण विकास को महत्त्स देने वाली स्थानिक अर्थव्यवस्था को प्रोत्साहित करना चाहिए।

सतत् विकास पर्यावरण ह्रास को न्यूनतम हानि पहुँचाने वाली प्रौद्योगिकी का विकास, जनसंख्या नियन्त्रण, संसाधन संरक्षण, भावी आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए वर्त्तमान संसाधन उपयोग की रणनीति बनाने आदि पर निर्भर है। यद्यपि यह पारिस्थितिकी तन्त्र के उपयोग की कोई निरपेक्ष सीमा स्वीकार नहीं करता वरन् उपयुक्त प्रौद्योगिकी विकास द्वार संसाधनों की अभिवृद्धि कर

आवश्यकताओं की पूर्ति पर बल देता है। सतत् विकास की अवधारणा का उदय सन् 1962 में डी.डी.टी. के प्रयोग से हो रहे वन्य जीवों के विनाश पर ***रॉकल कारसन*** द्वारा प्रकाशित पुस्तक ***दी साइलेंट स्प्रिंग*** से माना जाता है। इसके उपरान्त सन् 1968 में प्रसिद्ध जैव वैज्ञानिक ***पॉल इहरलिच*** द्वारा ***पॉपूलेशन बम*** नामक पुस्तक प्रकाशित की गई जिसमें बढ़ती जनसंख्या, संसाधनों के दोहन एवं पर्यावरण के मध्य संबंधों की विवेचना की गई थी। सन् 1969 में एक गैर–सरकारी संस्था ***फ्रेंड्स ऑफ दी अर्थ*** का गठन हुआ जिसने पर्यावरण अवनयन से सुरक्षा पर ध्यान दिया। सन् 1972 में मेसाचुसेट्स ***क्लब ऑफ रोम*** ने अपना एक प्रतिवेदन ***वृद्धि की सीमायें*** प्रकाशित की जिसमें कम्प्यूटर मॉडलों के द्वारा भविष्यवाणी की गई थी कि संसाधनों के ह्रास एवं पर्यावरण अवनयन का प्रत्यक्ष मानव पर पड़ेगा। ***डी. मीडोज*** जो कि डाना के नाम से जानी जाती हैं 'द ग्लोबल सिटिजन' कॉलम की लेखिका रही हैं। ये सन् 1972 में प्रकाशित 'द लिमिट्स टु ग्रोथ' एवं सन् 1992 में प्रकाशित **'बियोंड द लिमिट्स'** पुस्तकों की अपने प्रति डेनिस मीडोज के साथ सह–लेखिका रही हैं। इन दोनों पुस्तकों में कम्प्यूटर की सहायता से बढ़ती जनसंख्या, बिगड़ते पर्यावरण एवं संसाधन ह्रास का विश्लेषण किया है।

समस्तीपुर शहर की नगरी जनसंख्या को उपलब्ध जन–सुविधाएँ

हाल ही में बिहार सरकार द्वारा जारी आर्थिक सर्वेक्षण में दिये गये आंकड़ों के आधार पर समस्तीपुर जिला राज्य के अन्य जिलों की तुलना में विकास के पायदान पर काफी नीचे की स्थिति रखता है। विकास के विभिन्न मापदंडों जैसे औद्योगिकीकरण, प्रति व्यक्ति आय, जिला सकल उत्पाद, बैंक में जमा राशि अनुपात आदि के साथ–साथ शहरीकरण के मामलों में भी समस्तीपुर जिला अन्य जिलों की तुलना में सबसे नीचे है। शहरीकरण आज विकास का एक आइना है। 2011 के जनगणना के अनुसार समस्तीपुर जिले की कुल आबादी में शहरी आबादी का प्रतिशत बढ़ने की बजाय घट गया है। रिपोर्ट के मुताबिक समस्तीपुर जिला बिहार के सबसे कम शहरीकरण वाला जिला है। 2011 की जनगणना के अनुसार जिले की कुल आबादी के महज 3.5 प्रतिशत ही लोग शहर में रहते हैं। बिहार के 38 जिलों में पटना जिला शहरी आबादी के मामले में सबसे ऊपर है। यहाँ की 43.5 फीसदी आबादी शहर में रहती है। बिहार में शहरी निकायों वाले शहरों की संख्या वर्ष 2001 और 2011 के बीच 125 से बढ़कर 139 हो गया है। पर समस्तीपुर जिला में पिछले तीन दशकों से वैधानिक शहरों की संख्या चार की चार बनी हुई है। वैसे वैधानिक शहर वैसे शहर को कहा जाता है। जिस शहर में तीन शहर निकायों में, नगर निगम, नगरपालिका या नोटिफाइड एरिया कमेटी कोई भी एक भी कार्य कर रही होती है। किसी भी क्षेत्र का शहरीकरण सीधे तौर पर उस क्षेत्र में औद्योगिकरण की प्रक्रिया से जुड़ जाता है। इसके विपरित समस्तीपुर में एक भी बड़ी औद्योगिक इकाई की स्थापना नहीं हो सकी है। 2011–2012 के सितंबर तक निबंधित मध्यम, लघु और अतिलघु इकाईयों के मामले में भी समस्तीपुर की स्थिति एक दम खराब है। 2011–2012 के सिंतबर माह तक राज्य में 1245 इकाईयां निबंधित थी जिसका मात्र 8.8 फीसदी दरभंगा प्रमंडल में था। समस्तीपुर की स्थिति का अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है। इन परिस्थितियों में जिलों के विकास के लिए चाहे वह औद्योगिकी के क्षेत्र में हो या फिर शिक्षा संरचना में स्वास्थ्य संरचना के क्षेत्रा में हो या अन्य विकासात्मक योजनाओं के लिए हो। जब तक आर्थिक पैकेज नहीं दिये जायेगे। समस्तीपुर जिला का विकास नहीं हो सकता है।

उद्देश्य :

प्रस्तुत शोध–पत्र का उद्देश्य निम्नलिखित है–

1. समस्तीपुर जिले के बढ़ती जनसंख्या का विस्तृत विवरण करना।
2. शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्र के अंतर्गत आने वाले क्षेत्रों का विकास।
3. मानव संसाधन के क्षेत्र में समस्तीपुर की अग्रीम भूमिका
4. शहर के विकास में सरकार के विभिन्न योजनाओं का उल्लेख कर समस्तीपुर जिला का विस्तृत विवरण करना।

संकल्पना :

1. जनसंख्या से होने वाले नुकसान तथा शहरी विकास का विवरण करना।
2. शहरी क्षेत्र के विकास में विभिन्न योजनाओं जैसे ड्रैनेज की सुविधा, साफ–सफाई तथा बरसात के पानी को सुनियोजित तरीके से इस्तेमाल करना ही इस आलेख का मुख्य संकल्पना है।

विधितंत्र :

प्रस्तुत अध्ययन में जिला सांख्यिकी विभाग के भूमि उपयोग प्रारुप, जीन्सवार आँकड़ों, स्थापित उद्योग संबंधित द्वितीयक आँकड़ों एवं प्रबंधन के नियोजन संबंधित प्रश्नावली विधि द्वारा व्यक्तिगत साक्षात्कार से प्राप्त प्राथमिक आँकड़ों को आधार बनाया गया है। इसके अतिरिक्त गैर–सरकारी एवं इन्टरनेट के माध्यम से प्रवासी कामगार के आँकड़ों का सहयोग लेकर विश्लेषण भी किया गया है।

अध्ययन क्षेत्र :

समस्तीपुर जिला $25^0 29'$ उत्तरी अक्षांश एवं $85^0 53'$ से $86^0 24'$ पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। इस जिला की स्थापना 14 नवम्बर 1972 ई॰ को बिहार सरकार के कार्मिक एवं प्रशासनिक सुधार विभाग की अधिसूचना संख्या–71टी॰ 172 का॰ प्र॰, दिनांक 04.11.1972 के द्वारा की गई थी। पूर्व में यह दरभंगा जिला के अन्तर्गत एक अनुमंडल था। वर्त्तमान में यह दरभंगा का दक्षिणी जिला है। इसका क्षेत्रफल लगभग 2,904 वर्ग कि॰मी॰ है, जिसमें 2888.5 वर्ग कि॰मी॰ देहाती क्षेत्र है तथा 15.05 वर्ग कि॰मी॰ शहरी क्षेत्र है। 2010 की जनगणना के अनुसार इसकी कुल जनसंख्या 42,61,566 है, जिसमें पुरूषों की संख्या 22,30,003 एवं महिलाओं की संख्या 20,31,563 है। इसकी औसत साक्षरता 61.86 (पुरूष 71.25 तथा महिला 51.51) तथा जनसंख्या घनत्व 1467 कि॰मी॰ है। समस्तीपुर जिला का मुख्यालय समस्तीपुर जिला का मुख्यालय समस्तीपुर में अवस्थित है, जिसके चार अनुमंडल–समस्तीपुर सदर, दलसिंहसराय, पटोरी एवं रोसड़ा है। यहाँ कुल 20 प्रखंड, 381 ग्राम पंचायत, 1248 गाँव एवं 61 शहरी वार्ड है। इस जिला की सीमा के उत्तर में दरभंगा, दक्षिण में पटना, पूरब में बेगूसराय एवं खगड़िया जिला तथा पश्चिम में मुजफरपुर एवं समस्तीपुर जिला स्थित है। यह एक कृषि प्रधान जिला है। यहाँ आबादी के अधिकांश लोग आजीविका हेतु कृषि पर निर्भर हैं। यह जिला बिहार के कृषि जलवायु क्षेत्र–1 के अंतर्गत है। इस जिले की मिट्टी का पी॰एच॰ मान 6.5–9.5 के बीच हैं, जिसमें कार्बनिक पदार्थ 0.2–1.0 प्रतिशत है। मिट्टी में फॉस्फोरस, नाइट्रोजन एवं पोटाश के अतिरिक्तफ अन्य सूक्ष्म तत्त्वों की अच्छी मात्रा मौजूद है। यहाँ औसत तापमान लगभग 25 डिग्री सेल्सियस एवं औसत आर्द्रता 63 डिग्री है। यहाँ की मिट्टी एवं जलवायु की स्थिति, कृषि फसल उत्पादन के लिए बहुत ही अनुकूल है। यह क्षेत्र विश्व की सबसे अधिक उपजाऊ भूमि के अन्तर्गत आता है। इसी कारण वर्षों पूर्व अमेरिकन स्वयं सेवी हेनरी फिण्स ने पूसा में भारत के प्रथम कृषि अनुसंधान संस्थान की स्थापना की थी। इस जिला की भूमि उपयोग विवरणी की तालिका से स्पष्ट करने की कोशिश की गई है

समस्तीपुर जिला का मानचित्र

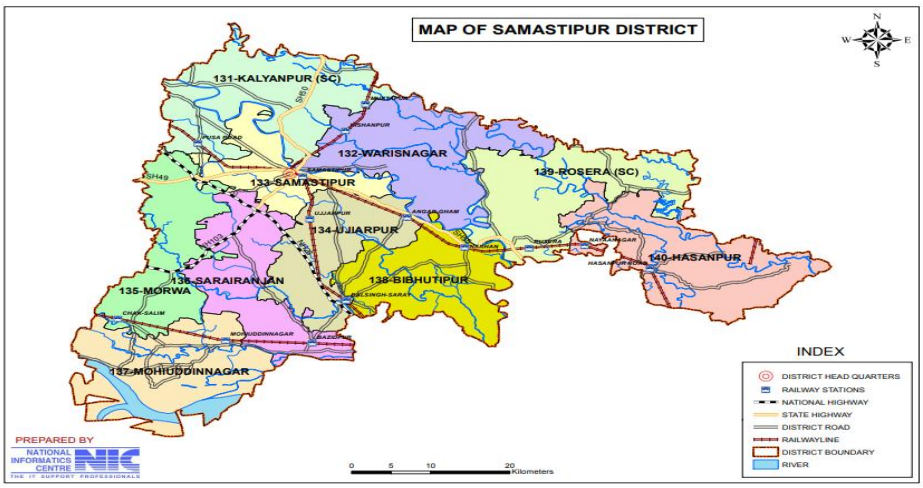

स्रोत–गजेटियर समस्तीपुर जिला–2011

समस्तीपुर जिला में सरकारी योजना का विस्तृत विवरण

जिला	लगे चापाकलों की संख्या					छूटे/ पानी की खराब गुणवता वाले टोलों का आच्छादन				
समस्तीपुर	2013-14	2014-15	2015-16	2016-17	2017-18	2013-14	2014-15	2015-16	2016-17	2017-18
	931	1052	937	237	431	157	398	336	96	0

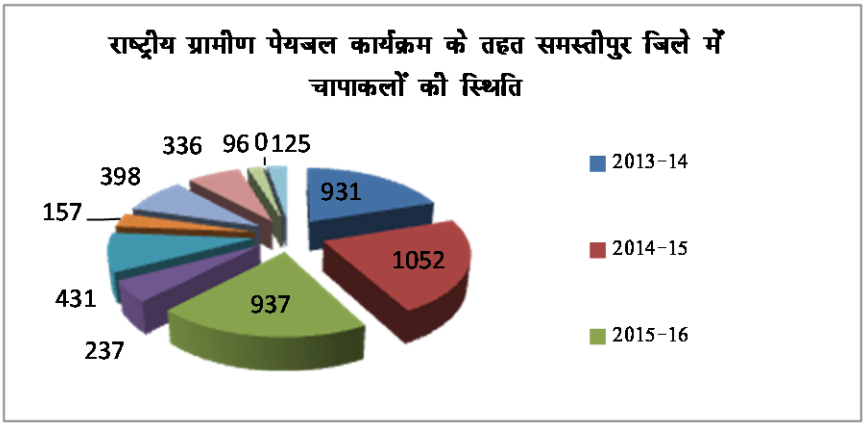

समस्तीपुर शहर का सम्पोषीय विकास

प्रायः वाडों की आबादी 20,000 से अधिक होती है। विकास के क्रम में अनुमंडल एवं जिला मुख्यालय आदि औद्योगिक संस्थान, केन्द्र, वाणिज्यिक केन्द्र, विस्तृत अथवा वाणिज्यिक केन्द्र विस्तृत अथवा बाजार आदि पाये जाते हैं। विकास के क्रम में वहाँ की जनसंख्या (आबादी) क्रमशः 50,000 से 99,999 तक पहुँच जाती है। यहाँ नगरपरिषद, इस बार मनोरंजन केन्द्र पाये जाते हैं। साथ ही शहरों में पुरूष कार्यशील जनसंख्या का कम से कम 75 प्रतिशत भाग अकृषित कार्यो में संलग्न है। तथा जनसंख्या का घनत्व 400 व्यक्ति प्रतिवर्ग कि0 मी0 से कम नहीं होती है।

समस्तीपुर नगर का विकास

सामान्यतः नगर शब्द से आशय ऐसी धनी जनसंख्या या अटालिकाओं का समूह है जहाँ एक विस्तृत भूमि पर व्यापारिक, प्रशासनिक, औद्योगिक जनसंख्या गैर कृषि कार्य में लगी हुई है। सामान्यतः विकास के पथ पर निरन्तर अग्रसर होने वाले शहर को नगर की संज्ञा दी जाती है, जिसकी जनसंख 1,00,000 से अध्कि होती है। नगरों में विशेषकर द्वितीयक, तृतीयक एवं चतुर्थक व्यवसाय अपनाया है।

नगरीय जनसंख्या

भारत में लगभग 29 प्रतिशत तथा बिहार में 11.30 प्रतिशत जनसंख्या नगरों में निवास करती है। इससे यह प्रमाणित होता है। कि भारत के अन्य राज्यों में नगरीय जनसंख्या अपेक्षाकृत अध्कि पायी जाती है। तथा उस अनुपात में बिहार में कम पायी जाती है। इस राज्य में नगरीकरण की गति अपेक्षाकृत बहुत ही कम है। यहाँ धीमी गति से नगरीय जनसंख्या में वृद्धि हो रही है। इसका मूल कारण शिक्षा का अभाव, शैक्षणिक एवं तकनीकी संस्थानों की कमी आदि है। इसके अतिरिक्त गरीबी, दरिद्रता खनिज संसाधनों की कमी, औद्योगिक पिछड़ेपन, सरकार की उदासीनता आदि अनेक कारण हैं। प्रारिम्भक दशक से ही नगरीय जनसंख्या में वृद्धि की दर धीमी रही है। 1901 की जनसंख्या के अनुसार बिहार में 4.70 प्रतिश्पात नगरीय जनसंख्या थी। इस अनुपात में भारत में औसत नगरीय आबादी 10.80 प्रतिशत थी। 1911 में देश की नगरीय आबादी में 50 प्रतिशत की कमी आयी इस अवधि में समस्तीपुर जिले के नगरीय विकास रहा।

तालिका–1.2
बिहार राज्य का नगरीय जनसंख्या

जनगणना वर्ष	बिहार	दशकीय विभिन्नताएँ	बिहार/समस्तीपुर
1901	4.70	0	10.80
1911	4.72	1.74	10.30
1921	4.60	8.17	11.20
1931	4.80	22.00	12.00
1941	5.40	33.66	13.90
1951	6.80	38.14	17.30
1961	8.40	49.03	18.00
1971	10.00	43.44	19.90
1981	12.72	53.63	23.30
1991	13.17	30.69	25.70
2001	10.47	22.49	28.20
2011	11.30	35.11	00

स्रोत– जिला गजेटियर, समस्तीपुर, 2018

ग्राफ-1.1
बिहार राज्य का नगरीय जनसंख्या

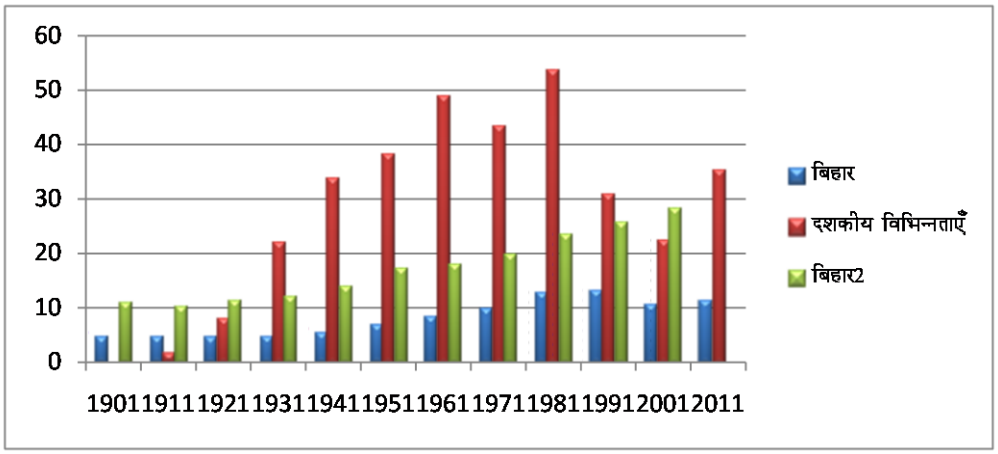

बिहार की नगरीय जनसंख्या में में तीव्र वृद्धि हुई एवं नगरीय जनसंख्या बढकर हो गयी है। जबकि देश में हुई जनगणना के अनुसार हरेक क्षेत्र में किसी भी राज्य का वाडों के सर्वे के द्वारा अधिक मात्रा में शहर का विकास हुआ है। जो इस ग्राफ के जरिये दिखाया गया है। शहर के पुराने और मध्यवर्ती भाग में आवासों के लंबवत् विकास को अंचल के आधार पर समझा जा सकता है।

मानव संसाधन :

समस्तीपुर जिला का कुल जनसंख्या वर्ष 2011 में 34,95,021 है। जिसमें पुरुषों की संख्या 18,44,535 एवं महिलाओं की संख्या 16,50,486 है। विगत दशकों में जनसंख्या वृद्धि दर 28.58 प्रतिशत है। इस जिले में जनसंख्या घनत्व 2001 में 1332 प्रति वर्ग किलोमीटर थी जो 2011 में बढ़कर 1717 प्रति वर्ग किलोमीटर हो गयी है। सर्वाधिक घनत्व वाला प्रखंड समस्तीपुर है। साक्षरता के दृष्टि

से समस्तीपुर जिला में 2011 के 68.52 प्रतिशत जनसंख्या साक्षर है। जिसमें पुरुषों की साक्षरता दर 77 प्रतिशत एवं महिलाओं की साक्षरता दर 59.10 प्रतिशत जनसंख्या है। पुरूषों की तुलना में महिलाओं की साक्षरता दर कम है। आर्थिक एवं सामाजिक क्षेत्रों में स्त्रियों एवं पुरुषों की भूमिका परस्पर समान होती है। 1901 एवं 1971 तक इस जिला में पुरुषों की तुलना में महिलाओं की संख्या अधिक रही है। लेकिन 1981, 1991, 2001 एवं 2011 में पुरुषों की तुलना में महिलाओं की संख्या में गिरावट आयी है। 1000 पुरुषों पर 1981 में 994, 1991 में 921, 2001 में 921, 2011 में 892 महिला है। समस्तीपुर जिला में कुल ग्रामीण जनसंख्या 2011 के अनुसार 93.35 प्रतिशत है एवं नगरी जनसंख्या 6.65 प्रतिशत है।

समस्तीपुर : ग्रामीण एवं शहरी जनसंख्या

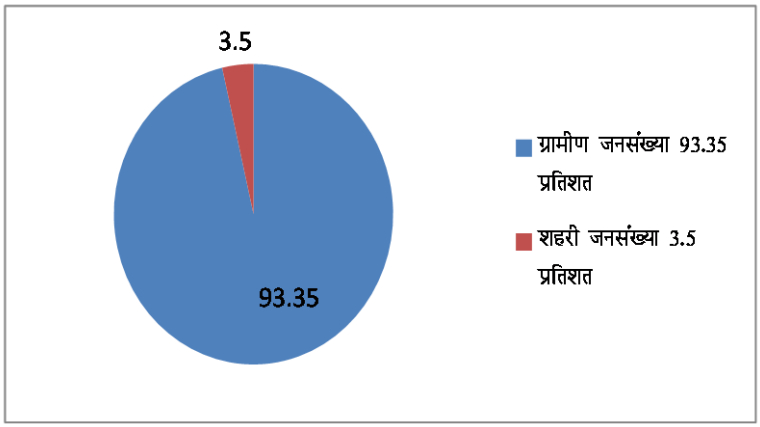

यातायात एवं संचार के साधन :–

यह अध्ययन क्षेत्र में यातायात के रुप में पक्की सड़कों का विस्तार हुआ है। इस जिला से होकर चार राष्ट्रीय मार्ग गुजरती है। जिसमें एन0एच0–28, एन0एच0–19, एन0एच–77 एवं एन0एच0–103 है। इन राजमार्गों का असर समस्तीपुर जिला की अर्थव्यवस्था पर स्पष्ट रुप से पड़ता हैं। यहाँ पर हरेक राष्ट्रीय राजमार्ग पर टॉल–टेक्स से सरकार को राजस्व का भी फायदा होता है। महात्मा गाँधी सेतु बन जाने के बाद समस्तीपुर जिला से होकर उत्तरी बिहार के लगभग सभी क्षेत्रों के लिए बसें चलती है। इससे समस्तीपुर जिला की अर्थवयवस्था पर स्पष्ट प्रभाव पड़ा है। समस्तीपुर जिला के पूर्व मध्य रेलवे के जोनल कार्यालय बन जाने से समस्तीपुर एवं उसके आसपास के क्षेत्रों में उसका आर्थिक स्थिति का व्यापक प्रभाव पड़ा है। संचार के साधनों का विस्तार यहाँ तीव्र गति के साथ हुआ है। यहाँ संचार के प्रमुख साधन मोबाईल, इन्टरनेट, टेलीफोन, रेडियों, डाकघर समाचार–पत्र इत्यादि है। समस्तीपुर बिहार का अग्रणी जिलों में एक है जहाँ प्रत्येक गाँव को टेलीफोन की सुविधा उपलब्ध करा दी गई है।

समस्या एवं नियोजन :

भूमि संसाधन इस जिला का मौलिक संसाधन है। जिसमें मिट्टी संसाधन का प्रयोग मुख्यतः कृषि के लिए किया जाता है। भूमि के अंतर्गत भूमि उपयोग के आँकड़ों से स्पष्ट होता है कि जल में एक बार से अधिक बोई गई भूमि कम है। क्योंकि यहाँ जल जमाव क्षेत्र अधिक है। इसलिए वर्ष भर में एक ही फसल सफलतापूर्वक ली जा सकती है। ऊँची भूमि के अधिक उपजाऊ क्षेत्र में तम्बाकू की खेती प्रमुखता से की जाती है। जो सालभर में एक ही फसल देती है और यह मुद्रा दायिनी फसल है जो बिहार राज्य ही नहीं बल्कि पूरे देश में विख्यात है। आम का बगान कृषि के अंतर्गत गणना की जाती है। जो इन जिलों का एक मुख्य कृषि संसाधन के रुप में है। सालों भर बगान से फल उपलब्ध होता है। आम की खेती एक विशेष क्षेत्र में केन्द्रित है। वैसे छिटपुट रुप में सम्पूर्ण जिले में इसकी खेती होती है। इस प्रकार एक फसली भूमि का क्षेत्र समस्तीपुर जिला में अधिक मिलती है। नहर का विकास इस जिला के उत्तरी–पश्चिमी एवं मध्यवर्ती जिलों में अधिक हुआ है। जिसमें सालो भर एक से

अधिक फसलें लगाई जाती है। परन्तु जनसंख्या का अधिकतम घनत्व जिला के दक्षिणी भाग में देखते हैं। जहाँ घनत्व ज्यादा है वहाँ सिंचाई योग्य भूमि कम है। सालोंभर में एक ही फसल उगाई जाती है। सिंचाई की व्यवस्था करके यदि भूमि को बहुफसली बना दिया जाए तो संभव है कि सघन आबादी वाला यह क्षेत्र अच्छी तरह आधुनिक सुविधाओं के साथ जीवन यापन कर सकता है।

बगानी कृषि क्षेत्र में जनसंख्या का अधिक विकास हुआ है। पटना जैसे विशालकाय नगर एवं समस्तीपुर शहर में रहने से तथा पटना से महात्मा गाँधी सेतु के सहारे जुड़ने के कारण विशालकाय बाजार इस क्षेत्र को उपलब्ध हुआ है। इसलिय बगानी कृषि को बाजार उपलबध होने से अत्यधिक विकास करने का अवसर मिला है। अस्तु दिनों–दिन बगानी कृषि का क्षेत्र बढ रहा है। केला, अमरुद, लीची एवं आम की आपूर्ति केन्द्र से यह आँकड़ा उपलब्ध हुआ है। पटना सबसे बड़ा बाजार इन फलों का है। ये सभी फल सड़ने वाले होते हैं। इसलिए बाजार की निकटता इसके विकास के लिए अति आवश्यक कारक है जो इस क्षेत्र को फतुहा से लेकर दानापुर तक विशाल बाजार उपलब्ध है। वैयक्तिक रुप से पूछने पर भी यह स्पष्ट होता है कि अधिकांश फल पटना चला जाता है। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि पटना समस्तीपुर नगरीय क्षेत्र रहने के कारण कृषि को विकास का अधिक मौका मिला है। फिलहाल नगर को विकसित किया गया है। कई प्रमुख नगरों को नगर निगम तथा नगर परिषद में शामिल किया गया है।

जनसंख्या की वृद्धि समस्तीपुर जिला में अधिक हुई है, परन्तु यहाँ के मानव संसाधन का सांस्कृतिक, शैक्षणिक तथा तकनीकी विकास बहुत कम हुआ है एवं नवाचारों का प्रचार–प्रसार बहुत कम हुआ है। ज्ञान एवं प्रशिक्षण की कमी के कारण अन्य संसाधनों में गत्यात्मकता का अभाव है। नियोजन में यह निर्देश दिया गया है कि अनुसंधान केन्द्र, कृषि प्रशिक्षण केन्द्र एवं अन्य तकनीकी शिक्षण संस्थाओं का विकास समस्तीपुर जिला में होनी चाहिए जिससे सांस्कृतिक विकास होता और नवाचार के प्रयोग से संसाधन निर्माण एवं संसाधनों का विकास उचित रुप से होगा। वर्त्तमान समय में इनका स्तर निम्न होने के कारण संसाधनों का विकास नहीं हो पा रहा है।

निष्कर्ष एवं सुझाव :

इस प्रकार हम देखते हैं कि समस्तीपुर जिला के समग्र विकास में जनसंख्या का विस्तृत कर प्रबंधन एवं नियोजन किया जाय तो आर्थिक दृष्टि से जिला का अत्यधिक विकास होगा। आर्थिक दृष्टि से जो समस्यायें इस जिला में है वे दूर हो सकती है। मानव सांसधन का आर्थिक एवं शैक्षणिक, तकनीकी आदि क्षेत्रों में बहुयामी विकास संभावी है।

संदर्भ :

1. कौशिक, डॉ0 एस0 डी0 एवं गौतम, अलका, 2018 : 'संसाधन भूगोल', पृष्ट सं0–02.
2. Sharma, Rateshwar, 1999 : 'Agriculture Transformation in Vaishali District', Ph.D. thesis, BRABU, Muzaffarpur, P.-79& 80
3. भूमि उपयोग प्रारुप , 2017–2018 : जिला सांख्यिकी विभाग, समस्तीपुर
4. भारत की जनगणना, 2001
5. भारत की जनगणना, 2011

***

मथुरा के आन्तरिका एवं अन्तर्राज्यी व्यापार : (शुंग युग से गुपत युग तक के विशेष संदर्भ में)

डॉ. शशि कुमार मिश्र *

बौद्ध युग में व्यापार और वाणिज्य की यथेष्ट उन्नति हुई थी । फलस्वरूप व्यापारी वर्ग अत्यधिक सम्पत्तिशाली हो गया था । अंगुत्तर निकाय के अनुसार भगवान बुद्ध एक बार मथुरा गये थे और वहाँ उन्होंने उपदेश भी दिया था[1]। दिव्यावदान के अनुसार बुद्ध ने यह भविष्यवाणी की थी कि आगे चलकर मथुरा बड़ी नगरी होगी[2]। इसी ग्रंथ से मथुरा नगर की आर्थिक एवं व्यापारिक गतिशीलता पर प्रकाश पड़ता है। ग्रंथ से स्पष्ट होता है कि पाटलिपुत्र से बहुधा यहाँ नावें आया करती थी। नावों की संख्या प्रचुरता से ऐसा लगता है कि मानों दोनों नगरों के बीच नावों का एक विस्तृत पुल बंधा हुआ हो। मथुरा के व्यापारी पाटलिपुत्र से जलमार्ग द्वारा व्यापारिक वस्तुओं का आदान-प्रदान करते थे[3]। इन्द्रप्रस्थ, श्रावस्ती, कौशाम्बी तथा वैशाली आदि नगरों के साथ भी यहाँ के नागरिकों ने व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित किया[4]। जैन साहित्यों से भी मथुरा के व्यापार सम्बन्धी विवरण मिलते हैं। यह नगर व्यापार का भी एक महत्वपूर्ण केन्द्र था और विशेषकर सूती एवं रेशमी वस्त्र के लिए प्रसिद्ध था[5]। यहाँ के निवासी मुख्यतः व्यापार पर ही जीवित रहते थे, कृषि पर नहीं। व्यापार मुख्यतः स्थलमार्ग से ही होता था[6]।

शुंगकाल से लेकर कुषाण युग तक मथुरा दो तरह के व्यापार होते थे। प्रथमः मथुरा के क्षेत्रीय व्यापार और द्वितीयः अन्तर्राज्यी व्यापार ।

प्रथम मथुरा : क्षेत्रीय व्यापार - शुंग युग से कुषाण युग तक मथुरा के योग्यता और शक्ति का विशेष रुप से आर्थिक विकास के संसाधनों और औद्योगिक निर्माताओं के संदर्भ में विख्यात था[7]। उपलब्ध तथ्यों के आधार पर मथुरा मुख्यतः काष्ठ कला, धातु, स्वर्णकार, लोहार, जैलवर, जौवहरी, घड़ीसाज, इत्र बनाने वाले और मूत्रिकार विद्यमान थे । इसके अतिरिक्त भवन निर्माण व्यवसाय, आटा चक्की, बनाने वाले अनाज के व्यापारी मुख्य रुप से विद्यमान थे[8]। मुख्य रूप से यहाँ पर बहुत से व्यापारिक संस्थाएँ विद्यमान थी जो कि जरुरी और आवश्यक वस्तुओं का क्षेत्रीय व्यापार करते थे[9]। इसके अतिरिक्त शुंग वंश के सिककों के युग में क्षेत्रीय शासक और कुषाणों नें आर्थिक आदान प्रदान का विस्तार मथुरा क्षेत्र में किया था ।

मथुरा अपने वस्त्र उद्योग, सुगन्धी उद्योग, धातु उद्योग, और कला संबंधी उत्पादनों के लिए विशेष रुप से प्रसिद्ध था । उपरोक्त निर्मित वस्तुओं का निर्यात मुख्य रूप से मथुरा के स्कूल आफ आर्ट द्वारा किया जाता था । गंगा के मैदानी भागों में उपरोक्त वस्तुओं का व्यापार लुहरपुर (सीतापुर जिला), श्रावस्ती, कुशीनगर, उत्तरी क्षेत्र आगरा, इटा, मुसानगर और वाजीदपुर(कानपुर), तुसारन विहार (प्रतापगढ़ जिला), कौसाम्बी भाटा, सारनाथ, पाटलिपुत्र, राजगढ़, बोध गया और चन्द्रकेतु नगर बंगाल के मध्य और दक्षिण क्षेत्र के रास्तों के द्वारा मालवा, साँची आदि महत्वपूर्ण केन्द्रों से होता था । दक्षिणी व्यापार मार्ग राजस्थान कोसिमन (जोधपुर जिला) पश्चिमी क्षेत्र में मुख्य रूप से मार्ग थे । तक्षशिला उत्तर पश्चिमी मार्ग अमरावती आन्ध्र प्रदेश में मुख्य मार्ग था[10] । बहुत से उदाहरण साक्ष्य उपलब्ध हुए हैं जिनके द्वारा यह प्रतीत होता है कि व्यापारी शाकल और भरहुत होकर मथुरा पहुँचते थे[11]। मथुरा के स्थानीय शासकों द्वारा सिक्कों के प्रचलन के फलस्वरूप मथुरा गंगा के मैदानी भाग और पश्चिमी क्षेत्रों तथा हरियाणा तक सीमित रहा लेकिन कुषाण सिक्कों नें इसका विस्तार सम्पूर्ण उत्तर भारत में

* असि. प्रो. प्राचीन इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, श्री गाँधी पी. जी. कालेज, मालटारी, आजमगढ़

किया। यद्यपि मथुरा कुषाणों का मुख्य टकसाल था । इसके साथ ही साथ यह भी कहना कठिन है कि कुषाण सिक्कों के प्रचलन में उसके विस्तार में कितना योगदान रहा है ।

द्वितीय मथुरा : अन्तर्राज्यी व्यापार – मथुरा के व्यापारियों नें पश्चिमी राज्यों के साथ व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित किया था । उपलब्ध साक्ष्यों के अनुसार व्यापारी मिथला, मगध, और अन्य स्थानों पर घोड़ों का आयात सिन्धु सौविरा से मथुरा के द्वारा करते थे । राजस्थान से खनिज पदार्थ और अन्य उसके उत्पाद एवं सामानों का आयात करता था । शुंग एवं कुषाण काल में इंडोग्रीक शाक्य और कुषाण व्यापारियों के व्यापार का विवरण मिलता है[12]।

तत्कालीन राजनैतिक सत्ता संघर्ष के फलस्वरूप गुजरात में सातवाहन, शाक्य और मालवा और कुषाण और अम्भीयस के पंजाब और सिन्ध के पलायन से मथुरा के व्यापारिक मार्गो के स्वरूप में काफी बड़ा परिवर्तन हुआ । अन्तर्राज्यी स्तर पर व्यापार सिन्धु-सौविरा के द्वारा मथुरा से होता रहा था । मथुरा के शाक्य और कुषाण के सम्बन्ध और पश्चिमी शाक्य के सम्बन्धो से अन्तर्राज्यी व्यापार पर काफी प्रभाव डाला ।

चूँकि गंगा के मैदानी भाग सभ्यता, राजनीति और व्यवसाय के प्रमुख क्षेत्र है । अतः इन क्षेत्रों के मार्गो नें व्यवसाय में प्रमुख योगदान दिया । उत्तर पूरब राज्यों से मथुरा से व्यापार का स्वरूप पूर्णतः बना रहा । फलस्वरूप मथुरा का गंगा के मैदानी शहरों से विशेषतया दोआब क्षेत्र में इसके व्यवसायिक शक्ति में वृद्धि हुई । गंगा के मैदानी भागों के संचार माध्यमों में विशेषतया वृद्धि हुई । व्यापार मुख्यतः घोड़ों, शराब, सोना, सूती वस्त्र, धातुकीय, मूर्तिकला, लोहा, स्टील, हाथी आदि विशेष रूप से किये जाते थे । मथुरा में शाक्य एवं कुषाण के सत्ता में होने के कारणवश दक्षिणी मार्गो का महत्व बढ़ा और पश्चिमी शाक्य मालवा, गुजरात और सातवाहन दक्षिण में इनके कारणवश स्वरूप में परिवर्तन व्यवसाय एवं संचार के साधनों में काफी वृद्धि हुई । इन्होंने मथुरा के महत्व को उजागर किया और विदिशा, उज्जैन, भृगुकच्छ मुख्य मार्गो ने अन्तर्राज्यी व्यापार में महत्वपूर्ण योगदान प्रदान किये । सातवाहन पश्चिमी शाक्य और कुषाणों के नियन्त्रण के कारणवश उपरोक्त मार्ग सुचारू रुप से चलते थे । विदिशा एवं अकरा क्षेत्र के विजय के फलस्वरूप दक्षिणी व्यापार मार्ग काफी प्रभावित हुआ । कारणवश इन कठिन परिस्थितियों में भी व्यापार मार्ग, एक काष्ठ कला एवं हिरों के व्यापार का प्रमुख केन्द्र रहा । विभिन्न राजनैतिक परिवर्तनों के वावजूद कुषाणों के विदिशा क्षेत्र में विस्तार के फलस्वरूप मथुरा का व्यापारिक सम्बन्ध दक्षिण भारत और उत्तर पूर्व और दक्षिण पूर्व से काफी घनिष्ठ हो गया । गंगा के मैदानी क्षेत्रों में एक बहुत बड़ा परिवर्तन माना जाता था । इसके अतिरिक्त दक्षिण में विशेषतया नासिक, कल्याण, पूर्व में नार्गुजनकोण्डा, अमरावती, गुजरात और मथुरा द्वारा गंगा के मैदानी भागों का व्यापारिक सम्बन्ध काफी वढ़ गया था[13]।

गुप्तयुगीन आंतरिक व्यापार 'श्रेष्ठि' 'सार्थवाह' 'कुलिक' और निगम के माध्यम से संगठित एवं व्यवस्थित होता था । ऐसे व्यापारी जो अपनी वस्तुओं को घोड़ों, बैलों या अन्य पशुओं अथवा रथों पर लादकर समूह में एक स्थान से दूसरे स्थान पर पैदल जाते आते थे तथा क्रय-विक्रय करते थे, 'सार्थ' के नाम से विख्यात थे । कभी-कभी उन्हें 'सांगत्रिक' भी कहा जाता था । उन व्यापारियों के नेता को 'सार्थवाह' के नाम से अभिहित किया गया था, जो व्यापारियों के समूह को नेतृत्व प्रदान करता था । 'सार्थ' में सम्मिलित होकर चलने वाले व्यापारियों के बीच पारस्परिक मतैक्य होता था तथा हानि-लाभ के लिए सभी समान रूप से भागीदार होते थे और नियमों के अनुसार आवद्ध रहते थे । सार्थ में पाँच प्रकार के लोग होते थे – १. मंडी-सार्थ (व्यापारिक समान और माल लादकर सम्मिलित होने वाले व्यापारी) । २. वहलिका (घोड़े, बैल, ऊंट आदि वाहन) । ३. भारवाहक (माल धोने वाले लोग) । ४. औदारिका (आजीविका के लिए एक स्थान से दूसरे स्थान जाने वाले लोग) । ५. कापटिक (साधु और भिक्षु)[14]। उस युग में बाजार को 'विपणि' की संज्ञा दी गई थी, जहाँ क्रय-विक्रय के

लिए अनेकानेक वस्तुएँ इकट्ठी होती थी[15]। लोहे को तपाकर अनेक वस्तुएँ बनाई जाती थी, जिनकी माँग समाज में बराबर हुआ करती थी[16]। फांगेल[17] और अग्रवाल[18] के अनुसार मथुरा में विभिन्न प्रकार के अस्त्र, जैसे तलवार, भालों, कटारों इत्यादि का क्रय-विक्रय एवं व्यापार हुआ करता था । फाह्यान के अनुसार मथुरा में क्रय-विक्रय में सिक्कों एवं कौड़ियों का प्रचलन था[19]। क्रय करने के लिए 'निष्क्रम' शब्द का व्यवहार किया जाता था। पण्यवीथी (सड़क) के दोनों ओर दुकानें रहा करती थीं, जिनमें समाज के उपयोग की विविध वस्तुएँ बिका करती थी[20]। अमरकोश में सड़क के दोनों ओर की दूकानों का उल्लेख हुआ है[21]।

उपरोक्त विवेचना से यह स्पष्ट होता है कि छठवीं शताब्दी ईसा पूर्व में भगवान बुद्ध नें जो भविष्यवाणी मथुरा के संदर्भ में किया था कि युगान्तर में मथुरा एक वड़ी नगरी होगी वह शत प्रतिशत परिलक्षित होता है। विशेषतया शुंग कुषाण व गुप्त युग में मथुरा एक व्यापारिक नगर के रूप में प्रतिष्ठित दृष्टिगोचर होता है। मथुरा से व्यापार स्कूल आफ आर्ट के द्वारा होता था । इसके अतिरिक्त मथुरा में कुषाण राजवंश का टकसाल भी था । यह व्यापारिक स्थल इस तथ्य को भी संदर्भित करता है कि व्यापारिक स्थल के साथ-साथ प्रतिष्ठित नगर के रूप में भी अभिहित था । चीनी यात्री फाह्यान ने भी व्यापारिक नगर के रूप में उल्लेख किया है । कालिदास के रघुवंश में धार्मिक एवं व्यापारिक नगर के रूप में भी वर्णन मिलता है । अतः विवेचित कलावधि में मथुरा नगर व्यापार के प्रमुख केन्द्र के रूप में प्रतिष्ठित था ।

सन्दर्भ :

1. अगुंत्तर निकाय, भाग 2 पृ०57 वही भाग 3 पृ० 257 ।
2. दिव्यावदान, पृ०347।
3. वही भाग पृ० 387 ।
4. मललसेकर, डिक्शनरी आफ पाली एण्ड प्राकृत नेम्स, भाग 2 पृ० 930 ।
5. आवश्यटीका (हरिभद्र) पृ० 307 ।
6. वृहत्कल्पभाष्य 1/1239 ।
7. मिलिन्द पंहो 331 देखिए हार्न, मिलिन्द क्यूश्चन पृ०171-172, बासाक रा०जी०, ए स्टडी आफ दी महावस्तु अध्ययन, कलकत्ता, 1960, पृ० 37-41, शर्मा, आर एस० लाई आन अर्ली इंडिया सोसाइटी एण्ड इकोनामीक, बम्बई 1960, पृ० 74-78।
8. लुर्डस एच.ए. लिस्ट आफ ब्राह्मीन इंसक्रिपसंनस, एपिग्राफिया इण्डिया, X 29, 53-54, 95, लुर्डस एच. मथुरा इंसक्रिपसंनस, 1,27,74,81,92, लुर्डस लिस्ट नंबर 85,100, 27, 68, 76, ब्यूलर जी, फरदर जैन इंसक्रिपसंन्स फार मथुरा एपिग्राफिया इण्डिया, II, 1994 नं०XXY पृ० 207 ए०नो० मथुरा इंसक्रिपसन्स आफ दी इयर 28 EI, XXI, 1931-32 नं०10 पृ० 55 ।
9. लुर्डस लिस्ट नं० 24, 41, 30, लुर्डस मथुरा इंसक्रिपसंनस नं० 172 ।
10. जोशी एन०पी० मथुरा की मूर्तिकला पृ०56।
11. मिलिन्द पंहो 331 देखिए हार्न, मिलिन्द क्यूश्चन पृ०173, लूर्डस, लिस्ट आफ ब्राह्मीन इनसिक्रिप्सनस एओ एस. 125, 687, 869, 288, 291 ।
12. अल्तेकर ए०एस० नाडांजस यूपा इन्सक्रिपसन्स एपिग्राफिया इंढिया XXVII (1956), 252, लूर्डस एल लिस्ट आफ ब्राह्मीन इन्सक्रिप्सन्स (1956) 252 ।
13. ब्यूर्लर जी० ओटीव इन्सक्रिप्सन्स फार्म दी सांची स्तूप एपिग्राफिया इण्डिया, वायलूम II (1994) पृ०87, मुखर्जी वी०एन० दी इकोनामिक फैक्टर इन दी कुषाण ।

14. हिस्ट्री पृ० 25 ।
15. मिश्र जयशंकर प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास पृ०629, रघुवंश 16, 41।
16. फ्लीट पृ०6 अमरकोश 1,28, 8.42, 8.70-72, 8. 88-95।
17. फांगेल ए०एम०एम०, सी०स०एफ० पृ० 199, सी०सं०एफ० पृ०111, सी०सं०एफ० पृ०145, सी०सं०ई० 13 पृ०108, सी०सं० 73 पृ०112, सी०सं०732 पृ०116 ।
18. जे०यू०पी०एच०एस० XXII सं०1022 पृ०140, सं०1579 पृ०140, सं०592 पृ०152, सं०724 पृ०1522, सं०2028 पृ०152, सं०899 पृ०158, सं०738 पृ०160, सं०739 पृ०161, सं०126 पृ०161, सं०604 पृ०165, सं०739 पृ०205, स०डी०46 पृ० 167, सं०894 पृ०168, सं०1936 पृ०168, सं०938 पृ०168, सं०100 पृ०168।
19. जेम्स लेग्गे, दी ट्रेवेल्स आफ फाह्यान पृ० 42 ।
20. रघुवंश 19.30 ।
21. अमरकोश 2.20 ।

***

वित्तपोषित एवं स्ववित्तपोषित शिक्षक-प्रशिक्षण संस्थानों के प्रशिक्षकों के एन.सी.टी.ई. कार्यक्रम के प्रति जागरूकता का अध्ययन

डॉ. (श्रीमती) नीलिमा श्रीवास्तव *

भूमिका :

शिक्षा के माध्यम से ही राष्ट्र के नागरिकों में ऐसे व्यक्तित्व गुणों का विकास किया जाना सम्भव है जो राष्ट्र के नव निर्माण में अपना योगदान कर सकें। इसीलिए कोठारी कमीशन ने कहा– ''भारत के भाग्य का निर्माण इसकी कक्षाओं में हो रहा है।'' राष्ट्र के नव निर्माण का उत्तरदायित्व शिक्षक पर निर्भर करता है। शिक्षक में अपेक्षित दक्षता हेतु अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम के माध्यम से प्रभावी एवं गुणवत्तापूर्ण प्रशिक्षण कार्यक्रम का विकास किया जा सकता है। अध्यापक शिक्षा वह शैक्षिक आयोजन है जिसमें विभिन्न स्तरीय शिक्षकों को इस तरह से प्रशिक्षित किया जाता है कि वे अपने उत्तरदायित्वों को ग्रहण कर तथा तकनीकी दक्षताओं को विकसित कर प्रभावी शिक्षक के रूप में अपना योगदान दे सकें। इस हेतु सामाजिक, सांस्कृतिक नैतिक एवं चारित्रिक गुणों के विकास का प्रशिक्षण प्रदान कर उन्हें श्रेष्ठ शिक्षक के रूप में स्थापित किया जाता है। सेवारत एवं सेवापूर्व शिक्षकों में शिक्षक दक्षताओं एवं क्षमताओं के विकास हेतु समुचित प्रशिक्षण अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम के माध्यम से प्रदान किया जाता है।

वर्तमान में शिक्षा का माध्यमिक स्तर अध्यापकों की दृष्टि से अत्यन्त चुनौतीपूर्ण माना जाता है। अतः इस स्तर के शिक्षकों के लिए सेवापूर्व प्रशिक्षण की व्यवस्था राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद के दिशा–निर्देशों के अन्तर्गत विभिन्न विश्वविद्यालयों एवं सम्बद्ध वित्तपोषित एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों द्वारा प्रदान की जाती है। इन प्रशिक्षण महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों के लिए अध्यापक शिक्षा हेतु दिशा–निर्देश राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद द्वारा प्रदान किया जाता है। इन दिशा–निर्देशों के अनुपालन की स्थिति क्या है? वित्तपोषित एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में इन मानकों का अनुपालन किस स्तर तक हो रहा है? बी0एड्0 प्रशिक्षण महाविद्यालयों में प्रशिक्षण का गुणवत्ता स्तर क्या है? एन0सी0ई0टी0 के दिशा–निर्देश के निर्धारण का आधार क्या है? इन प्रमुख बिन्दुओं को आधार बनाकर प्रस्तुत शोध प्रपत्र में अनुदानित एवं स्ववित्तपोषित शिक्षक–प्रशिक्षण संस्थानों के शिक्षक–प्रशिक्षक अध्ययन किया है।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. वित्तपोषित तथा स्ववित्तपोषित शिक्षक–प्रशिक्षक महाविद्यालयों के प्रशिक्षकों के एन0सी0टी0ई0 के सम्बन्ध में जानकारी की जांच करना।
2. शिक्षक–प्रशिक्षण संस्थानों में संसाधनों की उपलब्धता के सम्बन्ध में पुरूष एवं महिला प्रशिक्षकों का अभिमत ज्ञात करना।

परिकल्पनाएं :

1. वित्तपोषित तथा स्ववित्तपोषित शिक्षक–प्रशिक्षक महाविद्यालयों के प्रशिक्षकों के एन0सी0टी0ई0 के सम्बन्धमें जानकारी में सार्थक अन्तर नहीं है।
2. शिक्षक–प्रशिक्षण संस्थानों में संसाधनों की उपलब्धता के सम्बन्ध में पुरूष एवं महिला प्रशिक्षकों का अभिमत समान है।

अध्ययन विधि :

प्रस्तुत शोध कार्य वर्णनात्मक अनुंसधान की सर्वेक्षण प्रविधि पर आधारित है। जिसमें प्रो0 राजेन्द्र सिंह (रज्जू भय्या) विश्वविद्यालय, प्रयागराज से सम्बद्ध प्रतापगढ़ जनपद में संचालित अनुदानित एवं स्ववित्तपोषित शिक्षक–प्रशिक्षक संस्थानों को समष्टि के रूप में लिया गया है। न्यादर्श के रूप में

* प्राचार्या, साकेत गर्ल्स पी.जी. कालेज, दहिलामऊ प्रतापगढ़

वित्तपोषित शिक्षक–प्रशिक्षण संस्थानों के 10 तथा स्ववित्तपोषित शिक्षक–प्रशिक्षण संस्थानों के 10 शिक्षक–प्रशिक्षकों का चयन यादृच्छिक न्यादर्श प्रतिचयन विधि से किया गया है। शोध उपकरण के रूप में स्वनिर्मित एन0सी0टी0ई0 कार्यक्रम के प्रति जागरूकता मापनी का प्रयोग किया गया है। संकलित प्रदत्तों का प्रतिशतमान ज्ञात किया गया है।

सारणी–1

वित्तपोषित एवं स्ववित्तपोषित शिक्षक–प्रशिक्षकों की एन0सी0टी0ई0 कार्ययोजना के प्रति अभिमतावली का प्रतिशतमान

क्र0 सं0	आयाम	वित्तपोषित शिक्षक प्रशिक्षक		स्ववित्तपोषित शिक्षक प्रशिक्षक	
		हां	नहीं	हां	नहीं
1.	अवधि एवं कार्यकारी दिवस	65	35	80	20
2.	प्रवेशित छात्रों की संख्या पात्रता एवं प्रवेश प्रक्रिया	72	28	65	35
3.	स्टाफ सम्बन्धी	75	25	55	45
4.	संसाधन एवं सुविधाएं	85	15	60	40
5.	पाठ्यचर्या संकलन	80	20	62	38

विश्लेषण एवं व्याख्या :

उक्त सारणी से स्पष्ट है कि शिक्षक–प्रशिक्षण संस्थानों में कार्यरत वित्तपोषित शिक्षक–प्रशिक्षकों की प्रशिक्षण की अवधि एवं कार्यकारी दिवस के सम्बन्ध में 65 प्रतिशत हां एवं 35 प्रतिशत नहीं में प्रतिक्रिया व्यक्त की गयी जबकि स्ववित्तपोषित माध्यमिक शिक्षक–प्रशिक्षक संस्थानों के प्रशिक्षकों की प्रशिक्षण अवधि एवं कार्यकारी दिवस के सम्बन्ध में 80 प्रतिशत ने हां जबकि 20 प्रतिशत ने नहीं में प्रतिक्रिया व्यक्त किया।

शिक्षक–प्रशिक्षण संस्थानों में कार्यरत वित्तपोषित शिक्षक प्रशिक्षकों की प्रवेशित छात्रों की पात्रता एवं प्रवेश प्रक्रिया के सम्बन्ध में 72 प्रतिशत हां एवं 28 प्रतिशत नहीं में प्रतिक्रिया व्यक्त की गयी जबकि स्ववित्तपोषित माध्यमिक शिक्षक–प्रशिक्षक संस्थानों के प्रशिक्षकों की प्रवेशित छात्रों की पात्रता एवं प्रवेश प्रक्रिया के सम्बन्ध में 65 प्रतिशत ने हां जबकि 35 प्रतिशत ने नहीं में प्रतिक्रिया व्यक्त किया।

शिक्षक–प्रशिक्षण संस्थानों में कार्यरत वित्तपोषित शिक्षक प्रशिक्षकों की स्टाफ के सम्बन्ध में 75 प्रतिशत हां एवं 25 प्रतिशत नहीं में प्रतिक्रिया व्यक्त की गयी जबकि स्ववित्तपोषित माध्यमिक शिक्षक–प्रशिक्षक संस्थानों के प्रशिक्षकों की स्टाफ के सम्बन्ध में 55 प्रतिशत ने हां जबकि 45 प्रतिशत ने नहीं में प्रतिक्रिया व्यक्त किया।

शिक्षक–प्रशिक्षण संस्थानों में कार्यरत वित्तपोषित शिक्षक प्रशिक्षकों की संसाधन एवं सुविधाओं के सम्बन्ध में 85 प्रतिशत हां एवं 15 प्रतिशत नहीं में प्रतिक्रिया व्यक्त की गयी जबकि स्ववित्तपोषित माध्यमिक शिक्षक–प्रशिक्षक संस्थानों के प्रशिक्षकों की संसाधन एवं सुविधाओं के सम्बन्ध में 60 प्रतिशत ने हां जबकि 40 प्रतिशत ने नहीं में प्रतिक्रिया व्यक्त किया।

शिक्षक–प्रशिक्षण संस्थानों में कार्यरत वित्तपोषित शिक्षक प्रशिक्षकों की पाठ्यचर्या संचालन के सम्बन्ध में 80 प्रतिशत हां एवं 20 प्रतिशत नहीं में प्रतिक्रिया व्यक्त की गयी जबकि स्ववित्तपोषित माध्यमिक शिक्षक–प्रशिक्षक संस्थानों के प्रशिक्षकों की पाठ्यचर्या संचालन के सम्बन्ध में 62 प्रतिशत ने हां जबकि 38 प्रतिशत ने नहीं में प्रतिक्रिया व्यक्त किया।

उक्त विश्लेषण से यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि शिक्षक– प्रशिक्षण संस्थानों के वित्तपोषित प्रशिक्षकों में संसाधन एवं सुविधाएं तथा पाठ्यचर्या संकलन के सम्बन्ध में अभिमत अधिक सकारात्मक है

जबकि उनके अवधि एवं कार्यकारी दिवस, प्रवेशित छात्रों की पात्रता एवं प्रवेश प्रक्रिया के प्रति अभिमत का स्तर न्यून है जबकि स्ववित्तपोषित शिक्षक–प्रशिक्षकों में अवधि एवं कार्यकारी दिवस के प्रति अभिमत अधिक सकारात्मक है जबकि प्रवेश प्रक्रिया, स्टाफ सम्बन्धी, संसाधन एवं सुविधाएं तथा पाठ्यचर्या संकलन के प्रति अभिमत का स्तर न्यून है।

सारणी–2

शिक्षक–प्रशिक्षण संस्थानों में संसाधनों की उपलब्धता के सम्बन्ध में पुरूष एवं महिला प्रशिक्षकों का प्रतिशतमान

क्र0 सं0	आयाम	पुरूष शिक्षक प्रशिक्षक		महिला शिक्षक प्रशिक्षक	
		हां	नहीं	हां	नहीं
1.	अवधि एवं कार्यकारी दिवस	85	15	82	18
2.	प्रवेशित छात्रों की संख्या,पात्रता एवं प्रवेश प्रक्रिया	80	20	75	25
3.	स्टाफ से सम्बन्धित	74	26	68	32
4.	सुविधाएं	70	30	58	42
5.	पाठ्यचर्या संचालन	76	24	80	20

विश्लेषण एवं व्याख्या :

उक्त सारणी के विश्लेषण से स्पष्ट है कि शिक्षक–प्रशिक्षण संस्थानों में संसाधनों के सम्बन्ध में पुरूष प्रशिक्षकों द्वारा संस्थानों में बी0एड्0 कार्यक्रम हेतु प्रशिक्षण की अवधि तथा प्रयोगात्मक एवं सैद्धान्तिक विषयों हेतु कार्य दिवस के सम्बन्ध में 85 प्रतिशत ने हां जबकि 15 प्रतिशत ने नहीं में प्रतिक्रिया व्यक्त की जबकि महिला प्रशिक्षकों में 82 प्रतिशत ने हां जबकि 18 प्रतिशत ने नहीं में प्रतिक्रिया व्यक्त की। शिक्षक–प्रशिक्षण संस्थानों में प्रवेशित छात्रों की संख्या, पात्रता एवं प्रवेश प्रक्रिया की स्थिति समान होने के कारण इसके प्रति महिला एवं पुरूष शिक्षकों के विचारों एवं संसाधनों की स्थिति में समानता दृष्टिगत हुई। इसमें पुरूष प्रशिक्षकों में 80 प्रतिशत ने हां जबकि 20 प्रतिशत ने नहीं में प्रतिक्रिया दी, महिला प्रशिक्षकों में 75 प्रतिशत ने हां जबकि 25 प्रतिशत ने नहीं में प्रतिक्रिया व्यक्त की, संस्थानों में स्टाफ की उपलब्धता से सम्बन्धित स्थितियों के प्रति पुरूष एवं महिला प्रशिक्षकों के विचार समान पाये गये पुरूष प्रशिक्षकों में 74 प्रतिशत ने हां जबकि 26 प्रतिशत ने नहीं में प्रतिक्रिया दी जबकि महिला प्रशिक्षकों में 68 प्रतिशत प्रशिक्षकों ने हां तथा 32 प्रतिशत ने नहीं में, प्रतिक्रिया दी। प्रशिक्षण संस्थानों में सुविधाओं के संदर्भ में पुरूष एवं महिला शिक्षकों के विचारों में अन्तर दृष्टिगत हुआ पुरूष प्रशिक्षकों में 70 प्रतिशत ने हां जबकि 30 प्रतिशत ने नहीं में प्रतिक्रिया दी जबकि महिला प्रशिक्षकों में 58 प्रतिशत ने हां तथा 42 प्रतिशत ने नहीं में प्रतिक्रिया दी, पाठ्यचर्या संचालन के सम्बन्ध में 76 प्रतिशत पुरूष प्रशिक्षकों ने हां एवं 24 प्रतिशत ने नहीं में प्रतिक्रिया दी, जबकि 80 प्रतिशत महिला प्रशिक्षकों ने हां में तथा 20 प्रतिशत प्रशिक्षकों ने नहीं में प्रतिक्रिया व्यक्त की।

उक्त विश्लेषण से यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि शिक्षक– प्रशिक्षण संस्थानों में एन0सी0टी0ई0 के निर्देशों के अनुपालन एवं संसाधनों की उपलब्धता के प्रति पुरूष एवं महिला प्रशिक्षकों के विचारों में अन्तर प्राप्त होता है। प्रवेश की स्थिति, छात्र संख्या व वर्तमान प्रवेश प्रक्रिया के प्रति पुरूष एवं महिला प्रशिक्षकों के विचार समान प्राप्त हुए जबकि स्टाफ की स्थिति के प्रति पुरूष शिक्षक अधिक संतुष्ट दिखे। सुविधाओं के संदर्भ में महिला एवं पुरूष प्रशिक्षकों के विचारों में अन्तर प्राप्त हुआ महिला प्रशिक्षकों द्वारा सुविधाओं की अधिक आवश्यकता अनुभूति की गयी। पाठ्यचर्या संचालन के सम्बन्ध में महिला शिक्षकों का विचार अधिक सकारामत्क था जबकि पुरूष प्रशिक्षकों में समस्यात्मक विचार प्राप्त हुए।

सन्दर्भ :

1. एल0के0 ओड : शिक्षा की दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय पृष्ठभूमि, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर,
2. रमन बिहारी लाल : शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय सिद्धान्त, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
3. डॉ0एस0पी0 गुप्ता एवं डॉ. अलका गुप्ता : आधुनिक भारतीय शिक्षा की समस्यायें, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद
4. जी0सी0 भट्टाचार्य : अध्यापक शिक्षा, वसुन्धरा प्रकाशन, वाराणसी,
5. प्रो0 अरूण कुमार सिंह : उच्चतर मनोवैज्ञानिक प्रयोग एवं परीक्षण पटना, भारती भवन पब्लिकेशन, 2008
6. डी0एन0 सनसनवाल : शैक्षिक तकनीकी एवं प्रबंध, वसुन्धरा प्रकाशन, खीरी लखीमपुर 2004

***

एकल महिलाओं की सामाजिक प्रस्थिति का समाजशास्त्रीय अध्ययन

मीरा देवी *
डॉ. मुहम्मद नईम **

भूमिका :

एकल महिला शब्द महिलाओं के एक ऐसे समूह का अवबोध कराता है जिसके अन्तर्गत वैवाहिक सम्बन्धों से इतर अकेले जीवनयापन करने वाली महिलाओं को लिया जाता है। इसमें वैवाहिक सम्बन्धों से विच्छेदित सभी महिलाओं को सम्मिलित किया जाता है जिनमें विधवा, तलाकशुदा, परित्यक्ता तथा अविवाहित किन्तु विवाह की सीमा की आयु को पार कर चुकी महिलाएँ सम्मिलित होती हैं। भारत में इस तरह का उभरता समूह देश के उस पितृ सत्तात्मक व्यवस्था को चुनौती के स्वरूप में है जो यह मानता है कि देश में महिलाओं का स्थान केवल वैवाहिक सम्बन्ध के आधार पर यौन उत्पीड़न, बच्चे पैदा करना, पुरूषों का ख्याल रखना, परिवार के सभी लोगों की सेवा करना तथा घर की चहारदीवारी में कैद रहकर हर जुल्म और सितम को सहना है। यदि कोई महिला इन व्यवस्थाओं को चुनौती देती है तो उसे शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक रूप से प्रताड़ित व बहिष्कृत करने तक की सजा दे दी जाती है। किसी महिला के पति के मृत्यु होने पर या पति द्वारा त्याग देने पर सारा दोष उसी पर मढ़ दिया जाता है कि वह कुलक्षणी या चरित्रहीन है।

एकल महिलाओं को समाज की उस विकृत मानसिकता की चुनौती के रूप में लिया जा रहा है जिसमें उन्हें समाज व परिवार की नजर में अभिशप्त माना जाता है और एकल होने पर समाज की नजर में उसकी गरिमा को बार–बार उछाला जाता है। यदि कोई स्त्री स्वेच्छा से वैवाहिक जीवन व्यतीत नहीं करना चाहती है तो उसे समाज आशंका की दृष्टि से देखता है। समाज एवं पुरूष की इस रूढ़िवादी एवं संकीर्ण मानसिकता को चुनौती देती एकल महिलाएँ देश में एक नयी व्यवस्था को उत्पन्न कर रही हैं। यह स्थिति अब केवल शहरों में विद्यमान न रहकर ग्रामीण क्षेत्रों तक विस्तारित हो रही है। देश में एकल महिलाओं की संख्या उनकी आबादी का लगभग 10 प्रतिशत से कम है किन्तु अब इसमें निरन्तर बढ़ोत्तरी हो रही है। वर्ष 2011 में महिलाओं की आबादी जहाँ 18 प्रतिशत बढ़ी है वहीं एकल महिलाओं में 40 प्रतिशत बढ़ी है।

एकल महिलाओं की सामाजिक प्रस्थिति :

एकल महिलाओं को समाज के उस सांस्कृतिक मानदण्ड का प्रतिरोध माना जाता है जो स्त्री–पुरूष के वैवाहिक सम्बन्धों को सामाजिक संरचना का आधार मानती हैं। यदि कोई महिला समाज द्वारा निर्धारित मान्यताओं के अनुरूप वैवाहिक सम्बन्धों को अस्वीकृति प्रदान करती है या घरेलू हिंसा, प्रताड़ना, अत्याचार या विभेदों का प्रतिकार करके इस बन्धन से मुक्त रहना चाहती है तो उसे समाज गलत नजरिये से देखता है और उसे मान्यता नहीं प्रदान करता है। समाज में विधवा, तलाकशुदा एवं परित्यक्त महिलाएँ यदि परिवार से अलग एकल जीवन व्यतीत करती हैं तो उन्हें समाज में समुचित सम्मान नहीं मिल पाता है। समाज के ढांचे को रूढ़वादिता एवं कुत्सित मानसिकता के जकड़न के कारण एकल महिला सम्प्रत्यय को इसकी स्वीकृति नहीं प्राप्त हो पा रही है। आज भी एकल जीवनयापन के लिये इच्छा रखने वाली महिलाओं के साथ समाज इतनी द्वितीयक एवं विभेदपूर्ण व्यवहार करता है कि वह इससे मुक्त होने के लिए छटपटा उठती है। कभी–कभी तो उसके जीवन को ही समाप्त करने का प्रयास कर दिया जाता है।

नेशनल फोरम फॉर सिंगल वीमेन राइट के अनुसार वे महिलाएँ जो शादी या शादी जैसे किसी रिश्ते के साथ अन्य व्यक्ति के साथ नहीं रह सकती हैं, एकल महिलाएँ कहलाती हैं। एकल महिलाएँ

---

* शोधार्थिनी, समाजशास्त्र, डॉ. बी.आर. अम्बेडकर समाज विज्ञान संस्थान, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झांसी
** सहायक आचार्य, समाज कार्य विभाग, डॉ. बी.आर. अम्बेडकर समाज विज्ञान संस्थान, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झांसी (उ.प्र.)

समाज की उस मानदण्ड के विपरीत हैं जो उन्हें किसी न किसी पुरूष के संरक्षण में रखने की बात करता है। एकल महिलाएँ वे हैं–

- जो विधवा हैं।
- जो पुरूष से अलग रह रही हैं जैसे परित्यक्ता, घर से निकाल दी गयी, छोड़ दी गयी या खुद ससुराल और पति को छोड़कर आयी या तलाकशुदा आदि।
- वे महिलाएँ जो नौकरी या काम के लिए दो या दो से अधिक साल से ज्यादा अपने पति से अलग रह रही हैं।
- वे महिलाएँ जो अविवाहित एवं बुजुर्ग हो गयी हैं।
- 35 वर्ष की उम्र पार कर चुकी अविवाहित लड़कियाँ जो अकेली रह रही हैं।
- एकल माताएँ।
- लापता पुरूषों की पत्नियां जो मायके या ससुराल की मदद के बगैर अपना जीवनयापन कर रही हैं।

वर्ष 2011 की जनगणना में एकल महिलाओं की संख्या 5 करोड़ थी जो वर्तमान में लगभग 15 करोड़ से अधिक हो चुकी है। अद्यतन आंकड़ों के अनुसार देश में एकल महिलाओं की संख्या कुल महिला आबादी का लगभग 9 प्रतिशत है तथा इनकी वृद्धि दर 29.6 प्रतिशत है। पिछले 10 वर्षो में बुजुर्ग, विधवा और 35 वर्ष से अधिक अविवाहित महिलाओं की संख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है। 35 वर्ष से अधिक की उम्र की अविवाहित लड़कियों की संख्या करीब 66 प्रतिशत तक बढ़ी है।

एकल महिला के प्रति सामाजिक सहानुभूति एवं सहयोग के स्थान पर उन्हें किसी न किसी रूप में प्रताड़ित किया जाता है जिसका प्रभाव उनकी मनोवृत्ति या परिस्थितियों से लड़ने के प्रति घटते मनोबल के रूप में आती है। यद्यपि वर्तमान समाज में इस तरह की परिस्थितियों से लड़ने और समाज के तथाकथित वर्ग को चुनौती देते हुए एकल महिलाएँ समाज में अपनी भागीदारी एवं अपने कार्य के द्वारा अपनी स्वीकर्यता सुनिश्चित कर रही हैं। एकल महिलाओं द्वारा आधुनिक समाज व्यवस्था को पुरानी मान्यताओं, रूढ़ियों एवं विचारधाराओं से मुक्त करने के लिए निरन्तर प्रयास किया जा रहा है। एकल महिलाएँ शिक्षा, रोजगार, स्वावलम्बन एवं अपने विकास के द्वारा समाज को सोचने पर विवश कर रही हैं। उनके द्वारा विभिन्न परिस्थितियों में अपने चिन्तन के प्रति विश्वस्त रहते हुए समाज को अपने योगदान से प्रभावित किया जा रहा है। देश के महत्वपूर्ण पदों एवं विभागों में एकल महिलाओं ने अपना विशिष्ट स्थान हासिल किया है किन्तु भारत जैसे पितृ सत्तात्मक समाज वाले देश में एकल महिलाओं की चुनौतियाँ कम नहीं हुई हैं। विश्व बैंक की एक रिपोर्ट के अनुसार भारत की महिला कार्य बल भागीदारी दक्षिण एशिया में सबसे कम है सिर्फ 24 प्रतिशत महिलाएँ ही विभिन्न व्यवसायिक क्षेत्रों में कार्य कर रही हैं। **पारूल चौधरी** के अनुसार एकल महिलाओं के लिए मुख्य मुद्दा जीवित रहने में सक्षम होना और गरिमा के साथ जीवित रहने में सक्षम होना है उनकी संस्था नेशनल फोरम फॉर सिंगल ओमन राइट देश के बारह राज्यों की एकल महिलाओं के लिए राष्ट्रीय मंच पर उन्हें स्थापित करने के लिए प्रयासरत है।

भारतीय समाज व्यवस्था में एकल महिलाओं को हेय और उपेक्षित दृष्टि से देखा जाता है तथा उन्हें चारित्रिक, नैतिक एवं धार्मिक दृष्टि से अयोग्य घोषित किया जा रहा है। इससे एकल महिलाओं को अनेक मनोसांवेगिक व सामाजिक परेशानियों से जूझना पड़ता है। उनके समक्ष इस प्रकार की समस्याएँ व चुनौतियाँ समाज द्वारा प्रस्तुत की जाती हैं जिनका सामना करना अत्यन्त कठिन होता है। उन्हें हिंसा, शोषण व विभिन्न गैर सामाजिक स्थितियों से गुजरना पड़ता है। विशेषकर घरेलू एवं असंगठित क्षेत्र में कार्य करने वाली, समाज के निम्न मध्यम एवं निम्न वर्गो में उत्पन्न व शहरी क्षेत्र के स्लम एरिया की एकल महिलाओं के लिए यह चुनौतियाँ विशेष रूप से दृष्टिगत होती हैं।

विश्व के विभिन्न देशों में जहाँ एकल महिलाओं की संख्या और उनकी सामाजिक स्थिति अत्यन्त मजबूत है, वहीं भारत में उन्हें अत्यन्त निम्न श्रेणी में रखा जाता है। प्रयत्न फाउण्डेशन के एक अध्ययन के अनुसार एकल महिलाओं के लिए आर्थिक एवं सामाजिक परिस्थितियों में बदलाव हेतु उन्हें

कानूनी अधिकार के साथ–साथ सामाजिक सोच में बदलाव के लिए ऐसे प्रावधान किये जाने की जरूरत है जो सामाजिक पूर्वाग्रहों को दूर कर इन महिलाओं के लिए सही सोच का विकास कर सके।

जागोरी सस्था नई दिल्ली के अनुसार एकल औरतें चाहे हिन्दू धर्म की हों य मुस्लिम, चाहे वे अमीर हों या गरीब सभी को गैर बराबरी का दंश झेलना पड़ता है। इन्हें विभिन्न रूपों में समस्याएँ झेलना पड़ता है कानूनी और सामाजिक मान्यता व सामाजिक सुरक्षा न होने के कारण उन्हें नरकीय स्थिति से गुजरना पड़ता है। इस संस्था की मुख्यकर्ता **कमला भसीन** के अनुसार अकेली औरत के दर्द को अकेली औरत ही समझ सकती है। ये डोर ही अनोखी है जो हर एकल पीड़ित महिला को दूसरी एकल पीड़ित महिला से जोड़ती है। एकल महिला का दर्द किसी अन्य महिला अथवा विकृत मानसिकता वाला पुरूष समाज नहीं समझ सकता है।

निष्कर्ष :

निष्कर्षतः एकल महिलाओं की सामाजिक प्रस्थिति भारतीय समाज व्यवस्था में अत्यन्त न्यून एवं हेयात्मक बनी हुई है। यद्यपि एकल स्त्रियाँ इस व्यवस्था को चुनौती प्रदान कर रही हैं तथा निरन्तर समाज की मानसिकता का परवाह किये बिना आगे बढ़ रही हैं। वे आज सामाजिक क्षेत्र के साथ–साथ राजनैतिक एवं व्यवसायिक क्षेत्र में काफी आगे बढ़ चुकी हैं। एकल महिलाएँ समाज की मानसिकता को चुनौती देते हुए जीवन लक्ष्य को आगे बढ़ा रही हैं। यद्यपि समाज उनके प्रति द्वितीयक व्यवहार रखता है तथा उन्हें समुचित मान्यता नहीं दे रहा है लेकिन फिर भी वे अपने कार्य एवं योगदान से समाज को इस पर सोचने के लिए मजबूर कर रही हैं कि उनका एकल जीवन समाज के लिए बोझ नहीं है बल्कि समाज के उत्थान में सहायक है। विभिन्न सामाजिक अध्ययनों एवं विश्लेषणों से यह पूर्ण प्रमाणित हो चुका है कि एकल महिलाएँ बेहतर जीवन एवं उन्नति के लिए कार्य कर सकती हैं तथा समाज को नई दिशा एवं विचार दे सकती हैं किन्तु समाज को इस पर अपना सकारात्मक रवैया अपनाते हुए उनके लिए समुचित स्थान एवं महत्व देने की जरूरत है।

सन्दर्भ :

1. गाँधी, एम0के0 (2016) : ग्राम स्वराज, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली.
2. वर्मा, डॉ0 सवालिया बिहारी (2011) : ग्रामीण पंचायतीराज संस्थाएं, युनिवर्सिटी पब्लिकेशन. नई दिल्ली।
3. श्रीनिवास, एम0एन0 (1961) : इण्डियाज विलेज, एसिया पब्लिसिंग हाउस, बाम्बे।
4. अल्तेकर, ए0एस0 (1948) : प्राचीन भारतीय शासन पद्धतियाँ, भारतीय भण्डार, इलाहाबाद।
5. विद्यालंकर, सत्यकेतु (2011) : प्राचीन भारत की शासन पद्धति और राजतन्त्र, श्री सरस्वती सदन, नई दिल्ली।
6. सिंह, डॉ0 वी0पी0 (1992) : ग्राम पंचायत में जन सहभागिता, विजय प्रकाशन मन्दिर, वाराणसी।
7. भावे, विनोबा (1950) : सर्वोदय योजना, वर्धा, महाराष्ट्र, 30 जनवरी.
8. www.livehindustan.com news 20 October 2009.
9. www.trashi.net 15 May 2015
10. https//wcd.nic.in 10 August 2015

***

शिक्षक असन्तोषः एक समस्यात्मक समाजशास्त्रीय अध्ययन (स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों के विशेष संन्दर्भ में)

डॉ. दिलीप कुमार *

शिक्षक राष्ट्र का निर्माता होता है, क्योंकि जिस तरीके का शिक्षक होता है उसी तरीके से भावी युवा पीढ़ी का निर्माण होता है। अच्छा शिक्षक अच्छे राष्ट्र का निर्माण करता है। इसका आशय शिक्षक में अच्छे व्यवहार, अच्छे विचार, अच्छी नैतिकता तथा अच्छा विषय का ज्ञान एवं अच्छी बुद्वि की तार्किक क्षमता और हर परिस्थितियों से समान्जस्य करने की क्षमता से है। यदि शिक्षकों में चारित्रिक दृढ़ता एवं नैतिकता के मूल्यों का समावेश है तो निःसंदेह एक स्वस्थ्य राष्ट्र की कल्पना करने में हम सफल होंगें। परन्तु यदि शिक्षकों की मानसिकता दूषित व रूग्ण है या नैतिक मूल्यों का अभाव है तो यह देश का सबसे बड़ा दुर्भाग्य है। इस स्थिति में विकास केवल कल्पना ही रह जायेगा। जिसे यथार्थ रूप नहीं दिया जा सकता है।

भारत में सन 1999 से सरकार द्वारा यह देखा गया की उच्च शिक्षा ग्रहण करने वाले छात्र एवं छात्राओं की संख्या दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। जिसके परिणाम स्वरूप सवित्तपोषित एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों के स्थापना की योजना बनायी गयी जिससे देश के विभिन्न क्षेत्रों में सवित्तपोषित महाविद्यालय खुले। बाद में ऐसे महाविद्यालयों को मान्यता देना बन्द कर दिया। इस स्थिति में स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों को मान्यता देने का प्रावधान बनाकर मान्यता देना शुरू कर दिया। जिसमें इन्टरमीडिएट कक्षा को पास कर छात्र एवं छात्रा उच्च शिक्षा ग्रहण करने के उद्देश्य से प्रवेश लेकर अध्ययन करने लगे। हमने एक अनुसंधानकर्ता के रूप में इसी स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों के सम्बन्ध में अध्ययन करने का प्रयास किया है।

इस प्रकार इन महाविद्यालयों में शिक्षकों की आवश्यकताएं पड़ी। इस स्थिति में बेरोजगारी की मार झेल रहें युवा बेरोजगार उच्च शिक्षा ग्रहण कर शिक्षक बनने का प्रयास करने लगा। इन शिक्षकों द्वारा जो डिग्री एवं उपाधियाँ प्राप्त की गई हैं वह एम0फिल्0,पीएच0डी0 तथा नेट है। मान्यता प्राप्त स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में ऐसे लोग शिक्षक बन सकते है जिनके पास उपर्युक्त उपाधि का प्रमाण पत्र है। कालान्तर में इन महाविद्यालयों में शिक्षण कार्य करने के उद्देदश्य से महाविद्याय के प्रबन्धकों द्वारा नियुक्ति के लिए विज्ञापन निकाल कर विश्वविद्यालय द्वारा नियुक्त परीक्षक से साक्षात्कार करवा कर योग्य डिग्रीधारी अभ्यर्थी की नियुक्ति के लिए संस्तुति करता है। जिसके अधार पर विश्वविद्यालय में अनुमोदन होकर, अनुमोदन पत्र महाविद्यालय के प्रबन्धक के पास सम्बद्व विश्वविद्यालय द्वारा प्रेषित किया जाता है। तत्तपश्चात प्रबन्धक अभ्यर्थी को नियुक्ति प्रदान करने के लिए आहूत करता है। तब प्रबन्धक अभ्यर्थी को नियुक्ति प्रदान करता है। जिसे शिक्षण कार्य की जिम्मेदारी सौंपी जाती है।

स्वावित्तपोषित महाविद्यालयों में इन सहायक प्रोफेसरों की नियुक्ति संविदा के के अधार पर 3 या फिर 5 वर्षो के लिए की जाती है इन शिक्षकों को वेतन एवं सुविधाओं के सम्बन्ध में सन् 2000, 2005 एवं 2013 में उच्च द्वारा जो नियम या विधान बनाया गया। उसे सभी महाविद्यालयों के प्रबन्धक एवं प्रचार्य को लागू करने के लिए कहा। जिस शासनादेश में बताया गया है कि 15600 से 39100 रू0 वेतन प्रत्येक अनुमोदिन शिक्षक को देना होगा। इस प्रकार 75 से 80 प्रतिशत विभिन्न पाठ्यक्रमों से प्राप्त शुल्क धनराशि शिक्षकों के वेतन पर व्यय की जायेगी। ज्ञातव्य है कि यू0जी0सी0 के नियमावली में कहा गया है कि महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय के नियमित शिक्षकों को जो सुविधाएं प्राप्त हैं। ऐसी सुविधाएं स्ववित्तपोषित महाविद्यालय के शिक्षकों को प्रदान की जानी चाहिए। लेकिन महाविद्यालय की स्थापना करने वाले प्रबन्धक इस पर ध्यान न देकर उन्हें कम से कम वेतन देकर शिक्षण कार्य करवाना चाहते है। 5000 रूपये से लेकर 10000 रूपये तक महाविद्यालय के प्रबन्धकों द्वारा वेतन के रूप में

* असिस्टेन्ट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, भानमती स्मारक पी.जी. कालेज अकबरपुर अम्बेडकरनगर।

दिया जाता है। इसी क्रम में महाविद्यालय के प्रबन्धक द्वारा विश्वविद्यालय द्वारा प्रस्तावित अवकाश भी नहीं दिया जाता है। जो शिक्षक उत्तर पुस्तिकाओं के केन्द्रीय मूल्यांकन कार्यों के लिए विश्वविद्यालय जाना चाहते हैं उन्हें नहीं जाने दिया जाता। जिसके कारण स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों के शिक्षकों में बहुत बड़ा असंतोष उभरा है। जो आज के शैक्षणिक जगत की एक जटिल एवं ज्वलन्त समस्या बनी हुई है। जो एक सामाजिक समस्या का रूप धारण कर चुकी है।

वर्तमान समय में शिक्षकों के असन्तोष की परिस्थियाँ–

आज वर्तमान समय की सबसे बड़ी समस्या युवा बेरोजगारी एवं शिक्षित बेरोजगारी की है। जो असन्तोष अपने चरम सीमा को पार कर चुकी है। हर शिक्षित एवं शिक्षा ग्रहण करने वाले युवा अपने जीवकोपार्जन के लिए किसी इच्छित नौकरी की तलास करता है। लेकिन जब उसे इच्छित कार्य नहीं मिल पाता है और उसमें वह कार्य करने की क्षमता भी है तो वह बेरोजगार कहलाता है। इस संदर्भ में सरकार भी बेरोगारों पर विशेष ध्यान नहीं दे रही है। जिसका यह नैतिक दायित्व होता है कि अपने सभी नागरिकों के लिए रोजगार की व्यवस्था करें। परिणाम स्वरूप जीविका संचालित करने के लिए शिक्षित युवा किसी भी रोजगार की तलास करता है। तथा धनोपार्जन कर जीविका चलाना चाहता है। इस प्रकार उच्च शिक्षा प्राप्त कर उच्च डिग्रीधारी युवा सरकारी नौकरी ना प्राप्त कर पाने की वजह से स्ववित्तपोषित महाविद्यालय का शिक्षक बन जाता है। ऐसे शिक्षकों में जोश है, उफान, उत्साह है तथा कुछ कर गुजरने की लालसा है। लेकिन इन शिक्षकों को जो उनके कार्य के बदले वेतन मिलता है। तथा उस वेतन से उनकी प्राथमिक आवश्यकताएं पूरी नहीं हो पाती। जिससे परिवार तथा समाज सम्बन्धी दायित्वों को भी पूर्ण नहीं कर पाता। इससे बहुत हद तक वह टूटा हुआ दिखाई दे रहा है। परिणाम स्वरूप शिक्षकों में असुन्तुष्टता जाहिर हो रही है।

स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों के शिक्षकों की असन्तुष्टता का कारण–

उच्च शिक्षा ग्रहण कर एम0फिल्0,पीएच0डी0 तथा नेट परीक्षा उत्तीर्ण डिग्रीधारी व्यक्ति जब स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में शिक्षक बनकर अध्यापन कार्य करने लगता है। इस कार्य के बदले जब उसे सन्तोष जनक वेतन नहीं मिलता तब उसमें निराशा, कुण्डा, एवं हीनता जग्रित होता है। यह भी विचार आता है कि हम भारत के नागरिकों के लिए भारतीय संविधान द्वारा सामान कार्य के लिए समान वेतन का विधान बनाया गया है। इस प्रकार विश्वविद्यालयों, राजकीय महाविद्यालयों एवं अनुदानित महाविद्यालयों में शिक्षकों को जो सुविधाएं है तथा नियमित वेतन प्राप्त कर रहें हैं। उनके वेतन के बराबर क्या स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों के शिक्षकों को उनके वेतन का आधा भी पारिश्रमिक के रूप में प्राप्त नहीं हो पाता। परिणाम स्वरूप शिक्षकों के असन्तोष का प्रमुख कारण बनता जा रहा है। जिससे उच्च शिक्षा एवं उच्च शिक्षा ग्रहण करने वाले विद्यार्थी प्रभावित हो रहे हैं। इसके अलावा जो अन्य कारण असन्तुष्टता का जाहिर होता है वह निम्नलिखित है–

1. समान कार्य तो समान वेतन के सिद्वान्त पर वेतन न मिल पाना।
2. वेतन का समय से न मिल पाना।
3. महगाई की अपेक्षा वेतन में बृद्वि न हो पाना।
4. शिक्षकों के वेतन में विसंगति होना।
5. शिक्षकों की राय एवं शिकायतों की अवमानना करना ।
6. शिक्षकों की योग्यता को दरकिनार कर उनसे कार्यालय के कार्यो को करवाना।
7. विश्वविद्यालय की अवकाश सूची के अनुसार अवकाश न मिल पाना।
8. विश्वविद्यालय के मूल्यांकन कार्यो में भेद से असन्तुष्टता।
9. अनुभव एवं योग्यता होने के बाद भी शोध निर्देशक न बन पाना।
10. प्रबन्धक के दुर्व्यवहार से शिक्षकों में असन्तुष्टता।
11. योग्यता एवं मानक के अनुसार वेतन के अभाव से असन्तुष्टता।
12. शिक्षित समाज में हेय दृष्टि से असंन्तुष्टता।
13. महाविद्यालय में पठन–पाठन सामाग्री के पूर्णता अभाव से असंन्तुष्टता।

14. शिक्षकों को अतिरिक्त योग्यता को प्राप्त करने में अवकाश का अभाव।
15. शिक्षकों द्वारा अनवरत या सतत चलने वाले व्याख्यान से असंन्तुष्टता।
16. प्रबन्धकों के दबाव से शिक्षकों द्वारा मुख्य परीक्षा मे नकल कराने से असन्तुष्टता।
17. महाविद्यालय में राजनितिक प्रभाव से प्रभावित होने से शिक्षक असंतुष्टता।

शिक्षकों के असन्तोष का दुष्परिणाम एवं प्रभाव–

वर्तमान स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में शिक्षक असुन्तुष्टता से जो दुष्परिणाम उत्पन्न होता है। वे निम्ननिखित है–

1. शरीरिक बीमारियाँ एवं मानसिक तनाव का उत्पन्न होना।
2. स्थाई शिक्षकों की अपेक्षा स्ववित्तपोषित महाविद्यालय के शिक्षकों का समाज में कम सम्मान।
3. अपने उत्तरदायित्वों का सही निर्वहन न कर पाना।
4. उसका अपने जीवन काल में सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति का निम्न रह जाना।
5. दोहरी शिक्षा प्राप्त करने की इच्छा जागृत होना।
6. कई विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों में अनुमोदित होकर कागजी रूप में शिक्षण कार्य करना।
7. परिवार में कलह एवं पारिवारिक असन्तोष उत्पन्न होना।
8. शिक्षकों में स्थायित्व न रहने से सदैव भय व्याप्त रहना।

अध्यन की समस्या–

वर्तमान स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों की शिक्षा व्यवस्था के अनुसार शिक्षकों का भविष्य अन्धकारमय प्रतीत होता है। जिससे शिक्षकों में निराशा, कुण्डा, असन्तोष तथा नैतिक पतन की असंका बनी रहती है। जो एक सामाजिक समस्या का रूप धारण कर चुकी है। जिससे निजात पाना आवश्यक है।

अध्ययन की आवश्यकता–

स्ववित्तपोषित महाविद्यालय के शिक्षकों में असन्तोष की समस्या सम–सामयिक समस्याओं में से एक ज्वलन्त समस्या है। जो समाज में सामाजिक विघटन उत्पन्न करता है। इस प्रकार जब समाज के उच्च शिक्षित एवं बुद्विजीवी वर्ग असन्तुष्ट रहेंगे तो समाज का सही एवं संतुलित विकास असम्भव होगा। स्वस्थ्य शिक्षक तो स्वस्थ्य राष्ट्र की कल्पना अधूरी रह जाएगी। जिसके लिए अध्ययन की अवश्यकता महसूस की गई है।

अध्ययन का महत्व–

कोई भी शोधकार्य नवीन ज्ञान की प्राप्ती के लिए, समस्याओं का हल निकालने के उद्देश्य से तथा सिद्वान्तों के निर्माण के लिए किया जाता है। प्रस्तुत अध्ययन शिक्षक असंतोष स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों के शिक्षकों के लिए कितना उपयोगी एवं महत्वपूर्ण सिद्व होगा। उसकी इस प्रकार की स्थितियों में कितना सुधार किया जा सकता है। जिससे उसकी मूलभूत सुविधाओं में बृद्वि हो सके। इनका जीवन स्तर ऊँचा उठ सकेगा। स्वस्थ्य राष्ट्र का निर्माण हो सके। इन सबको जानने में यह अध्ययन महत्वपूर्ण सिद्व होगा।

शोध सहित्य समीक्षा–

शिक्षक असंतोष वर्तमान समय की जटिल ज्वलन्त एवं एक गम्भीर समस्या है। जिसके सम्बन्ध में कुछ विद्वानों द्वारा जो अध्ययन किया जा चुका है। या अपने विचार दिये जा चुके है वे निम्नलिखित विन्दुओं के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है–

सिंह, रिपु सूदन ने (इण्टरनेट डाटा–18.03.2018)[1], बदलते परिदृष्य में शिक्षक, शीर्षक पर अपने विचार व्यक्ति किया है और कहा कि गौरतलब है कि देश की बदलती हुई आर्थिक स्थिति और कानूनों से शिक्षा प्रभावित हुई है और स्वभाविक है कि जब शिक्षा प्रभावित होगी तो शिक्षक भी उससे प्रभावित हुए विना नहीं रहेगा। भूमंडलीकरण के चलते आर्थिक परेशानियों की दुहाई देकर सरकारी शिक्षा के क्षेत्र से अपने हाथ पीछे खींच रही है। नब्बे के दशक और नई सदी के प्रथम दशक में निजीकरण के तहत स्कूली और उच्च शिक्षण संस्थाओ की संख्या में भारी इजाफा हुआ है। यदि इसे

एक आर्थिक सच्चाई मानकर स्वीकार किया जाए तो इसमें बहुत–सी सकारात्मक बातें भी देखी जा सकती है। इसका सबसे बड़ा सकारात्मक प्रभाव यह हुआ कि शिक्षा उन जगहों तक भी पहुच गई जहां कोई सोच भी नहीं सकता था। न ही सरकारें इसे कर पाने में सक्षम हो पा रहीं थीं। दूसरा फायदा यह कि इस दबाव से शिक्षकों कि भूमिका और बढ़ गई है, जिसे सकारात्मक दिशा में ले जाकर नए रास्तों की तलाश की जा सकती है।

जिग्यासु, जयन्त ने (इण्टरनेट डाटा–18.03.2017)[2] भारतीय उच्च शिक्षा की चुनौतियाँ शीर्षक पर लिखा है कि हमारे यहाँ चारों तरफ अनास्था का माहौल पनप रहा है। गुरू–शिष्य संम्बन्ध का महत्व घट रहा है। उच्च शिक्षा की स्थिति बेहतर बनाने के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग का गठन हुआ जो जरूरत पर आज कुलपति का दायित्व संभाल रहा व्यक्ति भी अपने पद की गरिमा के साथ न्याय नहीं करता। कुछ लोग जेल जा चुके है और कुछ जाने की राह पर है। अगर स्थिति यही रही, तो विश्वविद्यालय जैसी स्वायन्त संस्था की विश्वसनीयता संदेहास्पद होती चली जायेगी। आज शिक्षा पर सकल घरेलू उत्पाद का जितना प्रतिशत खर्च होना चाहिए। वो नहीं हो पा रहा है। बतौर भारत सरकार के उच्च शिक्षा सचिव, अशोक ठाकुर "शोध पर 0.8 प्रतिशत खर्च हो रहा है, जबकि कम से कम 2 प्रतिशत खर्च होना चाहिए, रक्षा और अन्य मंत्रालयों का बजट लम्बा–चौड़ा होता है, पर शिक्षा की अनदेखी होती है। समय पर प्रध्यानाध्यापकों को वेतन नहीं मिलता, फलतः हड़ताली संस्कृति विकसित होती चली जा रही है, जिसका खामियाजा अन्ततः छात्रों को भुगताना पड़ता है। शिक्षा ब्रिटेन में इसे शिक्षा और कौशल मंत्रालय, तथा ऑस्ट्रेलिया में शिक्षा, रोजगार व कार्यस्थल सम्बन्ध मंत्रालय कहा जाता है।

सुभाशीष, एस0 ने (इण्टरनेट डाटा–18.03.2018)[3] शिक्षा और नैतिक मूल्यों पर निबन्ध शीर्षक पर अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा है हम देखते है कि मूल्यों में हास होने से समाज में हर प्रकार के अपराध बढ़ रहे हैं। हम यह भी देखते है कि मूल्य विहीन समाज में असंतोष फैल रहा है। बेकारी के बढ़ने से युवक असंतोष जैसी कई प्रकार की चुनौतियाँ खड़ी दिखई देती है। छोटे से बड़े नौकरशाह निकम्मेपन और भ्रष्टाचार के अन्धकूप में डुबकियाँ लगा रहे हैं, उन्हे समाज या राष्ट्र की कोई परवाह नहीं।

इन परिस्थतियों में आत्ममंथन अनिवार्य हो जाता है। क्या हमारी शिक्षा प्रणाली दोषपूर्ण है? यदि शिक्षा व्यवस्था त्रुटिहीन है तो निश्चित ही व्यक्तियों में दोष है। आखिर कहीं ना कहीं शीर्षासन चल ही रहा है जो गलत को सही और सही को गलत ठहरने पर आमादा है।

यदि शिक्षा प्रणाली पर गहराई से दृष्टिपात करें, तो सरकारी तौर पर ही इसकी कमियाँ परिलक्षित हो जायँगी। हमारे देश के आधे से अधिक शिक्षित व्यक्तियों के सामने कोई लक्ष्य नहीं है? उनके सामने अंधेरा ही अंधेरा है।

मण्डल, प्रमोद कुमार ने (इण्टरनेट डाटा–18.03.2018)[4] छात्र असंतोष शीर्षक पर अपना विचार व्यक्त किया है। और कहा है कि छात्रों में असंतोष के मुख्य कारण है। अध्यापक और राजनेता हैं। अध्यापक अपने कर्तव्य का पालन नहीं करते जिससे छात्रों का मार्गदर्शन सही तरीके से नहीं हो पाता। स्कूलों के शिक्षक और विद्यार्थियों के अनुपात में भी बड़ा अंतर दिखता है। एक कक्षा में इतने ज्यादा विद्यार्थी होते है की शिक्षक और छात्र में संवाद स्थापित नहीं हो पाता या एक ही कमरे में कई कक्षा को बैठाया जाता है। परीक्षा पद्धति असफल हो गयी है गाइड, नोट्स पढ़कर छात्र किसी तरह सफल हो जाते हैं।

ये सभी तत्व विद्यार्थियों में विरोध की पृष्ठभूमि तैयार करता है। स्कूल में छात्र अपना विरोध प्रकट नहीं कर पाते हैं कॉलेज में पहुचते ही छात्र संघ स्थापित स्थापित हो जाते है। इस संघ के माध्यम से छात्र अपना विरोध प्रकट करते है यह छात्र संघ किसी न किसी विचारधारा से प्रभावित होते है।

मरियम, एस0 ने, (इन्टरनेट डाटा–18.03.2018)[5] युवा वर्ग में बढ़ता असंतोष पर निबन्ध शीर्षक पर अपने विचारो का प्रतिपादन किया है। कुछ तो हमारे देश की वर्तमान परिस्थितियाँ इसके लिए

उत्तरदायी हैं तो कुछ उत्तरदायी हमारी त्रुटिपूर्ण राष्ट्रीय नीतियाँ एवं दोषपूर्ण शिक्षा पद्धति का भी है। अनियंत्रित रूप से बढ़ती जनसंख्या के फलस्वरूप उत्पन्न प्रतिस्पर्धा से युवा वर्ग में असंतोष की भावना उत्पन्न होती है। जब युवाओं के हुनर का कोई राष्ट्र समुचित उपयोग नहीं कर पाता है तब युवा असंतोष मुखर हो उठता है। परिणामस्वरूप देश में बेकारी की समस्या दिनो–दिन बढ़ रही है। शिक्षा पूरी करने के बाद लाखों युवक रोजगार की तलास में भटकते रहते हैं जिससे उनमें निराशा, हताशा, कुंण्ठा एवं असंतोष बढ़ता चला जाता है। देश में व्याप्त भ्रष्टाचार से भी युवा वर्ग पीड़ित हैं।

विजनौर टूडे दैनिक समाचार पत्र (22.03.2018)[6] में, स्वावित्तपोषित डिग्री कालेजों की मनमानी पर रोक, शीर्षक पर लिखा गया है कि मा0 उच्च न्यायालय पूर्व की अन्य बातों को ध्यान में रखते हुए स्पष्ट किया है कि प्रबन्धतंत्र शिक्षक को पदमुक्त करने में अपनी मनमानी नहीं कर सकता है। इसके लिए प्रबन्धतन्त्र को विश्वविद्यालय की परिनियरमावली 1973 की धारा 35 (2) को निहीत विधिक प्रक्रिया को पूर्ण करना होगा। इसका अर्थ है कि अब स्ववित्तपोषित डिग्री शिक्षक को पद से हटाये जानें हेतु समान प्रक्रिया होगी। यही नही मा0 उच्च न्यायालय ने अपने इतिहासिक निर्णय में शिक्षक की परिभाषा करते हुए स्वापित्तपोषित डिग्री कालेजों पाठ्यक्रमों के शिक्षकों को पद से हटाये जाने हेतु समान प्रक्रिया होगी। यही नहीं मा0 उच्च न्यायालय ने अपने ऐतिहासिक निर्णय में शिक्षक की परिभाषा करते हुए स्वावित्तपोषित डिग्री कालेजों पाठयक्रमों के शिक्षकों को भी अनुदानित डिग्री कालेजों के शिक्षकों के समान माना है।

यहाँ यह भी बताते चले कि उच्चतर शिक्षा सेवा चयन आयोग उत्तर प्रदेश से सूवना का अधिकार अधिनियम 2005 के अर्न्तगत प्राप्त सूचना के अनुसार न तो स्वावित्तपोषित डिग्री कालेज की श्रेणी में आते थे, और न ही इस अवस्था के अन्तर्गत कार्यरत शिक्षकों को शिक्षक माना जाता था। इस प्रकार स्ववित्तपोषित शिक्षक अध्यापन अनुभव से भी वंचित रहता था। सेवा से सम्बंधित अनिवार्यता समाप्त कर ऐसे शिक्षकों को सम्पूर्ण ऊर्जा के साथ गुणवत्ता परक शिक्षा का प्रयास कर सकेगा।

अवधारणात्मक व्याख्या–

शिक्षा देने वाले को शिक्षक एवं शिक्षिका कहा जाता है, जो पुलिंग एवं स्त्रीलिंग दोनों को इंगित करता है। शिक्षक ज्ञान, समृद्धि और प्रकाश का एक बड़ा स्रोत है। जिससे कोई भी व्यक्ति जीवन भर के लिए लाभ प्राप्त कर सकता है। शिक्षक वह है जो विद्यार्थी की हर गलती को क्षमा कर उसकी विभिन्न कमजोरियों को दूर कर उसको सफलता के शिखर तक ले जाता है।

स्ववित्तपोषित शिक्षक–

यह एक ऐसे शिक्षक है जिनके व्याख्यान या फिर शिक्षा देने के बदले सरकार द्वारा कुछ भी सुविधाएं प्रदान नहीं किया जाता है। ये ऐसे शिक्षक होते है जिन्हें विद्यालय या महाविद्यालय का प्रबन्धतंत्र अपने आय के आधार पर कम से कम वेतन देकर अधिक से अधिक कार्य करवाना चाहता है। ऐसी स्थित में इस प्रकार के शिक्षकों में असंतोष व्याप्त होता है।

असन्तोष–

जब किसी व्यक्ति को उसके कार्य के बदले परिश्रमिक अधिकार एवं सम्मान या प्रतिष्ठा नहीं मिल पाता तो उसमें निराशा, कुण्ठा तथा हीनता की भावना व्याप्त होती है। जिसे हम असन्तोष के रूप में व्यक्त करते हैं।

शिक्षक असन्तोष–

जब किसी शिक्षक को उसके उचित अधिकार एवं एवं उचित परिश्रमिक तथा मानवतावादी व्यवहार एवं शिक्षक जैसा सम्मान न मिल पाये तो ऐसी स्थित में उसमें निराशा, कुण्डा एवं असंतोष की स्थिति उत्पन्न होती है। जिसे हम शिक्षक असंतोष के रूप में जानते हैं।

स्ववित्तपोषित महाविद्यालय–

स्ववित्तपोषित महाविद्यालय ऐसे शिक्षण संस्थान हैं। जिसका निर्माण व्यक्ति अपनी पूंजी लगाकर किया है। इसके संचलन के लिए सरकार द्वारा मान्यता तो मिल जाती है लेकिन शिक्षकों व कर्मचारियों के वेतन एवं सुविधाओं के लिए सरकार द्वारा अनुदान नहीं दिया जाता है। जिसमें

एम0फिल्0/पीएच0डी0/नेट तथा स्लेट डिग्रीधारी शिक्षक बनकर शिक्षा व्यवस्था को संचालित करते हैं। ऐसे महाविद्यालयों में मानक एवं योग्यता के अनुसार शिक्षक रखें जाते हैं। लेकिन मानक, योग्यता एवं यू0जी0सी0के नियमानुसार वेतन एवं अन्य सुविधाएं प्रदान नहीं की जाती हैं।

अध्ययन का उद्देश्य–

प्रस्तुत अध्ययन हेतु निम्नलिखित उद्देश्य निरूपित किये गये हैं–

1. शिक्षकों के शोषण की कारणता का ज्ञान प्राप्त करना।
2. प्रबन्धतंत्र द्वारा शिक्षकों की शिकायतों की अवमानना का ज्ञान प्राप्त करना।
3. विश्वविद्यालय के अवकाश सूची के अनुसार अवकाश न देने सम्बधी ज्ञान प्राप्त करना।
4. शिक्षकों की असंतुष्टता के प्रमुख कारणों की जानकारी प्राप्त करना।
5. शिक्षक असंतोष के दुष्परिणामों की जानकारी प्राप्त करना।
6. महाविद्यालय के शिक्षकों में वेतन विसंगति का ज्ञान प्राप्त करना।

अध्ययन उपकल्पना–

प्रस्तुत अध्ययन हेतु शिक्षक असंतोष के वैज्ञानिक अध्ययन के उद्देश्य से निम्नलिखित उपकल्पनाएं निर्मित की गई हैं–

1. स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों के शिक्षकों में असंतोष व्याप्त है।
2. महाविद्यालय के प्रबन्धतंत्र द्वारा शिक्षकों के शिकायतों की अवमानना की जाती है।
3. विश्वविद्यालय के अवकाश सूची के अनुसार शिक्षकों को अवकाश नहीं दिया जाता है।
4. शिक्षकों की असंतुष्टता का प्रमुख कारण संतोष जनक परिश्रमिक न मिल पाना है।
5. शिक्षकों में असन्तुष्टता के कारण उनके सामने विभिन्न समस्याएं होती है।
6. महाविद्यालय के शिक्षकों में वेतन विसंगति व्याप्त है।

समग्र एवं प्रतिदर्श–

प्रस्तुत अध्ययन उत्तर प्रदेश राज्य के अम्बेडकर नगर जनपद के स्ववित्तपोषित महाविद्यायों पर आधारित है। 2011 की जनगणना के अनुसार जनपद की कुल जनसंख्या 2398709 हैं। तथा कुल महाविद्यालयों की जनसंख्या 85 हैं। जिसमें स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों की संख्या 80 है। प्रबन्धकीय अनुदानित महाविद्यालयों की संख्या 03 है। तथा राजकीय महाविद्यालयों की संख्या दो है। जिसमें से अध्ययन हेतु 04 स्ववित्तपाषित महाविद्यालय को अध्ययन का आधार बनाया गया हैं। जिनके नाम इस प्रकार है– (1) भानमती स्मारक पी0जी0 कालेज अकबरपुर अम्बेडकर नगर (2) राम समुझ सूरसती पी0जी0 कालेज अकबरपुर अम्बेडकर नगर (3) डॉ0 अशोक स्मारक पी0जी0 कालेज अकबरपुर अम्बेडकर नगर (4) संत द्वारिका प्रसाद पी0जी0 कालेज अकबरपुर अम्बेडकर नगर। उपर्युक्त प्रथम डिग्री कालेज में अनुमोदित शिक्षकों की संख्या 53 द्वितीय में अनुमोदित शिक्षकों की संख्या 43 है। तृतीय में अनुमोदित शिक्षकों 51 हैं तथा चतुर्थ में अनुमोदित शिक्षकों की संख्या 34 हैं। इस प्रकार अध्ययन का समग्र–181 हैं।

प्रतिदर्श–

प्रस्तुत अध्ययन प्रतिदर्श अम्बेडकरनगर जनपद के अकबरपुर विकाश खण्ड में स्थित स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों पर आधारित हैं। इस प्रकार इन स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में शिक्षण कार्य कर रहे शिक्षकों को प्रत्येक महाविद्यालय से 10–10 शिक्षकों को अध्ययन हेतु उत्तरदाता के रूप में जिसमें कुल मिलाकर 40 शिक्षकों को अध्ययन हेतु उत्तरदाता के रूप चुना गया हैं। इस चयन में सुविधा जनक निदर्शन प्रयोग किया गया हैं। सुविधा जनक निदर्शन, की उस प्रणाली को कहते है। जिसमें समग्र में से केवल उन्ही इकाइयों को चुना जाता है जो सुविधानुसार उपलब्ध हैं।

अध्ययन विधि–

प्रस्तुत अध्ययन में तथ्यात्मक सर्वेक्षण विधि, अन्वेषणात्मक एवं विवेचकनात्मक अनुसंधान अभिकल्प का प्रयोग किया गया है। इसमें स्वनिर्मित साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से सम्बंधित विचारों एवं अन्तर्सूझों की गवेषणा की गयी है।

सूचना के प्राथमिक स्रोतों द्वारा सूचनाओं का वर्गीकरण एंव निष्पादन

सारणी संख्या–01

लिंग के आधार पर उत्तरदाताओं का वर्गीकरण

क्रमांक	लिंग	संख्या	प्रतिशत
01.	पुरूष	28	70
02.	स्त्री	12	30
योग–		40	100

स्रोत– उपर्युक्त ऑकडा प्राथमिक स्रोत द्वारा एकत्रित है।

उपर्युक्त सारणी के विश्लेषण के आधार पर स्पष्ट होता है लिंग के आधार पर सर्वाधिक 70 प्रतिशत संख्या पुरूषों की है तथा स्त्रीलिंग उत्तरदात्रियों की संख्या 30 प्रतिशत है।

अतः सारणी के समस्त ऑकडों से स्पष्ट होता है सर्वाधिक 70 प्रतिशत उत्तरदाता पुरूष है।

सारणी संख्या–02

धर्म के आधार पर उत्तरदाताओं का वर्गीकरण

क्रमांक	धर्म	संख्या	प्रतिशत
01.	हिन्दू	34	85
02.	इस्लाम	06	15
योग–		40	100

उपर्युक्त सारणी के विश्लेषण से स्पष्ट है कि सर्वाधिक 85 प्रतिशत उत्तरदाता हिन्दू धर्म के मानने वाले है। जबकि 15 प्रतिशत उत्तरदाता इस्लाम धर्म को मानने वाले है। अतः हिन्दू धर्म के उत्तरदाता सर्वाधिक 85 प्रतिशत है।

सारणी संख्या –03

वैवाहिक स्थिति के आधार पर उत्तरदाताओं का वर्गीकरण–

क्रमांक	वैवाहिक स्थिति	संख्या	प्रतिशत
01	विवाहित	26	65
02	अविवाहित	11	27.5
03	तलाक शुदा/ विधवा/विधुर	03	7.5
योग–		40	100

उपर्युक्त सारणी का विश्लेषण उत्तरदाताओं की वैवाहिक स्थिति के आधार पर किया गया जिसमें सर्वाधिक 65 प्रतिशत विवाहित उत्तदाता हैं तथा अविवाहितों की संख्या 27.5 प्रतिशत है और सबसे कम संख्या 7.5 प्रतिशत तलाक शुदा विधवा एंव विधुर का है। अतः सर्वाधिक 65 प्रतिशत उत्तरदाता विवाहित है।

सारणी संख्या–04

शैक्षणिक स्तर के आधार पर उत्तरदाताओं का वर्गीकरण–

क्रमांक	शिक्षा का स्तर	संख्या	प्रतिशत
01.	केवल एम0फिल0	03	7.5
02.	केवल नेट	13	32.5
03.	केवल पीएच0डी0	12	30
04.	नेट/पीएच0डी0	09	22.5
05.	एम0फिल0/नेट/पीएच0डी0	3	7.5
योग–		40	100

उपर्युक्त सारणी के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक 32.5 प्रतिशत उत्तदाता नेट परीक्षा पास करके अध्यापन कार्य कर रहे हैं। वही केवल एम0फिल् और एम0फिल्0/ पीएच0डी0/ नेट

उत्तरदाताओं की संख्या सबसे न्यूनतम 7.5 प्रतिशत है अतः नेट करने वाले शिक्षकों की संख्या सर्वाधिक 32.5 प्रतिशत है।

सारणी संख्या–05

प्रबन्धतन्त्र द्वारा शिकायतों की अवमानना के सम्बन्ध में उत्तरदाताओं के दृष्टिकोण

क्रमांक	अभिव्यक्ति	संख्या	प्रतिशत
01.	हाँ	06	15
02.	नहीं	24	60
03.	कभी–कभी	10	25
योग–		**40**	**100**

उपर्युक्त सारणी के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक 60 प्रतिशत उत्तरदाताओं का यह विचार है कि प्रबन्धतन्त्र द्वारा शिक्षकों की शिकायतों को नहीं सुना जाता तथा सबसे कम 15 प्रतिशत शिक्षक उत्तरदाता यह मानते है कि सुना जाता है।

अतः इससे सपष्ट होता है कि अधिकांश शिक्षकों की शिकायतों की प्रबन्धतन्त्र द्वारा नही सुना जाता जिसके कारण शिक्षकों में असन्तुष्टता है उपकल्पना संख्या 02 सत्य प्रतीत होती हैं

सारणी संख्या–06

कालेज प्रबन्धतन्त्र से असन्तुष्टता के सम्बन्ध में उत्तरदाताओं का दृष्टिकोण–

क्रमांक	अभिव्यक्ति	संख्या	प्रतिशत
01.	हाँ	08	20
02.	नहीं	20	50
03.	कुछ–कुछ	12	30
योग–		**40**	**100**

उपर्युक्त सारणी के विश्लेषण के आधार पर स्पष्ट होता है कि महाविद्यालय के स्ववित्त पोषित शिक्षकों की संतुष्टता के सम्बन्ध में अभिव्यक्ति सर्वाधिक 50 प्रतिशत नहीं है तथा सबसे कम 08 प्रतिशत हाँ है अतः इससे स्पष्ट होता है कि शिक्षकों का प्रबन्धतन्त्र द्वारा शोषण किया जाता है जिसे सर्वाधिक 50 प्रतिशत शिक्षक असन्तुष्टता जाहिर कर रहे है। उपकल्पना संख्या01 सत्य प्रतीत होती है

सारणी संख्या–07

शिक्षको को मिलने वाला परिश्रमिक की संतुष्टता के सम्बन्ध में उत्तरदाताओं के दृष्टिकोण

क्रमांक	अभिव्यक्ति	संख्या	प्रतिशत
01.	हाँ	00	000
02.	नही	32	80
03.	कुछ हद तक	08	20
	योग–	**40**	**100**

उपर्युक्त सारणी के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि महाविद्यालय के स्ववित्तपोषित शिक्षकों की सर्वाधिक 80 प्रतिशत अभिव्यक्ति असन्तुष्टता के सम्बन्ध में है। सबसे कम 20 प्रतिशत लोग कुछ हद तक सन्तुष्ट है अतः इससे स्पष्ट है कि शिक्षकों के शिक्षण कार्य के बदले जो परिश्रमिक मिलता है उससे सन्तुष्ट नहीं है। उपकल्पना संख्या–04 सत्य प्रतीत होती है

सारणी संख्या–08

कालेज के प्रबन्धतन्त्र द्वारा शिक्षकों से किये जाने वाले व्यवहार के सम्बन्ध में उत्तरदाताओं की अभिव्यक्ति–

क्रमांक	अभिव्यक्ति	संख्या	प्रतिशत
01.	शोषण परक	20	50
02.	सम्मानजनक	06	15

03.	द्वेषपरक	00	00
04.	राजनीतिक दबाव परक	00	00
05.	अच्छा व्यवहार	14	35
योग–		**40**	**100**

उपर्युक्त सारणी विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक 50 प्रतिशत उत्तरदाताओं की अभिव्यक्ति शोषण परक है। तथ सबसे कम 15 प्रतिशत लोगों के विचार सम्मानजनक है इससे स्पष्टतः कहा जा सकता है कि कालेज के प्रबन्धतन्त्र का व्यवहार शोषण परक प्रतीत होता है। जिसके कारण शिक्षकों के वेतन में विसंगति दिखाई पड़ती है। उपकल्पना संख्या 06 सत्य प्रतीत होती है।

सारणी संख्या– 09

विश्वविद्यालय अवकाश सूची के अनुसार कालेज में अवकाश मिलने के सम्बन्ध में अभिव्यक्ति–

क्रमांक	अभिव्यक्ति	संख्या	प्रतिशत
01.	हाँ	20	50
02.	नहीं	20	50
	योग–	**40**	**100**

उपर्युक्त सारणी के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि उत्तरदाताओं की सकारात्मक एंव नकारात्मक स्वीकृति 50–50 प्रतिशत बराबर है। इससे स्पष्ट है कि कुछ छुट्टियाँ अवकाश सूची के अनुसार तथा कुछ छुट्टियाँ अवकाश सूची से काट दिया जाता है उपकल्पना संख्या–03 सत्य प्रतीत होती है।

सारणी संख्या–10

कालेज के असन्तुष्टता से शिक्षकों की हानि के सम्बन्ध में दृष्टिकोण–

क्रमांक	अभिव्यक्ति	संख्या	प्रतिशत
01.	शारीरिक बीमारी	00	00
02.	पारिवारिक कलह	00	00
03.	समाज में कम सम्मान एंव हीनता	00	00
04.	सही जीवन निर्वाह पर भय एंव आसंका	18	45
05.	उपर्युक्त सभी	22	55
योग–		**40**	**100**

उपर्युक्त सारणी के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक 55 प्रतिशत शिक्षक शारीरिक बीमारी, पारिवारिक कलह, समाज में कम सम्मान एंव हीनता, तथा सही जीवन निर्वाह के भय एंव असंका से ग्रासित है। तथा सबसे कम 45 प्रतिशत शिक्षक उत्तरदाताओं का विचार सही जीवन निर्वाह पर भय एंव अंसका पर आधारित है।

अतः स्पष्ट है कि शिक्षक असन्तुष्टता के कारण उपर्युक्त दुष्पारिणामों से सभी ग्रसित है उपकल्पना संख्या–05 सत्य प्रतीत होती है।

सारणी संख्या –11

नकल व्यवस्था से शिक्षकों के सम्मान में कमी के सम्बन्ध में उत्तरदाताओं की अभिव्यक्ति

क्रमांक	अभिव्यक्ति	संख्या	प्रतिशत
01.	हाँ	40	100
02.	नहीं	00	00
योग–		**40**	**100**

उपर्युक्त सारणी के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक 100 प्रतिशत या सभी उत्तरदाताओं द्वारा यह स्वीकार किया गया कि नकल व्यवस्था से शिक्षकों के सम्मान में कमी आयी है।

निष्कर्ष –

प्रस्तुत शोध में उपकरण के रूप में सूचनाओं एवं ऑकडों के संकलन हेतु साक्षात्कार अनुसूची का निर्माण करके अध्ययन से सम्बंधित महत्वपूर्ण पक्षों को जानने का प्रयास किया गया। आकड़ों के संकलन के बाद विभिन्न तथ्यों के आधार पर विभिन्न सारणियों का निर्माण किया गया। जिसमें सभी आकड़े प्राथमिक स्रोतों द्वारा एकत्रित किये गये हैं। सारणियों के विश्लेषण से जो निष्कर्ष एवं परिणाम प्राप्त होते है वे निम्नलिखित है–

लिंग के आधार पर उत्तरदाताओं के वर्गीकरण में अधिकतम 70 प्रतिशत पुरूष तथा न्यूनतम 30 प्रतिशत महिला उत्तरदाता हैं। इस प्रकार धर्म के आधार पर सर्वाधिक 85 प्रतिशत उत्तरदाता हिन्दू धर्म तथा 15 प्रतिशत इस्लाम धर्म से सम्बन्धित हैं। उत्तरदाताओं की वैवाहिक स्थिति के आधार पर वर्गीकरण से स्पष्ट होता है कि 65 प्रतिशत विवाहित, 27.5 प्रतिशत आविवाहित तथा 7.5 प्रतिशत उत्तरदाता तलाक शुदा, विधवा एवं विधुर स्थिति से सम्बन्धित है।

शैक्षिक स्तर के आधार पर उत्तरदाताओं के वर्गीकरण स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में जो लोग अध्यापन कार्य कर रहें हैं। जिसमें केवल एम0फिल्0 डिग्रीधारी 7.5 प्रतिशत केवल नेट 32.प्रतिशत केवल पी–एच0डी0 30 प्रतिशत नेट/पी–एच0डी0 22.5 प्रतिशत तथा एम0फिल्0/नेट/पी–एच0डी0 7.5 प्रतिशत उत्तरदाता शिक्षक हैं। महाविद्यालय में प्रबन्धतंत्र द्वारा शिक्षकों की बातों एवं समस्याओं को सुने जाने के सम्बन्ध में 60 प्रतिशत शिक्षकों के विचार नहीं सुना जाते 25 प्रतिशत कभी–कभी सुना जाता है। 15 प्रतिशत लोगों के विचार हैं कि उनके बातों को सुना जाता है। अन्ततः शिक्षकों की समस्याओं एवं बातों को नहीं सुना जाता। शिक्षकों की असन्तुष्टता कालेज के प्रबन्धतंत्र से प्रारम्भ होती है क्योंकि अधिकांश 50 प्रतिशत उत्तरदाताओं के उत्तर असन्तुष्टता से सम्बंधित है। जिससे स्पष्ट है कि प्रबन्धतंत्र द्वारा शिक्षकों का शोषण किया जाता है। शिक्षकों के कार्य के आधार पर उन्हें जो पारिश्रमिक मिलता है। उससे 80 प्रतिशत उत्तरदाता असंतुष्ट है। कॉलेज के प्रबन्धतंत्र द्वारा शिक्षकों से शोषण परक एवं राजनैतिक दबावपरक व्यवहार किया जाता है। तथा शिक्षकों के लिए सामान्य कार्य सामान्य वेतन न लागू करके वेतन विसंगति प्रतीत होता है। विश्वविद्यालय अवकाश सूची से जो छुट्टियां प्रबन्धतंत्र द्वारा काट दी जाती हैं। उससे भी शिक्षकों में असंतोष है।

महाविद्यालय के शिक्षक असंतुष्टता से जो दुष्परिणाम झेलना पड़ता है शारीरिक बीमारी, पारिवारिक कलह समाज में कम सम्मान एवं हीनता तथा सही जीवन पर निर्वाह पर भय एवं अशंका अध्ययन क्षेत्र के 55 प्रतिशत उत्तरदाता सहमति है। इसके बाद सभी उत्तरदाता यह सहमत है कि कालेज के नकल व्यवस्था के कारण सभी शिक्षकों के सम्मान में कमी आयी है।

सुझाव–

1. स्वावित्तपोषित शिक्षकों के वेतन स्तर में सुधार करके उन्हें सन्तुष्ट किया जाय। आवश्यकता पड़ने पर सरकार द्वारा वेतन एंव अन्य सुविधाओं से सम्बंधित अनुदान दिया जाय। जिसमें तनाव, निराशा, कुंठा, तथा विभिन्न शारीरिक रोगों से छुटकारा पा सकें।
2. महाविद्यालय के शिक्षकों में जो वेतन विसंगति सम्बन्धी समस्या है उसे दूर करके समान कार्य तो समान वेतन लागू किया जाय। ऐसा सरकारी नीतियों द्वारा ही सम्भव है।
3. समय–समय पर प्रबन्ध तन्त्र द्वारा शिक्षकों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।
4. प्रबन्ध तन्त्र द्वारा कालेज से सम्बंधित शिक्षकों की शिकायतों एंव राय को सुना जाना चाहिए। शिक्षक की राय अनुभवजन्य एवं परिवर्तनकारी हो सकता है। शिक्षकों के साथ शोषणयुक्त व्यवहार न किया जाए क्योकि शिक्षक राष्ट्र का निर्माता होता है।
5. शिक्षकों द्वारा विद्यार्थियों को गहन एंव समसामयिक जानकारी दिया जाना चाहिए। ऐसा योग्य एवं अनुभवी शिक्षक ही कर सकता है।
6. अधिकांश स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में शिक्षक के रूप में वे लोग अध्यापन कार्य कर रहे हैं जो महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में शिक्षण कार्य करने की योगिता नहीं रखते। शिक्षा एवं शिक्षण की गुणवत्ता को बनाये रखने के लिए महाविद्यालय में योग्य डिग्रीधारी शिक्षकों की आवश्यकता है।
7. महाविद्यालय की परीक्षा प्रणाली में नकल व्यवस्था को रोके जाने की आवश्यकता है। जिससे शिक्षक एवं छात्र समबन्धों में मधुरता आये तथा शिक्षक सम्मानजनक जीवन जी सके।

परिचयात्मक विवरण–

1. उत्तरदाता का नाम–.....
2. लिंग–पुरूष / स्त्री–
3. धर्म–हिन्दू / इस्लाम / ईसाई / सिक्ख / जेन / बौद्ध / पारसी
4. वैवाहिक स्थिति–विवाहित / अविवाहित / तलाकसुदा
5. शैक्षणिक स्तर– एम0फिल् / पीएच0डी0 / नेट / अन्य

अवधारणात्मक सूचनाँए–

6. क्या आप अपने कॉलेज के प्रबन्धतंत्र से सन्तुष्ट है ? हाँ / नहीं / कुछ–कुछ
7. क्या आपको समय से वेतन मिल जाता है ? हाँ / नहीं / कभी–कभी
8. क्या आपको मिलने वाला पारिश्रमिक सन्तोषजनक है ? हाँ / नहीं / कुछ हद तक
9. कॉलेज के प्रबन्धतन्त्र द्वारा आपसे कैसा व्यवहार किया जाता है?
   1. शोषण परक 2. सम्मान परक 3. द्वैष परक 4. राजनीतिक दबाव परक 5. अच्छा व्यवहार
10. क्या आपसे कॉलेज में प्रबन्धतन्त्र द्वारा आपकी शिकायतों को गम्भीरतापूर्वक सुना जाता है? हाँ / नहीं / कभी–कभी
11. क्या आपके कॉलेज में विश्वविद्यालय अवकाश सूची के अनुसार अवकाश मिलता है? हाँ / नहीं
12. क्या कॉलेज से उत्पन्न हुई असन्तुष्टता से आपको किसी प्रकार की हानि हुई है?
    1. शरीरिक बीमारी 2. पारिवारिक कलह 3. समाज में कम सम्मान एंव हीनता
    4. सही जीवननिर्वाह पर भय एंव असंका 5. उपर्युक्त सभी
13. क्य आप महाविद्यालय की नकल व्यवस्था से संन्तुष्ट है? हाँ / नहीं / कुछ–कुछ
14. क्या नकल व्यवस्था आपके सम्मान में कमी लाता है या सम्मान को प्रभावित करता है? हाँ / नहीं

सन्दर्भ :

1. Internet data Collected from the google search, page titled (बदलते परिदृष्य में शिक्षक) page-02 available on- 18/03/2018
2. Internet data Collected from the google search, page titled (भारतीय उच्च शिक्षा की चनैतियाँ) page-01 available on- 18/03/2018
3. Internet data Collected from the google search, page titled (शिक्षा एवं नैतिक मूल्यो पर निबन्ध) page-01 available on 18/03/2018
4. Internet data Collected from the google search, page titled (छात्र असंतोष) page-01 available on- 18/03/2018
5. Internet data Collected from the google search, page titled (युवा वर्ग में बढ़ता असंतोष पर निबन्ध) page-02 available on- 18/03/2018
6. बिजनौर टुडे, दैनिक समाचार पत्र, स्ववित्तपोषित डिग्री कालेजों की मनमानी पर रोक, प्रकाशित दिनांक–22.03.2018

***

भारतीय गांवों पर शहरीकरण का प्रभाव

मित्र प्रकाश *

विगत बीस सदियों से मनुष्य के ज्ञात इतिहास से लेकर अद्यतन मानव समाज का प्रवास मूलत: दो प्रकारों ग्रामीण और शहरी में रहा है । मानव की प्राचीन सभ्यताएं यह प्रमाणित करती हैं कि हमने सुव्यवस्थित तरीके से रहने की प्रणाली प्रथमत: नगरीय सभ्यता के रूप में शुरू की थी।सिंधु घाटी, मिस्र बेबी लोन तथा माया सभ्यताओं की हुई खुदाई यही प्रमाणित करती है।कारण साफ है कि संगठित तथा सभ्य मानव ने सुरक्षाए व्यापार तथा समूह. प्रेम के कारण नदियों के किनारे राजा की राजधानी में बसना अधिक उचित समझा।कालांतर में जनसंख्या वृद्धि ने मानव को सुदूर जंगलों तथा मैदानों में जाकर गांव बसाने को विवश किया तथा धीरे-धीरे कृषि, पशुपालन एवं प्राकृतिक संसाधनों की अधिकता ने गांव का विकास एवं विस्तार किया।

आधुनिकता, उद्योगों की प्रचुरता, रोजगार की उपलब्धता, राजकीय कार्यालयों की मौजूदगी तथा चिकित्सा एवं शिक्षण संस्थाओं की उपलब्धता ने सदियों से ग्रामीणों को नगरों की ओर आकर्षित किया है। यही कारण है, कि भारत में स्वतंत्रता के पश्चात नगरीय जनसंख्या तथा नगरों की संख्या में निरंतर वृद्धि हुई है । लेकिन वैश्वीकरण की लहर में जहां एक और संपूर्ण संसार एक वैश्विक गांव में परिवर्तित हुआ है वहीं दूसरी ओर शहरों में मिलने वाली सुविधाओं का विस्तार तेजी से देश के 6.38लाख गांव की ओर हुआ है।यातायात के साधन, सड़क एवं राजमार्ग, बिजली, घरेलू गैस, केबल टीवी, कूलर, एसी, कार, अस्पताल, स्कूल, बैंक, फैक्ट्री इंटरनेट, मोबाइल सेवा ने गांव शहर का भेद तेजी से कम किया है।

शहरों में बढ़ती भीड़, भाड़ और गांव से बढ़ते संपर्क ने बड़े शहरों की प्रशासनिक सीमाओं को बढ़ा दिया है। तथा छोटे-छोटे उपशहरों का निर्माण किया है। इससे गांव और शहर के बीच परिवहन और भंडारण की कीमत कम हो जाती है यह उपशहर गांव के ही बदलते स्वरूप हैं ।छोटे शहर बड़े शहरों और गांवों के बीच एक मध्यवर्ती कड़ी का काम करते हैं इसने गांव के विकास और सशक्तिकरण को आगे लाने में मदद की है तथा साथ ही साथ ग्रामीण शहरी पलायन के नकारात्मक प्रभाव को कम कर दिया है।विकास के बयारों से शहरों की तरह गांव के विभिन्न तरह के सरकारी और निजी विद्यालयों, अस्पतालों, राष्ट्रीयकृत बैंकों व ग्रामीण बैंकों तथा छोटे- छोटे कारोबार की स्थापना हुई है । इन सब के निर्माण और काम करने वाले कर्मचारियों के लिए भूमि और मकान की जरूरत पड़ी इन चीजों से गांव में भी अधिक आय और मकान का किराया बढ़ गया है।शहर के आसपास के ग्रामीण लोगों की आय को बढ़ाने में शहरी केंद्र की भूमिका है। शहर के लोगों के खाद्यान्न की भरपाई वहां के किसानों द्वारा की जाती है जिससे उनकी आय में नगद वृद्धि होती है। यह स्थानीय श्रम बाजार में भी बदलाव लाता है। बेहतर परिवहन से कई मजदूर शहरों में काम कर फिर शाम को घर वापस आ जाते हैं।गांव में शिक्षा के स्तर में सुधार के लिए शहरी और ग्रामीण स्कूलों के बीच एक कड़ी का विकास हुआ है जिससे अच्छे अभ्यास एक दूसरे के बीच बांटे जा रहे हैं । गांव में खुल रहे अनेकों निजी स्कूलों का नामकरण शहर के प्रसिद्ध स्कूलों के नाम पर रखा गया है जो अभिभावकों व बच्चों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं ।गांव में भी शिक्षा ग्रहण करने का माध्यम अंग्रेजी देखा जा सकता है।उत्तर प्रदेश सरकार ने भी गांव में चलने वाले प्राथमिक विद्यालयों को भी इंग्लिश मीडियम में चलाने का प्रयास किया है। जिसमें प्रत्येक ब्लॉक से कुछ चुने विद्यालयों को इंग्लिश माध्यम में पढ़ाने का कार्य किया जाता है।

ग्रामीण पर्यटन की अवधारणा ने शहरी लोगों व सैलानियों को गांव की ओर आकर्षित किया है। शहरों से बहुत सारे लोग गांव की ऐतिहासिक इमारतें रहन-सहन भोजन तथा हस्तशिल्प देखने जा रहे हैं ।

---

* (शोध छात्र), समाजशास्त्र विभाग, उदय प्रताप स्वायत्तशासी महाविद्यालय वाराणसी

सरकार ने ग्रामीण पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए कई जगहों पर टूरिज्म हाट भी खोल रखे हैं इनके माध्यम से गांव के विभिन्न तरह के आय के स्रोत बनते हैं। यह शहरों से गांव की तरफ आर्थिक स्थानांतरण का एक जरिया हो सकता है।

शहर आधारित उद्योग और ग्रामीण कृषि आधारित उत्पादकता के जुड़ाव ने क्षेत्रीय आर्थिक वृद्धि को बढ़ावा दिया है। बाजार ज्यादातर शहरी केंद्रों में स्थित होते हैं इन बाजारों ने कृषक को व्यवसाय कृषि उत्पाद को उगाने तथा लोगों को फार्म क्रियाकलापों में लाने को प्रोत्साहित किया है गांवों और छोटे शहरों में देखा जा रहा है कि कई बड़े शहरों के छोटे व्यापारी गांव में अपना कारोबार फैलाए हुए हैं।शहर में सरकारी नौकरी करने वाले बहुत से लोग गांव के निवासी होते हैं । इन लोगों में सेवा अवकाश के बाद पेंशन, पीएफ, अन्य सुविधाएं इत्यादि के रूप में संभवत शहरों से गांव की तरफ ही होता है। इस महंगाई के दौर में वेतन से परिवार के भरण-पोषण के साथशहरों में स्थाई परिसंपत्तियों का निर्माण करना बड़ा मुश्किल है इस अर्जित धन से ग्रामीण अर्थव्यवस्था में सुधार होता है इस तरह इसका श्रेय शहरों को ही जाता है।

शहरों का ही गांव पर प्रभाव है कि गांव में बेढंग से बनते हुए मकान आज फ्लैट की तरह और सुदृढ़ रूप से बन रहे हैं । उन्हें सारी आधुनिक सुविधाओं से लैस जैसे पानी बिजली नाली एवं शौचालय आदि करके बनाया गया होता है। कुछ ग्रामीण लोग शहरी जीवन यापन का पालन करते हुए गांव में खेती के कार्यों के साथ-साथ आधुनिक शहरी जीवन जीते हुए देखे जा सकते हैं। जैसे शहरों में बिजली और पानी की सुविधा को देखते हुए इनकी पूर्ति के लिए ग्रामीण लोग घरों में सुविधानुसार इनवर्टर सौर ऊर्जा आरो आदि का इस्तेमाल कर रहे हैं। अब कई गांव शहरों की तरह दिखते हैं।

गांव में शहरों से अपेक्षाकृत कम लेकिन शहर की तरह ही बदलाव दिख रहा है । यहां का जीवन अब साधारण नहीं रहा जीने का तरीका ड्रेसिंग सेंस, भोजन और आवास का चयन तथा समाज की स्थिति बदलती जा रही है। शहरों की तरह धर्म, संस्कृति और सांस्कृतिक विरासत से लगाव केवल गरीब और कम पढ़े-लिखे लोगों में ही रह चुका है। महंगाई की मार और कठिन प्रतियोगिता ने उन्हें इन सब चीजों से विमुख कर दिया है । लोगों ने अपना जीवन एकात्मकतावादी और अपने लोगों तक सीमित कर दिया है । अपने काम के सिवाय फालतू बातों के लिए समय ना के बराबर है । सही मायनों में शहरों ने इनको धन एकत्रित करने और उसका सहयोग करने की आदत डाल दी है।

शहरों का गांव पर नकारात्मक प्रभाव मुख्य रूप से सामाजिक वातावरण पर देख सकते हैं। शहरों की ही तरह गांव का सामाजिक माहौल बिगड़ता जा रहा है। अंतर्जातीय विवाह तथा असामाजिक तत्वों द्वारा महिलाओं का यौन उत्पीड़न जैसे कई उदाहरण गांव में देखे और सुने जा सकते हैं। अधिकांश शहरीयुक्त ग्रामीण लोग भौतिकता वादी और अवसरवादी प्रवृत्ति से गांव में जीवन व्यतीत कर रहे हैं। उनके नजदीकी संपर्क में आने वाले लोगों के भी मनोवृति वैसे ही होने लगती है। गांव की छवि पर नकारात्मक प्रभाव लाने के लिए यह लोग उत्तरदाई हैं।ग्रामीण- शहरी अंतर- संबंध के बदलाव ने कम आय वर्ग वाले ग्रामीण लोगों के जीविकोपार्जन को प्रभावित किया है । ग्रामीण वातावरण भी शहरों की तरह प्रतिस्पर्धी हो चुका है एक दूसरे से आगे बढ़ने और ऊपर उठने की होड़ सी लगी हुई है । इसको देखते हुए सरकार ने शहरों की सुविधाओं को गांव तक लाने के लिए अनेक कार्यक्रम चलाई है। केंद्र सरकार, राज्य सरकार और स्थानीय सरकार के बीच वाद-विवाद भी गांव में अवसर की पहचान, गरीबी उन्मूलन, क्षेत्रीय विकास की विभिन्न क्षेत्रीय नीतियों एवं स्थानीय पहल को अंजाम देने पर तुली हुई है।

निष्कर्ष :

कहना अतिशयोक्ति पूर्ण नहीं होगा कि भले ही ग्रामीण शहरी विशेषताएं बहुत ज्यादा अभी बनी है, लेकिन ग्रामीण सामाजिक आर्थिक व्यवस्थाओंके परिवर्तन में शहरों का प्रभाव दिखता है । हालांकि सामाजिक, आर्थिक पहलू के साथ राजनीतिक और सांस्कृतिक पहलू भी एक दूसरे से जुड़े रहते हैं।देश के संतुलित और तेजी से विकास हेतु सकारात्मक ग्रामीण शहरी संपर्क को बढ़ाने की जरूरत है। इसके लिए

विकासात्मक व संतुलित उपागम तथा अंतर- संबंधित समर्थित उपागम की आवश्यकता है। इन उपागम के लिए पर्याप्त आधारभूत सुविधाएं जैसे परिवहन, संचार, ऊर्जा और आधारभूत सेवाएं आधार हो सकते हैं। यह सारी चीजें आसान स्थानांतरण, रोजगार तक पहुंच और आय को बढ़ाने का कार्य करती हैं।

संदर्भ :

कुरुक्षेत्र: प्रकाशन विभाग, सूचना प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली।
योजना: प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली।
शर्मा, राजेंद्र कुमार (1997)रूलर सोशियोलॉजी, अटलांटिक प्रकाशन, नई दिल्ली।
चौहान बी आर.(1967)ए राजस्थान विलेज, एसोसिएटेड पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
कर्ण एम. एन. (2003)सोशल चेंज इन इंडिया, एनसीआरटी प्रकाशन, नई दिल्ली।

***

प्राचीन भारत में पुलिस संस्था का उद्‌भव एवं विकास : एक ऐतिहासिक अध्ययन

*डॉ. अनुराग पालीवाल**

सार–संक्षेप

भारत का प्राचीन इतिहास अति समृद्ध एवं गौरवशाली रहा है। भारत में गणतंत्रात्मक व्यवस्था लागू थी और कालांतर में राजतंत्र स्थापित हुए व उन राजाओं ने समूचे भारतवर्ष को एक प्रशासनिक इकाई मानते हुए राष्ट्र को एकीकृत किया तथा अपने नेतृत्व में एक सार्वभौम केन्द्रीय सत्ता की स्थापना की। भारत में प्राचीनकाल में सदैव ही राजसत्ता नैतिक मूल्यों के आधार पर संचालित हुई है और किसी भी राजतंत्र की उपयोगिता एवं सार्थकता उसकी सुदृढ़ प्रशासनिक व्यवस्था से निर्धारित होती है, जिससे सामाजिक सुरक्षा प्राप्त कर, शांति एवं व्यवस्था के वातावरण में मनुष्य समुचित अवसरों का लाभ लेते हुए अपना सर्वांगीण विकास संभव कर सकता था।

राज्य की प्रशासनिक व्यवस्था का अहम् मानक है – राष्ट्रीय सुरक्षा एवं आंतरिक भू–भाग में रह रहे नागरिकों के हित व अधिकारों की सुरक्षा। सीमाओं की सुरक्षा के लिए तो सेनाओं का गठन प्रायः सदैव से ही ज्ञात है, किंतु सीमाओं के अंदर रहने वाले निवासियों के जान–माल की सुरक्षा एवं आंतरिक शांति व्यवस्था को स्थापित करने के प्रयासों का अध्ययन करने के उद्देश्य से ''प्राचीन भारत में पुलिस'' नामक विषय पर शोध पत्र लिखने का साहस किया है।

प्रस्तावना

कहते हैं मनुष्य 'ईश्वर की सवर्तोकृष्ट रचना है' और मनुष्य ने अपनी क्षमताओं के आधार पर इसे सिद्ध कर दिखाया है। मनुष्य के अंदर जिज्ञासा की प्रवृत्ति ने उसे कभी शांत नहीं बैठने दिया और न ही वह कभी अपने वर्तमान से स्थायी रूप से संतुष्ट बना रह सका। अपनी अनुसंधनात्मक प्रवृत्ति के माध्यम से, प्रयत्न करते हुए, वह आदिम से विकसित होने की यात्रा कर सका और आज भी विराम की संभावना दृष्टिगोचर नहीं होती।

यदि हम मनुष्य की प्रारंभिक अवस्था की बात करें तो वहाँ जटिलता दिखाई देती है और हमें ज्ञात होता है कि अन्य प्रजातियों की भाँति वह भी अपनी आदिम अवस्था में प्रकृति से अनुकूलन करते हुए अपना जीवन एकांकी रूप में निर्वहन कर रहा था, किंतु समय की आवश्यकताओं को परखते हुए मनुष्य ने संगठित जीवन की आधारशिला रखी और परिणामतः परिवार, कुल, कबीले, ग्राम, नगर एवं राज्य ने आकार लिया। यदि संगठन की स्वाभाविक आकांक्षा नहीं होती, तो समाज का जन्म नहीं होता और समाज के अभाव में सभ्यताओं एवं संस्कृतियों की कल्पना साकार होना संभव नहीं था। समाज के साथ ही मनुष्य में अंतःनिर्भरता का विकास हुआ और सामूहिक हित को आदर्श मानते हुए तथा परस्पर क्रियाओं के आधार पर, साझा अनुभवों से सीखते हुए, सह–अस्तित्व की संकल्पना संभव हो सकी जिसने सुगम, सरल एवं सुविधापूर्ण जीवन के मार्ग को प्रशस्त किया। किंतु विकास के साथ ही व्यक्तिगत् स्वार्थ एवं महत्वाकांक्षा की प्रवृत्ति ने जन्म ले लिया और संसाधनों पर स्वामित्व की भावना ने संघर्ष को आमंत्रण दे दिया। ऐसी परिस्थिति में अधिक शक्तिशाली व्यक्ति दूसरों के अधिकारों का हनन करने में सफल हो जाता था। संघर्ष एवं शौर्य प्रदर्शन कबीलाई समाज के लिए भले ही गर्व की बात रही हो, किंतु निश्चित रूप से इस प्रकार के संघर्षों ने मानव सभ्यता को अतुलनीय क्षति पहुँचाई है।[1] कालांतर में संघर्ष को अर्थहीन समझने तथा पारस्परिक सहयोग का पाठ पढ़ने के बाद एक सामान्य आचार संहिता का जन्म हुआ। मानव जीवन की जटिलताओं के बढ़ने के साथ–साथ आचार–संहिता का विस्तार हुआ तथा ऐसी संस्थाओं की आवश्यकता अनुभव की गई जो सामाजिक मानदण्डों एवं नैतिक आदर्शों के विपरीत चलने वाले व्यक्ति एवं समूहों को दण्डित करते हुए न्याय, शांति व्यवस्था,

* असिस्टेंट प्रोफेसर, इतिहास-विभाग, आगरा कॉलेज, आगरा

मानवीय मूल्यों एवं गरिमा को संरक्षित रख सकें। संभवतः यही जनपदों, राज्यों अथवा साम्राज्यों का प्रारंभ बिंदु भी रहा होगा।

उल्लेखनीय है कि समाज और राज्य दोनों ही मनुष्य की नियामक सत्ताएँ थीं, किंतु समाज के पास नैतिक बल तो था पर अपराध रोकने एवं अपराधी को दण्डित करते का अधिकार प्राप्त नहीं था, वहीं राज्य के पास वैधानिक शक्ति थी जिसके द्वारा वह दोषी को दण्डित करने में समर्थ था।

राज्य का उदय नागरिकों की जान–माल की रक्षा के लिए हुआ था और प्रत्येक राज्य के राजा का यह दायित्व था कि वह अपनी प्रजा का परिपालन तथा दुष्टों का निग्रहण करें।[2] शुक्र ने राजा का परम धर्म बताते हुए कहा है – ''नृपस्य परमो धर्मः प्रजानां परिपालनं, दुष्ट निग्रहणं नित्यं'' अर्थात प्रजा का पालन एवं दुष्टों की रोकधाम राजा का गुरूत्तर दायित्व है। किंतु क्या एक राजा किसी अधिकार प्रदत्त सशस्त्र समुदाय के अभाव में समूचे राज्य का संरक्षण कर सकता है। आंतरिक एवं बाह्य दोनों स्तरों पर राजा अपने भय का प्रदर्शन एवं शक्तियों का प्रयोग 'पुलिस' अथवा 'सेना' के माध्यम से ही करता है।

प्राचीन भारत में पुलिस के पूरे प्रबंध का पता लगता है। पुलिस दो प्रकार की होती है – एक तो साधारण और दूसरी उसकी सहायता के लिए खुफिया। साधारण पुलिस के दो भेद मिलते हैं – एक शहरों की और दूसरी ग्रामीण क्षेत्रों के लिए। ''शहर कोतवाल'' के लिए कौटिल्य ने 'नागरिक' शब्द का प्रयोग किया है। इसका अर्थ होता है – 'नगर का वह निवासी, जिसे निर्वाचन आदि का अधिकार प्राप्त हो।' नगर निवासियों के लिए 'कामसूत्र' में नागरक शब्द भी आया है। परंतु इससे अभिप्राय है शहर के शैकीन, जो गाँव के गंवारों से भिन्न हैं। 'नागरिक' शब्द के संबंध में एक और बात स्मरणीय है कि वह नगराध्यक्ष है। 'पुलिस' शब्द भी लैटिन 'पोलीशिया' से निकला है, संबंध 'पॉलिस' अर्थात नगर से है। नागरिक का पद जिम्मेदारी का पद माना गया है।[3] अर्थशास्त्र के द्वितीय अधिकरण के 'नागरिक प्राणिधि' नामक 36वें अध्याय में इसके कार्यों का तथा पुलिस के नियमों का पूरा विवरण मिलता है। कई कुलों की रक्षा के लिए इसे एक 'गोप' (चौकीदार) नियुक्त करना चाहिए, उसे सबमें रहने वाले स्त्री–पुरूषों के वर्ण, गोत्र, नाम, आय–व्यय और उनकी संख्या जाननी चाहिए। गोपों के ऊपर बड़े हलकों में 'स्थानिक' (थानेदार) रखने की व्यवस्था है। इन अधिकारियों को सभी तथ्यों की जानकारी आवश्यक है कि बदमाशों को वहाँ न प्रवेश मिले और इसके लिए प्रत्येक धर्मशाला अथवा सराय निरीक्षक का यह कर्तव्य है कि वह ऐसे तपस्वी, श्रोत्रिय आदि को छोड़कर, जिनसे वह स्वयं परिचित है, बाकी अन्य सभी प्रवासियों की सूचना गोप को देता रहे। व्यापारी लोग अपने यहाँ काम करने वाले या यात्रियों को भले ही अपनी दुकानों में ठहरा लें पर जो देश–काल के विपरीत सौदा बेचने वाला हो, या पराई अथवा संदिग्ध वस्तु का व्यवहार करता हो, उसकी सूचना नागरिक को अवश्य देनी चाहिए। इसी तरह मद्य–मांस बेचने वाले, पका अन्न बेचने वाले और वेश्याएँ भी अपने परिचितों को ठहरा लें, पर जो खूब मद्य पीते हों और भारी मात्रा में जुआ खेलते हों उनकी सूचना गोप या स्थानिक को दे दी जाए।

यदि हथियार आदि से लगे हुए घावों की कोई छिपे तौर पर चिकित्सा कराता हो, या रोग अथवा मरी आदि फैलाने वाले द्रव्यों का छिपाकर उपयोग करता हो, तो चिकित्सक को निर्देश थे कि वह स्थानिक को सूचना दे। इसी तरह वह व्यक्ति जिसके घर में यह कार्य हो और मालिक इसकी सूचना न दे तो वह अपराध की श्रेणी में है। घर के मालिक का यह दायित्व था कि वह प्रत्येक आने तथा जाने वाले की सूचन गोप को देता रहे। सूचना न देने पर वे लोग रात्रि में कहीं चोरी करें, तो मकान मालिक भी दोषी ठहराया जायेगा। नगर के भीतर अथवा बाहर बने हुए देवालयों, तीर्थस्थानों या श्मशानों में किसी हथियार आदि के घाव लगे हुए, निषिद्ध वस्तुओं को पास रखने वाले, शक्ति से अधिक भार उठाए, डरे या घबराए हुए, घोर निद्रा में सोए हुए, लंबी यात्रा के कारण थके हुए अथवा अन्य अपरिचित लोगों पर दृष्टि रखनी चाहिए। इसी प्रकार नगर के भीतर खाली पड़े हुए मकानों में, शिल्पशालाओं में, मद्य की दुकानों में, पका हुआ मांस बेचने वाले भोजनालयों में तथा पाखण्डियों के रहने के स्थानों मे बदमाशों की देख–रेख होना चाहिए।

रात के प्रथम और अंतिम भाग की छ–छ घड़ियों को छोड़कर दोनों बार बाजे को जोर से बजाना चाहिए, जिससे कि उस समय कोई आदमी सड़क पर न निकले, और जो निषिद्ध समय पर निकलेगा, वह दण्ड का पात्र होगा। ऐसे समय पर जो पुरूष शंकाग्रस्त इलाकों में पाए जाएं, जिनके पास संदिग्ध वस्तु या चिन्ह हों या जिनके अपराधों का पहले से पता हो उनसे उनके निवास तथा स्थान विशेष पर आने का प्रयोजन ज्ञात करना चाहिए। इन प्रश्नों का वास्तविक उत्तर मिलने पर अमुक व्यक्ति का प्रबंध किया जाए। परंतु प्रसूता स्त्री, चिकित्सक, शव उठाने वाले, हाथ में प्रकाश लेकर जाने, सूचनादेने वाले या आग लग जाने पर घर से बाहर निकलने तथा कोतवाल का अनुमति पत्र होने पर उसे निषिद्ध समय मे न रोका जाए।[4]

नागरिक का यह कर्तव्य है कि वह सदा उदक स्थान (नदी, तालाब, कुएँ, आदि), मार्ग, भूमि, छन्नपथ (सुरंग) वप्र (सफील, प्याऊ), प्राकार, रक्षा बुर्ज आदि की देखभाल करता रहे। खोए हुए, भूले हुए तथा कहीं पर स्वयं छूटे हुए भूषण, अन्य सामान या प्राणियों को भी उस समय तक सुरक्षित रखने के आदेश थे जब तक उनके मालिक का सही पता न लग जाए। जेल का प्रबंध करने का दायित्व भी उसका था। बालक, बूढ़े, बीमार, अनाथों को वह राजा के जन्मदिन के अवसर पर महल तक छोड़ता था। शहर की सफाई, गंदगी की रोकथाम, राजमार्ग, देवालय, कुआँ एवं तालाब की सफाई एवं प्रबंधन उसी का दायित्व था तथा विपरीत स्थिाति में उसे दण्ड देने का अधिकार था। जो मरे हुए पशुओं को सड़क पर छोड़ दें, उनको भी वह दण्ड देता था। नगर में अग्नि शमन व्यवस्था का दायित्व भी उसके पास था। म्यूनिसिपल एवं पुलिस दोनों प्रकार के अधिकारों को एक व्यक्ति के अधीन करना शासन की बुद्धिमत्ता थी। शुक्र लिखते है कि ''घरों की पंक्ति के सिरे पर द्वार कायम होना आवश्यक है। यामिक, प्रहरी (पुलिस) रात में दो–दो घंटे गलियों में गश्त देते थे जिससे चोरी पर अंकुश रहता था।'' ''विथिषु यामार्द्धे निशि पर्यटनं सदा। कर्वण्य या यामिकैरेव चौर–जार निवृत्त्ये।''[5] इन यामिकों को प्रतिदिन बदलने की व्यवस्था थी जिससे किसी आस–पास वाले से संबंध स्थापित न हो सकें। लोगों को अदालत में हाजिर करने का दायित्व भी पुलिस के पास था। 'राज पुरूष' अदालत का एक अंग होता था जिसे 'प्रतिहारक' भी कहते थे। शुक्र के शब्दों में इसको शस्त्र चलाने में निपुण, सौष्ठव शरीर का स्वामी, चुस्त, सत्य का अनुगामी, विनीत एवं नम्र होना चाहिए। गाँव के चौकीदार को गाँव के अंदर तथा बाहर जाने वालों को लेखाजोखा रखना अनिवार्य था किन्तु समाज में प्रतिष्ठित एवं चरित्रवान व्यक्तियों को नहीं रोकना चाहिए। ''निर्गच्छन्ति च ये ग्रामाद ये ग्रामं प्रविशन्ति च। तान् सुसंशोध्य यत्नेन मोचयेछतलग्नकान् प्रख्यात वृतशीलास्तु uविमृष्य विमोचयेत्।'' बड़े गाँवों में एक 'साहसाधिप' की व्यवस्था थी, जो अपराधियों को उसी समय एवं स्थान पर तात्कालिक दंड दे सकें, किन्तु ऐसे अधिकारी को आवश्यकता से अधिक कठोर एवं विनम्र नहीं होना चाहिए। राजा को नगर–नगर और गाँव में ग्रामाध्यक्ष, नगराध्यक्ष साहसाधिप (दासेगा) भागहार (मालगुजारी वसूलने वाला) लेखक (पटवारी) शुल्कग्राह (चुंगी वसूलने वाला) और प्रतिहारी (चौकीदार) इन छ कर्मचारियों को नियुक्त करना चाहिए। यात्रियों के आराम के लिए मार्गों की रक्षा आवश्यक है तथा यात्रियों के साथ उत्पात असहनीय था। सरायों की सुरक्षा हेतु चौकीदारों की व्यवस्था थी।

अपराधियों पर नियंत्रण के लिए साधारण पुलिस की सहायता हेतु गुप्तचरों की व्यवस्था थी। कौटिल्य ने इनके कई भेद बतलाए है। प्रगल्भ छात्र रूप में रहने वाला गुप्तचर 'कापटिक' कहलाता था। विद्यार्थियों को धन का लोभ देकर जासूसी कराई जाती थी। साधु वेश में रहने वाला गुप्तचर 'उदास्थित' कहलाता था। वह अपेन साथ धन और विद्यार्थियों को लेकर कृषि, पशुपालन एवं व्यापार केन्द्रों पर भंडारे इत्यादि करता था तथा आंतरिक व्यवस्था पर दृष्टि रखता था। कृषक भेष में रहने वाला गुप्तचर 'ग्रहपतिक' कहलाता था। वह कृषि क्षेत्र में 'उदास्थित' की तरह कार्य करता था। गरीब व्यापारी के भेष में रहने वाला गुप्तचर 'वैदेहक' कहलाता था। उसे व्यापारिक प्रतिष्ठानों पर तैनात किया जाता था। मुंडित तथा जटिल वेष में रहने वाला गुप्तचर 'तापस' कहलाता था। वह 'भिक्षुक' अथवा 'परिव्राजक' के रूप में घरों में घुस जाता था और लोगों की शासन के प्रति भावनाओं को समझता था। बाल संवारने, गाने–बजाने वाले, खाना पकाने, स्थान कराने, बिस्तर लगाने, हजामत बनाने के उद्देश्य

से घरों में घुसकर जासूसी होती थी। कुबड़े, जंगली, गूंगे, बहरे, मूर्ख, अंधे बनकर भी जासूसी होती थी। यह काम तो निम्न स्तर का है किन्तु शांति–व्यवस्था बनाए रखने के लिए ऐसा करना अपरिहार्य था। यह राजा की नीति थी कि अगर किसी एक समाचार को तीन लोग एक प्रकार से वर्णित करें, तभी वह विश्वसनीय है। शुक्र ने लिखा है कि जो राजा झूठे गुप्तचरों को दण्ड नहीं देता, वह पाप का भागी है। राजा को गुप्तचरों को उचित सरंक्षण प्रदान करना होता था क्योंकि यह काम बहुत संवेदनशील होता था और शासकीय व्यवस्था का दायित्व इस पर निर्भर था और गुप्तचर को समाज से शत्रुता का भी खतरा होता था।

गुप्तचर पुलिस का खर्च शासन को वहन करना पड़ता था। साधारण पुलिस के उच्चाधिकारियों को भी वेतन शासकीय कोष से प्राप्त होता था। प्रहरी का भर जनता पर निर्भर था। कोष में भी सार्वजनिक धन एकत्र होता था। प्रहरी पर जनता का पूरा ध्यान होता था। गाँव के 6 कर्मचारी प्रहरी की श्रेणी के अंतर्गत थे, जिनका हिस्सा गाँव के अन्न में लगता था। प्रहरी पर राजा और जनता दोनों का नियंत्रण था किंतु यदि चोरी का माल बरामद नहीं होता था तो उक्त कीमत राजकोष से प्रदान की जाती थी। इसका उल्लेख गौतम और आपस्तम्ब सूत्र में मिलता है।

पुलिस के दुर्गुणों पर भी निगरानी रखी जाती थी। दोषी सिद्ध होने पर सजा का प्रावधान था। कौटिल्य ने लिखा है कि यदि कोई पुलिस कर्मचारी दासी, वेश्या या कुलीन स्त्री के साथ बलात्कार करे तो उसे क्रम से प्रथम साहस, मध्यम साहस और प्राणदंड दिया जाए। यदि मद्य पीकर वह प्रमाद करे तो उसे अपराधानुसार दंड दिया जाए।

पुलिस भी अधिकारों के माध्यम से अनियंत्रित न हो पाए, ऐसे उपायों की व्यवस्था की गई थी। शुक्र ने इस ओर संकेत करते हुए लिखा है – ''नोत्पादयेत् स्वयं कार्य राजा नापयस्य पूरूषः'' अर्थात वध व डकैती जैसे मामलों को छोड़कर राजा अथवा पुलिस को कोई मुकदमा नहीं चलाना चाहिए और यदि कोई कुछ जबरदस्ती लिखवा ले, तो उसे चोर की भांति दण्ड देना चाहिए – ''बलाद् गृहणन्ति लिखितं दंडयेत् तांस्तु चौरवत्।[6] स्वामी के कार्य में लोभ से घूस कभी न लेना चाहिए। उत्कोचग्रहणं नव स्वामिकार्याविलोभनम्।''[7] सारे पुलिस विभाग का एक प्रधान अध्यक्ष होता था जो 'राष्ट्रपाल' कहलाता था। कौटिल्य ने इसका 12000 पण वार्षिक वेतन निर्धारित किया था।[8] इन सभी पर राजा का नियंत्रण था। शुक्र लिखते हैं कि उसे हर साल गाँवों, पुरों, देशों में जाकर देखना चाहिए कि अधिकारी प्रजा के साथ किस तरह का व्यवहार करते हैं और स्वयं निर्णय लेते हुए अपने अधिकारियों को प्रजा के हित में कार्य करने के लिए प्रेरित करना चाहिए।

मौर्य प्रशासन में कौटिल्य के अनुसार दो प्रकार के न्यायालय होते थे :– धर्मस्थानिक एवं कंटकशोधन, जिनमें क्रमशः दीवानी तथा फौजदारी मुकदमों की सुनवाई होती थी। मुख्य न्यायाधीश को धर्माधिकारी कहा जाता था।[9] अर्थशास्त्र में जिन अन्य न्यायाधीशों का उल्लेख है, वे हैं धर्मस्थ, अमात्य और प्रदेष्टा, जो मूलतः कार्यपालक अधिकारी थे। कौटिल्य ने 'सर्वाधिकरणरक्षणं' वाले अध्याय में कहा है कि दोषी न्यायाधीशों पर समाहर्ता के न्यायालय में मुकदमा चलाया जाए और प्रदेष्टा समाहर्ता की सहायता हेतु वहाँ रहे। न्यायाधीशों को दण्ड का प्रावधान था यदि वह अकारण पक्षकारों को रूष्ट करते थे अथवा उन्हें अपमानित तथा उनके साथ पक्षपातपूर्ण रवैया अपनाते थे। इनमें से किसी एक कारण से भी उन पर जुर्माना होता था तथा दूसरी बार दोषी पाए जाने पर पदच्युत किया जाता था।[10] अशोक ने अन्यायपूर्ण बंदीकरण तथा अपर्याप्त आधारों पर दोषारोपण रोकने के लिए धर्ममहामात्रों की नियुक्ति की थी।[11]

गुप्तों तथा कुषाणों के उत्कीर्ण लेखों से पता चलता है कि न्याय प्रशासन तथा अपराध नियंत्रण के लिए कुछ अधिकारियों की व्यवस्था थी। गुप्त काल में 'महादण्डनायक' होता था, जो मजिस्ट्रेट या पुलिस का प्रीफैक्ट समझा जाता था।[12] ऐसा प्रतीत होता है कि उसमें सैनिक, न्यायिक तथा पुलिस संबंधी अधिकार समाहित थे। इस पदाधिकारी का उल्लेख दक्षिण तथा उत्तर भारत के उत्कीर्ण लेखों में मिलना इस तथ्य का संकेत करता है कि यह गुप्तकाल में अति महत्वपूर्ण एवं संवेदनशील पद था, जिस पर सम्राट अपने अति विश्वासपात्र को नियुक्त करता था। पुलिस तथा न्याय

से संबंधित अनेक पदाधिकारियों का 'कामंदक नीतिसार' एवं उत्कीर्ण लेखा द्वारा पता चलता है। अनेक प्रकार के न्यायालय होने से ज्ञात होता है कि न्याय व्यवस्था काफी उन्नत थी।

गुप्तकाल में न्यायिक पदाधिकारियों में, जीवितगुप्त के देव वारणार्क उत्कीर्ण लेख में दांडिक, चौरोधरणिक तथा दंडपाषिक का उल्लेख है। 'दांडिक' जिसका अर्थ है – दंड देने वाला, जो या तो कोई न्यायिक अधिकारी रहा होगा, अथवा डंडा लेकर चलने वाला कोई पुलिा अधिकारी होगा। 'चौरोधरणिक' अर्थात् चोरों को नष्ट करने वाला, अवश्य ही कोई पुलिस अधिकारी रहा होगा जिसका काम चोरों को भद्र इलाकों से खदेड़कर जंगलों में विस्थापित करता था और दंडपाषिक पुलिस का वह सिपाही होता था जो बंदी बनाने के लिए बेडियां, हथकडियां और फंदा लेकर चलता था। 'चट' और 'भट' छोटे स्तर के पुलिस कर्मचारी होते थे, जिनका काम दस्युओं अथवा राजद्रोहियों को पकड़ना होता था। यह भी ज्ञात होता है कि 'विनयशूर' अर्थात् अभिवेचक के अधीन बाल न्यायालयों की व्यवस्था थी। 'विनय स्थिति स्थापक' कानून व्यवस्था संचालित करता था तथा 'न्यायकरणिक' भूमि संबंधी मामलों की विवेचना करता था।[13] इनमें से शूद्रक द्वारा रचित 'मृच्छकटिकम्' के अलावा कहीं इन न्यायालयों की कार्य पद्धति का वर्णन नहीं है। इस नाटक में न्यायाधीश (अधिकारणिक) की सहायता के लिए एक 'श्रेष्ठी' और एक 'लिपिक' (कायस्थ) की व्यवस्था थी। इससे अनुमान होता है कि न्यायापालिका में अशासकीय तत्व भी रहता था।''[14] न्यायिक एवं कार्यपालिका शक्तियाँ एक ही व्यक्ति में निहित थीं, जो निवारक एवं 'शोधक' के रूप में कार्य करता था।

पाल वंशीय अभिलेखों में भी कानून व्यवस्था एवं न्याय प्रशासन संबंधी कर्मचारियों का उल्लेख है, परंतु उन पदों में कोई नवीन नाम दृष्टिगोचर नहीं होता। दंडशक्ति, दंडपाशिक, चौरोधरणिक, देशापराधिक व दांडिक का सबसे पूर्व के अभिलेखों में भी उल्लेख है।

सूक्ष्मता से देखने पर ज्ञात होता है कि दक्षिण में न्याय के प्रशासन का पूरी तरह विकेंद्रीकरण कर दिया गया था। राष्ट्रकूटों के शासन में ''धर्माधिकरण'' अर्थात् मुख्य न्यायाधिपति और पुरोहित सर्वोच्च न्यायिक प्राधिकारी के रूप में कार्य करते थे। उनके अभिलेखों में न्यायालयों के बारे में कोई जानकारी नहीं मिलती, परंतु उनमें 'दंडपाशिक' अथवा 'चौरोधरणिक' का उल्लेख मिलता है। गाँव का मुखिया अपने क्षेत्र में पुलिस व्यवस्था का अध्यक्ष होता था और ग्राम सभाएँ स्थानीय विवादों का फैसला करती थीं। इस काल में आए विदेशी यात्री सुलेमान ने राजा के न्यायालयों के अतिरिक्त लोक न्यायालयों का उल्लेख किया है।[15] न्यायिक निकाय के रूप में ग्राम परिषद में महाजन (बड़े–बूढ़े एवं प्रतिष्ठित लोग) सम्मिलित होते थे। उनके निर्णयों तथा दीवानी डिग्रियों को उच्चतर प्राधिकारी कार्यन्वित कराते थे। दक्षिण के लेखक सोमदेव के अनुसार, राजा के न्यायालयों में कोई मुकदमा सीधा नहीं पहुँचता था, अपितु ग्राम परिषदों के निर्णय के विरूद्ध अपील के रूप में ही दायर किया जा सकता था। अतः इन न्यायालयों को अपीलीय क्षेत्राधिकार था और जूरी के सदस्य सभ्य कहलाते थे।

अंततः हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि आंतरिक व्यवस्था एवं सुशासन हेतु प्राचीन भारत की राजतंत्रीय व्यवस्था में भी एक ऐसी कार्यदायी संस्था का विकास हुआ था, जिसे हम आज की 'पुलिस' व्यवस्था का पर्याय मान सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. पं0 रघुनंदन शर्मा : वैदिक संपत्ति, दयानंद् संस्थान प्रकाशन नई दिल्ली।
2. डॉ0 के0सी0 श्रीवास्तव : प्राचीन भारत का इतिहास एवं संस्कृति, यूनाइटेड बुक डिपो, इलाहाबाद।
3. श्री श्रीनारायण चतुर्वेदी : सरस्वती पत्रिका, इण्डियन प्रेस (पबलिकेशंस) प्रा0लि0, प्रयाग।
4. डॉ0 विद्याधर महाजन : प्राचीन भारत, एस0 चाँद पब्लिकेशंस, नई दिल्ली।
5. प्रो0 द्विजेन्द्र नाथ झा : प्राचीन भारत का इतिहास, हिंदी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, नई दिल्ली।
6. श्री रामधारी सिंह दिनकर : संस्कृति के चार अध्याय, लोकभारती प्रकाशन, नई दिल्ली।
7. पी0एन0 चोपड़ा, बी0एन0 पुरी एवं एम0एन0 दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, मैकमिलन इंडिया लिमिटेड
8. Jawahar Lal Nehru : The Discovery of India, Meridian Books (UK)
9. पी0एन0 चोपड़ा, बी0एन0 पुरी एवं एम0एन0 दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, मैकमिलन इंडिया लिमिटेड
10. एच0सी0 रायचौधरी : प्राचीन भारत का राजनैतिक इतिहास, एम0जे0 पी0 पब्लिशर्स।
11. वही
12. वही
13. K.A.N. Shastri : A History of South India, Oxford India.
14. K.A.N. Shastri : A History of South India, Oxford India.
15. डॉ0 के0सी0 श्रीवास्तव : प्राचीन भारत का इतिहास एवं संस्कृति, यूनाइटेड बुक डिपो, इलाहाबाद।

***

मध्यवर्गीय एवं कस्बाई जीवन की बदलती स्थिति एवं अखिलेश की कहानियाँ

*दिनेश कुमार यादव**

प्रस्तावना :

यह शोध–पत्र मेरे द्वारा गहन अध्ययन के उपरान्त लिखा गया है। इसमें मैंने यह बताने का प्रयास किया है कि अखिलेश जी की कहानियों में पूँजीवाद के गर्भ से निःसृत बाजारवाद की उपभोक्तावादी संस्कृति ने मध्यवर्गीय एवं कस्बाई जीवन में किस स्तर तक परिवर्तन ला दिया है। उपभोक्तावादी संस्कृति ने मध्यवर्गीय समाज की जीवन शैली उनके मूल्यों एवं विचारों को किस प्रकार और कितना बदल दिया है और अखिलेश की कहानियाँ किस हद तक इस परिवर्तन या बदलाव की प्रक्रिया को चित्रित करने में सफल रही है, यही दिखाना इस शोध–पत्र का मुख्य उद्देश्य है।

प्रमुख शब्द : मध्यवर्ग, कस्बाई जीवन, पूँजीवाद, बाजार, उपभोक्तावाद, संस्कृति, अवसर, लालच, अपसंस्कृति, भ्रष्टाचार, शहरी जीवन, प्रेम आदि।

शोध विस्तार :

वर्तमान सदी के हम जिस दौर में हम जी रहे हैं वह अर्थव्यवस्था की दृष्टि से पूँजीवाद और विचारधारा की दृष्टि से उत्तर आधुनिकतावाद का है। ये दौर यदि एक तरफ मानवीयता को नए सरोकार प्रदान कर रहा है, तो दूसरी तरफ अनेक विकृतियों एवं व्रिदूपताओं को भी जन्म दे रहा है। बाजारवाद एवं सांस्कृतिक संक्रमण की प्रक्रिया में मध्यवर्गीय व कस्बाई समाज की स्थिति में व्यापक परिवर्तन ला दिया है। शहर तो शहर, गाँव में भी यह आर्थिक, सांस्कृतिक, सामाजिक परिवर्तन मध्यवर्गीय एवं निम्न मध्यवर्गीय लोगों के विचार, विकल्प, चयन, रहन–सहन, वेशभूषा को व्यापक तौर प्रभावित कर रहा है। परिवर्तन की इसी प्रक्रिया और बयार को पकड़ने का प्रयास करती हैं अखिलेश जी की कहानियाँ। अपने संस्मरण में वे लिखते हैं– ''किसी समाज में बाजार के नियामकों का वर्चस्व तब तक स्थापित नहीं हो पाता जब तक सच्चे मनुष्य और मूल्य बचे रहते हैं। इसीलिए बाजार की ताकतें हमारे समय की थोड़ी सी बची हुई सच्चाई, नैतिकता और इन्सानियत पर घात लगा रही हैं।..... घोषित किया जा रहा है यह वैभवपूर्ण एवं भोगमय संसार ही असल हकीकत है। आपके पास जो दुःख, संघर्ष और असुन्दर है, अपवाद है, नैतिकता, मूल्यपरकता, सच्चाई तो फैंटेसी हैं।''(1)

इसमें कोई सन्देह नहीं है कि आज मध्यवर्गीय व कस्बाई समाज में हो रहे मूल्य परिवर्तन, बदल रही महत्वाकांक्षाएँ, ध्वस्त हो रहे मूल्यों से उत्पन्न हो रही विसंगतियों का मुख्य कारक बाजार एवं उपभोक्तापरक संस्कृति ही है जो महानगरों से कस्बों, गाँवों में प्रवेश कर रही है। निम्न मध्यवर्गीय एवं कस्बाई युवा वर्ग प्रेम एवं रोजगार की दोहरी आकांक्षा के साथ करियरिज्म को भुनाने का पूरा–पूरा प्रयास कर रहा है। और तो और इसने शासन एवं सत्ता के चरित्र को भी क्रूर एवं विभत्स बना दिया है। राजनीति आज के युवाओं हेतु सेवा भाव व सामाजिक परिवर्तन का आदर्श न होकर भोग करने, शोहरत, रौब एवं अकूत सम्पत्ति जमा करने का माध्यम बन गई है। इसे प्राप्त करने के लिए वह किसी भी हद तक जाने को तैयार है, यहाँ तक स्वयं के परिवार को भी वह इस हेतु बलि चढ़ाने के लिए तैयार है। मधुरेश इसी ओर इशारा करते हुए लिखते हैं– ''उनकी कहानियों में ग्रामीण व कस्बाई पात्र महानगर के जटिल और भयावह होते यथार्थ से टकराते और लहूलुहान होते हैं।''(2) कहना न होगा कि 1990 के दशक से लेकर वर्तमान तक आर्थिक लोकलुभावनवाद, वैश्वीकरण और वैश्वीकरण के अन्य रूपों का शोर जिस तीव्रता के साथ उभरा, उसने अवसर एवं अवसाद दोनों को एक साथ जन्म दिया। इस शोर की प्रतिध्वनि निस्सन्देह कस्बाई समाज तक भी पहुँची। आज युवा वर्ग जहाँ एक ओर रोजगार, प्रेम, समृद्धि की कदम बढ़ाकर अपने लिए नए आयाम खोज रहा है वहीं, दूसरी ओर वह जीवन की सहजता से कटता जा रहा है। मूल्यहीनता, उच्छृंखलता उपभोग एंव प्रतिस्पर्द्धा की प्रवृत्ति

* शोधार्थी, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर

उसे जमीन से काट दे रही है। मानवीय सम्बन्धों की हत्या आज आम बात हो जा रही है। अखिलेश जी की कहानियाँ 'चिट्ठी', 'बायोडाटा', 'अगली शताब्दी के प्यार का रिहर्सल', 'शापग्रस्त', 'हाकिम कथा', 'ऊसर' इसी यथार्थ को चित्रित करती हैं।

आज के समय में बाजार ने प्रेम की परिभाषा बदल दी है। वर्तमान समय प्रेम में सीरत के स्थान सूरत और दिल बड़ा होने के बजाय जेब व हैसियत बड़ी होने की माँग करता है। वह दौर अब नेपथ्य में चला गया जहाँ विश्वास, भरोसा और आत्मसम्मान, गरिमा को ही प्रेम की परिभाषा में शामिल किया जाता था। 'अगली शताब्दी के प्यार का रिहर्सल' कहानी के पात्र दीपा और जितेन्द्र एक दूसरे के करीब इसलिए आते हैं, जिससे दोनों का स्वार्थ सिद्ध हो सके। दीपा जितेन्द्र से इसलिए प्रेम करती है क्योंकि वह भविष्य का आई.ए.एस. ऑफिसर है, तो वहीं जितेन्द्र दीपा से प्रेम इसलिए करता है क्योंकि दीपा के एडवोकेट पिता के पास अतुल सम्पत्ति है। अखिलेश दीपा के बारे में लिखते हैं– ''जितेन्द्र को प्यार करने के सुपात्र पाने के कारण थे..... वह प्रखर बुद्धिजीवी था, जो आई.ए.एस. की तैयार कर रहा था। पहला विवाह करते समय जाँति–पाँति का कोई लफड़ा नहीं होना था, क्योंकि जितेन्द्र उसी कास्ट का था, दूसरे जितेन्द्र के घरवालों की दशा कुछ खास अच्छी नहीं तो बुरी भी नहीं थी।''[3] इसके साथ ही जितेन्द्र पूर्व में कॉलेज स्तर पर बैडमिंटन का अच्छा खिलाड़ी भी रहा था और सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि जितेन्द्र पहली बार में आई. ए.एस. साक्षात्कार भी दे चुका था। वहीं दूसरी ओर आरम्भ में दीपा को कुछ खास पसन्द न करने वाले जितेन्द्र को ''जब पता चला कि दीपा इकलौती संतान है और पिता बहुत धनी हैं। साथ ही, राजनीति में भी उनके सितारे चमकाने के आसार हैं, तो विचारों में आमूलचूल परिवर्तन आ गया। वह सचमुच दीपा से प्यार करने लगा।''[4]

वहीं इन दोनों से परे हटकर दीपा के पिता एडवोकेट विपिन सिंह भी अपनी बेटी के माध्यम से अपनी राजनीतिक महत्वाकांक्षा को साधने की जुगत में थे। वह अपनी बेटी की शादी प्रदेश अध्यक्ष के भतीजे से करके अपनी उम्मीदवारी और टिकट प्राप्ति के प्रति पूर्णतः आश्वस्त हो जाना चाहते थे, लेकिन जब उन्हें दीपा और जितेन्द्र के प्रेम की खबर पता चली तो उनके पाँव तले की जमीन खिसक गई। इस सम्बन्ध में अखिलेश जी परिहास की शैली में कहते हैं– ''जनजीवन और राजनीति का सम्बन्ध पानी और काई होता है। इसलिए चर्चा उड़ते–उड़ते विपिन सिंह एडवोकेट के पास पहुँची तो उन पर वज्रपात हुआ, क्योंकि वह इस हिकमत में थे कि दीपा की शादी किसी तरह पार्टी अध्यक्ष के भतीजे से हो, ताकि टिकट मिलने की उम्मीद और बढ़ जाए।''[5] स्पष्ट है कि दीपा, जितेन्द्र और एडवोकेट विपिन सिंह उसी अवसरवाद और लोलुपता के प्रतीक हैं, जिनका जन्म तथाकथित पूँजीवादी बाजार से हुआ है, यह पवित्र माने जाने वाले पिता–पुत्री, प्रेम आदि सम्बन्धों में गहरे स्तर पर सेंध लगा चुका है।

'हाकिम कथा' का पात्र पुनीत भी गायत्री से इसी मतलब से प्रेम और शादी करता है, क्योंकि गायत्री के पास काफी सम्पत्ति थी। गायत्री का झुकाव भी पुनीत की ओर इसलिए था क्योंकि पुनीत के पिता भी एक नौकरशाह थे, लेकिन यह सत्य है कि यदि सम्बन्धों का आधार मात्र धन या सामाजिक प्रतिष्ठा ही होती है तो ऐसे सम्बन्धों की आयु अत्यल्प लघु होती है; कि आखिर भावनाओं से रहित सामाजिक सम्बन्ध कब तक एक–साथ चल पाएँगे, अन्ततः टूटना उनकी नियति है। गायत्री एवं पुनीत के सन्दर्भ में भी यही हुआ, अन्त में दोनों में तलाक हो गया।

कस्बाई जीवन के मध्यवर्गीय समाज की विडम्बना एवं त्रासदी (उपभोक्तावाद एवं बाजारवाद) को अखिलेश जी की दो सबसे महत्वपूर्ण कहानियों 'शापग्रस्त' एवं 'जलडमरूमध्य' में देखा जा सकता है।

मनोज पाण्डेय लिखते हैं कि– ''....जलडमरूमध्य उत्तर उदारीकरण वाले युग की दिशा हीनता और सब कुछ अर्थवाले समय का दहलाने वाला वृत्तान्त है, जहाँ हर तरह के रिश्ते–नाते उम्र भावनाएँ और सभी कुछ का सम्बन्ध स्वार्थ की कसौटी पर चढ़ा दिए गए है।।''[6] इस कहानी में सहाय जी, उनकी पत्नी तथा उनके बेटे व बहू की कहानी है, जिसमें सहाय जी के गाँव, कस्बा चिरैयाकोट व महानगर दिल्ली है। इन तीनों के माध्यम से ही उपभोक्तावादी संस्कृति की कथा कही गई है। इसमें सहाय जी अपने बुढ़ापे में किसी विचित्र प्रकार की बीमारी से ग्रसित हो गए हैं, अर्थात् भावशून्यता की बीमारी। उनके इस प्रकार के विचित्र व्यवहार से परेशान होकर सहाय जी की पत्नी उनका इलाज कराने के लिए अपने बहू–बेटे के पास दिल्ली ले जाती हैं। दिल्ली स्टेशन पर बहू मनजीत सिगरेट फूँकते हुए उनका इन्तजार करती है। जब सहाय जी दिल्ली पहुँचते है, तो उनके लम्पट बहू–बेटे उनके स्वास्थ्य की चिन्ता न करके चिरैयाकोट

एवं गाँव की जमीन, जायदाद व मकान बेचने की जुगत लगाने लगते हैं, ताकि दिल्ली में स्वयं के ऐसो–आराम के लिए फार्म हाउस बनवा सकें। अपने इस प्रयास में वे सहाय जी को 'इमोशनल ब्लैकमेल' करने से भी बाज नहीं आते हैं। इस कहानी में सहाय जी बेटे–बेहू की कपटपूर्ण नियत को बखूबी समझ रहे होते हैं। वह गाँव के 22 कमरे के मकान, जिसमें चाची अकेले रहती हैं, बगीचे तथा चिरैयाकोट के प्रति आत्मिक लगाव के कारण बेटे–बहू के इरादे को असफल करने की पूरी कोशिश करते हैं किन्तु वे स्वयं असफल होते हैं। चिरैयाकोट के सहाय जी उपभोक्तावादी संस्कृति, जो उनके बेटे और बहू के रूप में सामने खड़ी हुई है, उसके आगे हार जाते हैं और अपने पुश्तैनी गाँव और चिरैयाकोट की जड़ों से उखड़ जाते हैं। मनजीत और चिन्मय के कुचक्र और पत्नी कौशल्या के भावनात्मक चक्रव्यूह में फँसकर सहाय जी 'फार्म हाउस बनवाने के लिए दुःखी मन से गाँव और चिरैयाकोट की जमीन जायदाद बेच डालते हैं। यहाँ दिल्ली, बाजारवाद के उस बड़े–बड़े शॉपिंग मॉल्स का उदाहरण है, जो छोटे उद्योग–धन्धों को निगलता जा रहा है। मनजीत–चिन्मय उस विकृत उपभोक्तावादी मूल्यों के परिणाम है, जो भारतीय संस्कृति व मूल्यों के प्रतीक सहाय जी को अपने मायाजाल में फँसाते चले जा रहे हैं।

महानगरों की इस अपसंस्कृति ने सामाजिक सम्बन्धों की परिभाषा बदल दी है। समृद्धि व उपभोग, दिखावे की झूठी लालसा ने पति–पत्नी के सम्बन्धों को समझौतावादी बना दिया है। महानगरों में अब तो व्यभिचार जैसे शब्द भी बहुत सामान्य से हो गए हैं।

मनजीत और चिन्मय दोनों ही लम्पट और व्यभिचारी हैं। मनजीत यह बात जानती है कि उसका पति कई औरतों एवं लड़कियों से अवैध सम्बन्ध रखता है और चिन्मय भी यह बात जानता है कि उसकी पत्नी ऑफिस में अपने बॉस के सथ–साथ कई अन्य लोगों से अवैध सम्बन्ध रखती है, फिर भी दोनों आपस में समझौतावादी हो जाते हैं। यह समझौता उसी अपसंस्कृति की उपज है, जिसने व्यक्ति को लिजलिजा बना दिया है। मनजीत जानबूझकर ऐसे कपड़े पहनती है, जिससे उसके स्त्रियोचित अंग उभरें और उसके बॉस को दिखें ''एक दिन शौक–शौक में चिन्मय की पत्नी मनजीत ने भी पैन्ट के ऊपर कुर्ता पहन लिया था। वह अपने पर मुग्ध हो गई थी। कुर्ते के भीतर से उसके भारी स्तन बहुत कामोत्तेजक लग रहे थे, इस बात को वह जान चुकी थी। इसलिए वह उसी कुर्ते में बॉस से मिली थी।''[7] यह कमाल बाजार के उस विज्ञापन का है, जिसने स्त्री की गरिमा व आत्मसम्मान को अन्दर से खत्म करके उसका 'मार्केटाइजेशन' और 'कमोडीफिकेशन' कर दिया है।

'शापग्रस्त' कहानी कस्बाई व मध्यमवर्गीय जीवन की उस त्रासदी को व्यक्त करती है, जिसमें एक अच्छा–खासा जीवन जीने वाला व्यक्ति स्वयं के जीवन को बर्वाद कर देता है। इस कहानी में एक तरफ तो स्वार्थ, लालच, लिप्सा है, तो दूसरी तरफ एक आत्मग्रस्त युवक 'प्रमोद वर्मा' के सुखी होने की असफल चाह है। 'प्रमोद' जो एक मध्यवर्गीय युवक है, जिसका अपना परिवार है, जिसमें पत्नी व बेटी हैं, उनके साथ अच्छा खासा खुशहाल जीवन व्यतीत कर रहा होता है। शादी के सात साल बीत जाने पर भी पत्नी सरोज की खूबसूरती की प्रशंसा करते हुए नहीं थकता। पत्नी की हर माँग पूरी करता, लेकिन एक दिन अचानक सारी स्थितियाँ उलट जाती हैं। सरोज के घर में चहकने वाली खुशी एकाएक गुम हो गई। कारण था प्रमोद के सुखी होने की चाह, जबकि प्रमोद को खुद नहीं पता कि आखिर उसकी खुशी क्या है ? वह सुखी कैसे हो सकता है। वह खुशी पाने के चक्कर में विचित्र हरकतें करने लगता है। उसे लगा कि शायद उसे लेखक 'बनने से खुशी मिले इसलिए नौकरी से सस्पेण्ड हो गया, किन्तु उसे उसमें भी खुशी न मिली। इसी तरह वह अनेक प्रयोग करता रहा किन्तु उसे कहीं भी खुशी नहीं मिली। लेकिन वास्तव में उसके दुःखी होने का कारण था उसकी आत्मा का मर जाना। वह विचार करता है तो जान पाता है कि ''मैं आदर्श भारतीय नागरिक तरह बांई पटरी पर चला और सच्चे भारतीय पुरुष की तरह अहर्निश गृहस्थी का खड़खड़ा खींचा। पत्नी द्वारा रोज–रोज फजीहत के बावजूद में बेशर्म पौधे की तरह हरा–भरा खिला रहा।''[8] स्पष्ट है कि व्यक्ति जब अपने मनुष्य होने के गुरुतर दायित्व को निभा पाने में असमर्थ रहता है, तो उसकी स्थिति प्रमोद जैसी होती है।

इस कहानी का दूसरा पक्ष लालच, स्वार्थ से भी जुड़ा है। रिश्वतखोरी, कमीशन, व्यभिचार जैसी सामाजिक बुराईयाँ आज सामान्य हो गई हैं। लोक–निर्माण का कार्य लोक से लूट का अड्डा बन गया है, इस कहानी का प्रमुख मुद्दा है।

नब्बे के दशक के दौरान भारतीय समाज एवं अर्थव्यवस्था में हुए बदलाव, को राजनीति में भी महसूस किया जा सकता है। गठबन्धन की राजनीति ने भारत में राजनीतिक मूल्यों का व्यापक क्षरण किया है। राजनीति अब अच्छा खासा फलने–फूलने वाला व्यवसाय बन गई, उसके जन सरोकार से सम्बन्ध विच्छेद होने लगे। कारण यह है कि बाजार और उपभोक्तावादी–संस्कृति, राजनीति में घुसकर उसे दीमक की तरह अन्दर से खोखला करने लगी है। बाजार अब चन्दे व शेयर उपलब्ध करवाता है और सरकारें उन्हें 'अनुकूल नीतियाँ और आर्थिक संसाधन। फलतः भ्रष्ट राजनीति अब युवाओं का आकर्षण बनने लगी। भारतीय युवा संसाधन अब राजनीतिक भ्रष्टाचार की मशीनरी में खपने लगा। उसे सपने दिखाए जाने लगे। कभी न पूरे होने वाले इन सपनों की पूर्ति के लिए वह अपने पारिवारिक व सामाजिक मूल्यों, दायित्वों को भी दाँव पर लगाने को तैयार है। 'बायोडाटा' कहानी का राजदेव और 'ऊसर' कहानी का 'चन्द्रप्रकाश' जैसे युवक राजनीति की इस दहकती भट्टी में झुलसने वाले हैं। राजदेव राजनीति में प्रदेश स्तर का पद प्राप्त करने के लिए अपनी गर्भवती पत्नी की भी उपेक्षा कर देता है। वह अपने पास आए पत्नी के पत्र को फाड़कर फेंक देता है, जबकि उसकी पत्नी की तबीयत सचमुच बहुत खराब रहती है, किन्तु वह मोतीसिंह के माध्यम से अपने राजनीतिक करियर को चमकाने के लिए दिल्ली निकल जाता है। राजदेव की अपनी पत्नी के प्रति सामाजिक सोच को इस कथन के माध्यम से समझा जा सकता है– ''हम लोगों के लिए राजनीति जीवन संगिनी है और जीवन संगिनी रखैल। जो रखैल को जीवन संगिनी समझता है, लक्ष्य उससे सदैव दूर रहता है।''[9] ऐसे में जाहिर है परिवार, पत्नीं, बच्चे किसी भी 'दृढ़ प्रतिज्ञ' राजनेता के लिए बाधा के समान ही होंगे।

'उसर' के चन्द्रप्रकाश की भी कमोवेश यही स्थिति है। इन्टर मीडिएट की परीक्षा देने के बाद मुहल्ले के एक नेता जी की कृपा से वह राजनीतिक मशीनरी में प्रतिदिनि घिसने वाला कलपुर्जा बन गया। हुआ यूँ था कि मुहल्ले के नेताजी ने चन्द्रप्रकाश को एक छोटे–मोटे मारपीट के झगड़े में पुलिस केस से बचा लिया था, जिससे चन्द्रप्रकाश उस दिन से नेताजी के अवतारित रूप से अभिभूत हो गया। नेता जी द्वारा आकर उसे बचा लेना मानो उसी प्रकार था, जैसे किसी घोर संकट में फँसे, मानव प्राणी के आत्मिक पुकार से स्वयं करुणा निधान धरती पर अवतरित होकर अपने भक्त को उस संकट से उबार लिया हो। इस ओर व्यंग्यात्मक लहजे में अखिलेश जी लिखते हैं– ''इससे चन्द्रप्रकाश श्रीवास्तव इतना प्रभावित हुआ कि नेता जी को देवता की पदवी प्रदान कर दी। देवता ने बाद में उसकी मदद से अपने कुछ विरोधियों, राक्षसों का सरेआम मानमर्दन करवाया था।''[10] जाहिर है कि कलियुग के करुणा निधान निःस्वार्थ सर्विस देने वाले कहाँ थे, उन्हें तो बदले में भक्ति की चरम उत्कटता प्राप्त करनी थी। अतः उसे भी अपने राजनीतिक स्वार्थ के लिए प्रयोग करने लगे।

परिवार में पिता की मृत्यु के बाद बहन की शादी और माँ की देखभाल का दायित्व उसी के ऊपर था, किन्तु यह दायित्व चन्द्रप्रकाश भली भाँति निभा न सका और उसी राजनीतिक मशीनरी में वह खप गया, जो करोड़ों युवाओं को उचित शिक्षा, कौशल व रोजगार देने के बजाय उसे पूरी तरह से बंजर बना दे रही है।

ऐसा नहीं है कि चन्द्रकाँन्त को अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियों का भान नहीं है। बीच–बीच में चन्द्रकाँत को अपने पारिवारिक उत्तरदायित्व का बोध होता है, लेकिन विडम्बना यह है कि उसे यह आत्मबोध तब ही होता है जब वह महिन्द्रा एण्ड महिन्द्रा जीप और टैक्सी टैण्ड का ठेका प्राप्त करने में नाउम्मीद हो जाता है।

कोई भी रचनाकार अपनी रचना प्रक्रिया में उन्हीं संवेदनाओं एवं अनुभवों को रचता है, जिसे उसने अपने निजी जीवन में भोगा होता है। इस दृष्टि से देखा जाए तो अखिलेश द्वारा यदि अपनी कहानियों में निम्न मध्यवर्गीय और कस्बाई जीवन की दास्तान कहते हैं, तो इसका मूल कारण यही है कि वे स्वयं उसी निम्न मध्यवर्ग एवं कस्बाई जीवन से आए हैं। वे इस समाज के बदलाव, अभाव व आर्थिक स्थिति को, युवा वर्ग की सोच को उसी रूप में चित्रित कर देते हैं, जिस रूप में वह उनके अनुभव में व्यतीत हुआ है। उनकी कहानियों में आया यह कस्बा वैसे तो इलाहाबाद के आस–पास का है, लेकिन भारतीय सत्ता प्रणाली एवं अर्थव्यवस्था ने भारतीय समाज को जिस स्थिति में पहुँचा दिया उसके कारण प्रयागराज और सुल्तानपुर के ये बीच में स्थितये कस्बे अपने भूमिगत दायरे को लांघकर सम्पूर्ण भारत के कस्बे का प्रतिबिम्ब बन गया है।

'जलडमरूमध्य' में चिरैयाकोट की तरह भारत के छोटे कस्बे अन्धाधुन्ध बाजारीकरण के आगोश में जाते दिख रहे हैं। इसका स्वाभाविक दुष्परिणाम है 'लाउडस्पीकर का कानफोडू आवाज', दुकानों की भरमार और सामान्य जीवन में सहजता और शान्ति के स्थान पर एक प्रकार के भय एवं कोलाहल का प्रवेश। इससे सहाय साहब, जो वर्षों से चिरैयाकोट में बसे हैं, उसे छोड़कर वापस अपने गाँव में जाकर शान्तिपूर्वक जीवन जीना चाहते हैं। इसको लेकर चिरैयाकोट में उनके पड़ोसियों में तमाम प्रकार की सतही बहस चल रही होती है ''सहाय जी के अजीज दोस्त मकबूल साहब का अनुमान सभी से जुदा था। उनका कहना था सहाय साहब घबराहट की वजह से शहर से रुखसत नहीं हो रहे हैं। हाँ.....हाँ 'शहर में ताबड़तोड़ बन रही दुकानों से उनको घबराहट होने लगी थी। उन्होंने कई बार यही बात मुझसे कही है कि इतनी दुकानों के बनने से चिरैयाकोट बरबाद हो जाएगा। सब जगह दुकानें हो जाएँगी तो बच्चे खेलेंगे कहाँ और हम बूढ़े लोग सुबह की सैर कहाँ करेंगे।''(11)

जाहिर तौर पर उसके मूल में बाजारीकरण का प्रवेश है, जिसने वहाँ का सुकून छीनकर व्यक्ति को पलायन की ओर ढकेल दिया है, व्यक्ति को एक विचित्र प्रकार की उपेक्षा एवं तिरस्कार पूर्ण जीवन जीने को बाध्य कर दिया है। 'हाकिम कथा' की कहानी जीवन में उभरती मूल्यहीनता और अवसरवादिता को नग्न ढंग से प्रस्तुत करती है, जिसके मूल में शहरी जीवन की शहरी संस्कृति ही है। कहना न होगा कि कस्बाई जीवन में इच्छाओं और लालसाओं की जो मरीचिका रची जा रही है जो महानगरों से मनजीत एवं चिन्मय से निकलकर दीपा–जितेन्द्र, पुनीत–गायत्री व राजदेव के माध्यम से निम्न मध्य वर्गों, कस्बों में प्रवेश करती जा रही है। लालच एवं अवसर की यह मरीचिका ग्रामीण एवं कस्बाई जीवन के मूल्यों को पूरी तरह से धराशाही करता जा रहा है, जिससे बचने बचाने की छटपटाहट व अनुगूँज अखिलेश जी कहानियों में हमें निरन्तर सुनाई देती है।

बदलती हुई प्रवृत्तियों को अखिलेश जी अपनी बेमिशाल शिल्प संरचना के माध्यम से बिम्बात्मक, प्रतिकात्मक ढंग से अपने समय की त्रासदी व विडम्बना का संसार रचते हैं। एक अजीब विचित्रता एवं असमान्यता उनकी कहानियों में प्रतीकात्मक ढंग से नजर आती है। यह प्रतीक उसी विचित्रता एवं असमानता का है, जो कस्बाई समाज में धीरे–धीरे प्रवेश करता जा रहा है जैसे बायोडाटा कहानी में राजदेव एवं सावित्री को अजीबों–गरीब संतान होती है, ''उसके मुँह से हमेशा चारों पहर सोते–जागते लार बहती रहती थी। वह लार में लिपटी संतान थी मानो उसके पेट में लार ही हो।''(12) कहा जा सकता है कि यह अजीबों–गरीब संतान उसी कस्बे का प्रतीक है, जो उपभोक्तावादी अपसंस्कृति की भेंट चढ़ गया है।

सन्दर्भ :

1. वह जो यथार्थ था, अखिलेश, राधा कृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 121
2. हिन्दी कहानी का विकास, मधुरेश, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद (प्रयागराज), पृ .184
3. शापग्रस्त अखिलेश, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 77
4. वही, पृ. 78
5. वही, पृ. 82
6. प्रतिनिधि कहानियाँ, अखिलेश (भूमिका से) राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 8–9
7. शापग्रस्त अखिलेश, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 141
8. वही, पृ. 11–12
9. वही, पृ. 66
10. वही, पृ. 108
11. वही, पृ. 132
12. वही, पृ. 69

***

राष्ट्रीय आंदोलन में छत्तीसगढ़ के मुस्लिम समाज का योगदान

*शाहिना खान एवं डॉ. शम्पा चौबे**

विश्वबंध महात्मा गांधी ने भ्रमित मानव समाज को स्नेह ,सहानुभूति ,करुणा और आत्मबल का ऐसा मार्ग दिखाया है जो निरंतर आनन्द का पर्याय बन गया है। सन् 1920 के कुछ पूर्व गांधी जी ने भारतीय राजनीति में सक्रिय रुप से भाग लिया तथा उन्होंने भारतीय जनता को ऐसे नए कार्यक्रम दिये जिनकी और सर्वसाधारण जनता का ध्यान आकर्षित हुआ।[1]

सन् 1920 में रोलेक्ट एक्ट पास हुआ जिसके खिलाफ सारे देश में गांधी जी ने आवाज बुलंद की और यह वह समय था जब देश का नेतृत्व तिलक जी के हांथों से गांधी जी के हांथों आया। इस ऐक्ट के विरुद्ध गांधी जी ने सत्याग्रह की घोषणा की। उसी माह इतिहास प्रसिद्ध जलियावाला बाग की घटना घटी। इस हत्याकांड ने सारे देश में अंग्रेजी सत्ता के विरुद्ध आक्रोश की भावना में वृद्धि हुई।[2]

सन् 1920 में गांधी जी ने खिलाफत कमेंटी को अंग्रेजी हूकुमत के खिलाफ अहिंसा असहयोग आंदोलन छेड़ने की सलाह दी। 9 जून 1920 को इलाहाबाद में खिलाफत कमेटी ने इस सलाह को सर्वसम्मति से स्वीकार कर लिया और गांधीजी को इस आंदोलन की अगुआई करने का अधिकार सौपां।[3]

राजनीतिक गतिविधियों के क्षेत्र मे हिन्दू मुसलमान एकता की मिसाल दुनिया के सामने रखने के लिए मुसलमानों ने कट्टर आर्यसमाजी नेता स्वामी श्रद्धानंद को आमंत्रित किया कि वे दिल्ली जामा मस्जिद के मिंबर से अपना उपदेश दें। इसी तरह अमृतसर में सिख्खो ने अपने पवित्र स्थान स्वर्ण मंदिर की चांबियां एक मुसलमान ने डां. किचलू को सौंप दी।[4]

सन् 1921–22 में असहयोग आंदोलन के दौरान हिन्दू तथा मुसलमान दोनो ने मिलकर इस आंदोलन को आगे बढाया छात्रों ने सरकारी स्कूल कालेज छोड़कर राष्ट्रीय स्कूलों और कालेजों में प्रवेश लिया। इस राष्ट्रीय कालेजों और विश्वविघालयों ने आचार्य नरेन्द्र देव , डां. जाकिर हुसैन और लाला लाजपत राय जैसे विख्यात व्यक्ति शिक्षकीय कार्य करते थे।[5]

कांग्रेस के नागपुर अधिवेशन से मध्यप्रांत तथा बरार में इस आंदोलन को भारी प्रोत्साहन मिला। अब जनता कांग्रेस के असहयोग आंदोलन में जिसमें मुख्यतःकानून भंग करना ,विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार करना और विदेशी शराब का व्यापार करने वाली दुकानों पर शांतिपूर्ण धरना देना शामिल था।

5 फरवरी 1921 को रायपुर के एक राष्ट्रीय विघालय खोला गया।[6] 26 दिसम्बर 1920 को नागपुर में विजय राघवाचार्य की अध्यक्षता में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। गांधी जी रायपुर से सीधे नागपुर पंहुंचे रायपुर क्षेत्र के प्रतिनिधियों में ई. राघवेन्द्रराव ,पं. रविशंकर शुक्ल शुक्ल, मुंशी अब्दुल रऊफ खां, सुन्दरलाल शर्मा आदि थें।[7] रायपुर में सुन्दरलाल शंर्मा तथा कुतुबुद्दीन ने 7 फरवरी 1921 को रायपुर के गांधी चौक में एक सभा को संबंधित करते हुए मघनिषेध तथा शराब की दुकानों पर धरना की सलाह दी परिणाम स्वरुप कुतुबुद्दीन को रायपुर रेल्वे स्टेशन पर बंदी बना लिया गया।[8]

मुंशी अब्दुल रऊफ खां मेहवी एवं हामिद अली भी असहयोग आंदोलन में अपना विशेष योगदान दिया। मुंशी अब्दुल रऊफ खां मेहवी कांग्रेस के कर्मठ कार्यकर्ता थे। मुंशी अब्दुल रऊफ खां मेहवी की प्रेरणा से मुस्लिम महिलाओं ने सार्वजनिक रुप से आंदोलन में भाग लिया। 11 अक्टूबर 1921 में अंजुमन बेगम ने विराट स्वदेशी व खादी प्रदर्शनी रावणभाटा में महिला स्वंय सेविकाओं के रायपुर संगठन का नेतृत्व किया इस संगठन मे 200 महिलाएं थी। छत्तीसगढ़ अंचल के हर स्थान पर खादी आश्रम की स्थापना हुई।[9]

---

* शासकीय दूधाधारी बजरंग महिला स्नाकोत्तर (स्वशासी) महाविद्यालय, रायपुर (छ. ग.)

छत्तीसगढ़ अंचल के सेठ गोपी किशन ,राजाराम और काजी शमशेर आदि ने रायपुर नगर स्थित ''गांधी चौक'' पर एक आम सभा में सरकारी उपाधि त्यागने की घोषणा की ।[10]

रियासती शासन की हूकूमत के विरुद्ध आंदोलन चलाने वाले बंदे अली फातमी राजशाही के जमाने में अपनी कलम को तलवार बनाकर पत्रकारिता किया करते थे। फातमी साहब का मंच था 'कर्मवीर' ।[11]

असहयोग आंदोलन में भाग लेने के कारण रायपुर जिले के पं. सुन्दरलाल शर्मा ,नारायण राव मेघावाले, भगवती प्रसाद मिश्र, मौलाना हामिद अली एवं मुंशी अब्दुल रऊफ खान मेहवी छत्तीसगढ़ के सर्वप्रथम पांच गिरफ्तार होने वाले नेता थे।[12] पं. सुन्दरलाल शर्मा के साथ जेल में हामिद अली और रऊफ खां मेहवी भी थे सुन्दरलाल शर्मा की जेल पत्रिका श्री कृष्ण जन्म स्थान मे उसका विवरण दिया है।[13]

शहरों के अलावा गांव एवं रियासतों के मुसलमानों ने स्वतंत्रता आंदोलनों में भाग लिया। इनमें से एक गुंडरदेही के वली मोहम्मद थे। उन्होंने 1921–22 में अमीन पटवारी के पद से इस्तीफा दे दिया तथा असहयोग आंदोलन में भाग लिया इस कारण आपको छह माह तक नागपुर जेल में रखा गया।[14]

छत्तीसगढ़ में राष्ट्रीय आंदोलन में भाग लेने वाले छत्तीसगढ़ में अनेक मुस्लिम समाज के लोग है जिनमें से अमीर अली मीर का नाम भी प्रमुख हैं। उन्होने राष्ट्रीय चेतना के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया। बशीर अहमद आजाद हिन्द फौज के जर्मन में जो थी उनके सिपाही थे। आजादी के वक्त आप लाल किले में कैद थे। जर्मन में युद्ध करते करते अंग्रजों के विरुद्ध कैद कर लिए गये थे।[15] स्व. कुतुबुद्दीन अहमद ने आजाद हिंद फौज का साथ देकर फौज के माध्यम से आयोजित किये जाने वाले विभिन्न कार्यक्रमों में अपनी भागीदारी सुनिश्चित की।

छत्तीसगढ़ के सय्यद याकूब अली , स्व. गुलाम रसूल , सैय्यद हुसैन, मुंशी रजा, मुंशी उमरयार बेग, स्व. गुल हमीद, शेख मुन्तजीमुद्दीन, मुस्लिम लीग के वकील अहमद रिजवी,मोहम्मद इस्माईल खांन, इफ्तखार अहमद, अब्दुल सलाम बैरिस्टर ,आदि लोंगों ने राष्ट्रीय आंदोलन में अपना विशेष योगदान दिया एवं लोंगों में जनचेतना जागृत की।[16]

संदर्भ ग्रंथ :

1. मिश्र रमन्द्रनाथ ,लक्ष्म्भ्ज्ञश्र झा ,छत्तीसगढ़ का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, सेन्ट्रल बुक हाऊस,रायपुर 1998 ,पृ 134
2. मिश्र रमन्द्रनाथ ,लक्ष्मीधर झा ,छत्तीसगढ़ का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, सेन्ट्रल बुक हाऊस,रायपुर 1998 ,पृ 135
3. चंद्र बिपिन भारत का स्वतंत्रता संघर्ष ,हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय दिल्ली विश्वविघालय ,1990 ,पृ 135
4. चंद्र बिपिन , आधुनिक भारत का इतिहास ,हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय दिल्ली विश्वविघालय ,1990 ,पृ 98
5. चंद्र बिपिन भारत का स्वतंत्रता संघर्ष ,हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय दिल्ली विश्वविघालय ,1990 ,पृ 136
6. रायपुर गजेटियर 1992 ,पृ 73
7. शुक्ल अशोक ,छत्तीसगढ़ का राजनीतिक इतिहास एवं राष्ट्रीय आंदोलन ,रायपुर,1990,पृ 112,113
8. मिश्र रमेन्द्रनाथ एवं शांता शुक्ला ,छत्तीसगढ़ का इतिहास,1990 ,पृ 109
9. यजदानी अजरा बेगम, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में मौलाना अब्दुल अब्दुल रऊफ खान मेहवी का योगदान ,लघु शोधप्रबंध 1990 ,पृ. 15
10. ठा. भा. नायक, छत्तीसगढ़ में गांधी , पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविघालय 1970 ,पृ 2
11. कनीज फातमी,बेदे अली फातमी की जीवनी (अप्रकाशित) 1990 ,पृ 2
12. मिश्र रमेन्द्रनाथ एवं शांता शुक्ला ,छत्तीसगढ़ का इतिहास,1990 ,पृ 111
13. सुन्दर लाल शर्मा श्री कृष्ण जन्म स्थान समाचार पत्र (मूल पत्र से) पृ12

14. साहू बलदाऊ राम ,चितरंजन कर,छत्तीसगढ़ के भूले बिसरे स्वतंत्रता संग्राम सेनानी, छत्तीसगढ़ राज्य पिछड़ा वर्ग आयोग,2020 ,पृ 93
15. कुरैशी बदरुद्दीन ,आजादी के दीवाने, केलाबाड़ी दुर्ग 1997, पृ. 17
16. कुरैशी बदरुद्दीन ,आजादी के दीवाने, केलाबाड़ी दुर्ग 1997, पृ. 18

***

भारत में धर्मनिरपेक्षता की आलोचना : समीक्षात्मक अध्ययन

*राकेश कुमार यादव**

धर्म ने मानव जीवन को प्रभावित किया है व कर रहा है। भारत में धर्मनिरपेक्षता को लेकर अक्सर वाद–विवाद होता है। कुछ विचारक भारतीय धर्म निरपेक्षता को अस्वीकार करते हैं तो कुछ इसे स्वीकारते हैं। शोध पत्र भारत में धर्म निरपेक्षता की आलोचना का समीक्षात्मक अध्ययन किया गया है। शोध में द्वितीयक स्रोत प्रयोग में लाया गया है।

इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका के अनुसार, 'धर्म निरपेक्षता का अर्थ 'धर्म से स्वतन्त्र (निरपेक्ष) या गैर आध्यात्मिक (अनाध्यात्मिक) या लौकिकता या सांसारिकता संबंधी विचार है।'[1] 'धर्मनिरपेक्षता' राज्य का आधुनिक व नवीन विचार है। यह पश्चिमी जगत में अस्तित्त्व में आया। पुनर्जागरण काल के इस विचारने नवीन राज्य की रूपरेखा निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। चर्च के बढ़ते हस्तक्षेप व सामंतवादी राज्य के विरुद्ध औद्योगिक क्रान्ति काल में उदारवादी राज्य अस्तित्त्व में आया। उदारवाद ने अलौकिकता की जगह व्यक्ति को महत्त्व प्रदान करते हुए स्वतन्त्रता, समता व अधिकारों की बात की। राज्य के मामले में धर्म का हस्तक्षेप पूँजीवादी नए उदारवादी राज्य के लिए सुगम ही था, इसी वजह से राज्य के धर्म से 'अलगाव सिद्धान्त' का प्रतिपादन हुआ।'[2] जनसमुदाय को महत्त्व प्रदान किया गया।

होलियाक को 'सेक्युलरिज्म' शब्द का जनक माना जाता है। उन्होंने धर्मनिरपेक्षता को परिभाषित करते हुए कहा कि 'धर्मनिरपेक्षता भौतिक साधनों द्वारा मानव कल्याण में अभिवृद्धि और दूसरों की सेवा को जीवन का आदर्श बनाने वाला प्रमुख साधन है।'[3] चार्ल्स ब्राडलॉफ (1860) की धर्मनिरपेक्ष आन्दोलन में महत्त्वपूर्ण भूमिका रही। वह धर्मनिरपेक्षतावादी लोगों को कट्टर अनीश्वरवादी (नास्तिक) होने की बात करते हैं, जिसको मार्क्सवादियों, समाजवादियों ने भी माना। धर्मनिरपेक्षता का पश्चिमी दृष्टिकोण मानता है कि, 'धर्मनिरपेक्षता का सिद्धान्त वह दर्शन है जिसमें परम्परागत धर्मों व आध्यात्मिकता की अवहेलना की जाती है एवं मानव को अपने पार्थिव हितों की ओर ध्यान देना सिखाया जाता है।'[4]

वैश्विक स्तर पर धर्मनिरपेक्षता के विचार को देखें तो पाश्चात्य के दो दृष्टिकोण अमेरिकी व फ्रांसीसी है। भारतीय दृष्टिकोण इससे भिन्न है। अमेरिकी दृष्टिकोण में राज्य एवं धर्म का पूर्ण पृथक्करण पाया जाता है, जहाँ धर्म व्यक्ति का निजी मामला है और राज्य किसी धर्म का पोषण नहीं करता और न ही राज्य का कोई धर्म होता है।'[5] फ्रांसीसी दृष्टिकोण में राज्य की किसी भी गतिविधि में धार्मिक संस्थाओं का हस्तक्षेप पूर्णतः निषिद्ध है। फ्रांसीसी धर्मनिरपेक्षता धार्मिक मामलों में राज्य के तर्कशील हस्तक्षेप को उचित मानती है।'[6]

धर्मनिरपेक्षता का भारतीय विचार 'धर्महीनता' से नहीं बल्कि 'सर्वधर्म समभाव' सबके प्रति आदर भाव से जुड़ी है। भारतीय/पाश्चात्य दृष्टिकोण इन अंतरों के बावजूद दोनों 'मानव कल्याण' की बात करते हैं। 'धर्मनिरपेक्षता सभी के व्यक्तित्त्व विकास का समान अवसर देती है। अनुराग पाण्डेय बताते हैं कि धर्मनिरपेक्षता रूढ़िवाद, अंधविश्वास, धार्मिक कट्टरता, सम्प्रदायवाद एवं संकीर्णतावाद आदि का परित्याग कर व्यापक अर्थों में समाज एवं राष्ट्र निर्माण का मार्ग प्रशस्त करती है।'[7]

भारतीय संविधान में संशोधन (44वें) के तहत प्रस्तावना में धर्मनिरपेक्षता शब्द जोड़ा गया। भारतीय संविधान में धर्मनिरपेक्षता संबंधी प्रावधान अनुच्छेद 25 से 28, अनुच्छेद 29 व 30 में किया गया। अनुच्छेद 25 सभी व्यक्तियों को विवेक की स्वतन्त्रता तथा अपनी पसंद के धर्म के उपदेश, अभ्यास व प्रचार की स्वतन्त्रता देता है।[8]

अनुच्छेद 26 सभी सम्प्रदायों व पंथों को सार्वजनिक व्यवस्था, नैतिकता व स्वास्थ्य के अधीन स्वयं के धार्मिक मामलों के प्रबंधन, धर्मार्थ या धार्मिक उद्देश्य से संस्थाएँ स्थापित करने व कानून के

* पूर्व शोध छात्र, राजनीति विज्ञान विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

अनुसार सम्पत्ति रखने, प्राप्त करने, प्रबंधन करने की स्वतन्त्रता देता है।[9]

अनुच्छेद 27 इस बात का प्रावधान करता है कि किसी भी व्यक्ति को किसी विशेष धर्म या धार्मिक संस्था को बढ़ावा देने के लिए कर के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता।[10]

संविधान का अनुच्छेद 28 पूर्णरूपेण राज्य वित्तपोषित शैक्षणिक संस्थाओं में धर्म आधारित शिक्षा का निषेध करता है।[11]

अनुच्छेद 29 और 30 सांस्कृतिक व शैक्षिक अधिकार से संबंधित हैं। अनुच्छेद 29 नागरिकों को अपनी विशिष्ट भाषा, लिपि और संस्कृति संरक्षण व विकास का अधिकार देता है।[12]

अनुच्छेद 30 देश के नागरिकों को धार्मिक और भाषायी अल्पसंख्यकों को अपनी स्वयं की संस्कृति को बनाये रखने व विकसित करने की खातिर अपनी पसंद की शैक्षिक संस्थाएं स्थापित करने व चलाने का अधिकार देता है।[13]

देश को स्वतन्त्रता मिली। देश ने विभाजन का दंश झेला व साम्प्रदायिक दंगे हुए। देश की आजादी के बाद भारत–पाकिस्तान दो देश बने। पाकिस्तान देश के निर्माण का आधार 'इस्लाम' धर्म था। भारतीय नेता भी भारत को एक हिन्दू राज्य बनाने की बात कर रहे थे। गाँधी, नेहरू व अम्बेडकर 'धर्मनिरपेक्ष राज्य' के समर्थक थे। इन नेताओं की निष्ठा की वजह से भारत एक धर्मनिरपेक्ष राज्य बन सका। भारत में 'धर्मनिरपेक्षता' की विरासत को ''गाँधी–नेहरू विरासत'' के नाम से भी जाना जाता है।'[14] गाँधी धर्म को राजनीति से जोड़कर देखते थे और नैतिक मानते थे। नेहरू जी धर्म व राजनीति का पूर्ण पृथकत्त्व चाहते थे व इसको व्यक्ति का निजी मामला मानते थे। 'नेहरू जी यह बताते हैं कि राज्य बिना किसी धर्म के प्रति झुकाव लिए हुए होना चाहिए।'[15] दीनदयाल उपाध्याय नेहरू व गाँधी के विचारों के विरोधी थे। वे भारत को एक धर्मनिरपेक्ष राज्य के रूप में देखना तो चाहते थे जहाँ सर्व धर्म समभाव का सिद्धान्त ही मान्य होना चाहिए न कि पश्चिम से उधार ली हुई कोई अवधारणा।'[16] वे असंप्रदायिक शब्द के प्रयोग की बात करते हैं।

पंडित अटल बिहारी वाजपेयी धर्मनिरपेक्षता की जगह 'पंथनिरपेक्षता' की बात करते हैं। अटल जी गाँधी के 'सर्वधर्म समभाव' को भारत में पंथ निरपेक्षता के लिए जरूरी मानते हैं, ''सर्वधर्म समभाव का अर्थ है भेदभाव के बिना सभी धर्मों का समान रूप से आदर व सम्मान'' और वाजपेयी जी इसी पंथनिरपेक्षता के समर्थक हैं।'[17]

'भारतीय धर्म निरपेक्षता' की आलोचना करने वालों में टी.एन. मदान, आशीष नंदी और पार्थ चटर्जी हैं। इन विचारकों का कहना है कि, 'भारत जैसे बहु–धर्मी राष्ट्र में धर्मनिरपेक्षता एक अस्वीकार्य आधुनिक अवधारणा है। क्योंकि ये धर्म को राजनीति या राज्य से अलग करती है, भारत में धर्म बहुत गहराई तक समाया हुआ है और इसको सार्वजनिक जीवन से अलग नहीं किया जा सकता, भारत में धर्मनिरपेक्षता पश्चिम से ली हुई एक थोपी हुई अवधारणा है।'[18]आशीष नंदी कहते हैं, 'धर्मनिरपेक्षता की इस अवधारणा को स्वीकार करने का मतलब है कि देश प्रगति और आधुनिकता के नाम पर एक न्यायोचित दिखने वाले ''वर्चस्व'' स्थापित करने के लिए नए आयाम विकसित करना चाहता है, और आधुनिक विचारधाराओं को हिंसा के प्रयोग से बचाने और उन्हें स्थापित करने के लिए एक नए विचार के रूप में जनता को देना चाहता है।[19] नंदी का आगे कहना है कि नेहरू द्वारा प्रतिपादित यह ''आधुनिक पश्चिमी तर्कसंगत–वैज्ञानिक धर्मनिरपेक्षता'' राजनीति से धर्म को खत्म करने या अलग करने में नाकाम रही है, और इसलिए धर्मनिरपेक्षता का यह रूप नैतिक या राजनीतिक कार्यों का मार्गदर्शन नहीं कर सकता है। बल्कि यह धर्मांधता और सांप्रदायिकता का रास्ता खोलता है, जिसको उत्पन्न न होने देने की या जिसे खत्म करने का दावा ये धर्मनिरपेक्षता करती है। नंदी के अनुसार, अच्छा संभव विकल्प तो गैर आधुनिक, धर्मनिरपेक्षता के पूर्व वाले स्थापित धर्म में ही है, जिसमें विभिन्न धर्मों को सहिष्णुता के मार्ग से या जीवन जीने के मार्ग से आपस में समायोजित किया जा सकता है। भारतीय धर्मनिरपेक्षता जनमानस को नजदीक लाने में असफल रही है।[20] नंदी कहते हैं, गाँधी द्वारा बताए गए धर्म और राजनीति के समागम से ही सच्ची सहिष्णुता प्राप्त की जा सकती है। धर्मनिरपेक्षता एक विचारधारा के रूप में असफल रही है और गाँधी द्वारा दिखाए गए रास्ते से ही धर्मांधता या

सांप्रदायिकता से लड़ा जा सकता है।[21]

टी.एन. मदान, धर्म और राजनीति को समान महत्त्व देते हैं व इन्हें अलग करने को ठीक नहीं मानते। वे कहते हैं, 'दक्षिण एशिया में धर्मनिरपेक्षता तभी सफल हो सकती है जब हम धर्म और धर्मनिरपेक्षता दोनों को गंभीरता से लें, धर्म की सिर्फ इस आधार पर आलोचना नहीं की जानी चाहिए क्योंकि उसमें अंधविश्वास होता है और धर्मनिरपेक्षता को सिर्फ सांप्रदायिकता से लड़ने का यंत्र नहीं समझा जाना चाहिए और न ही इसको किसी फायदे के लिए प्रयोग किया जाना चाहिए। दूसरे शब्दों में, किसी एक को किसी दूसरे पर वरीयता नहीं दी जा सकती, दोनों ही विचार समान रूप से महत्त्वपूर्ण हैं।[22]पार्थ चटर्जी धार्मिक सहिष्णुता की बात करते हुए कहते हैं, धार्मिक कट्टरता से विभिन्न धार्मिक समुदायों के मध्य सहिष्णुता खत्म होती जा रही है, और इसी कारण दंगे, धार्मिक गोलबंदी इत्यादि देखने को मिल रही है। धर्मनिरपेक्षता लोगों के मध्य सहिष्णुता स्थापित करने में असफल रही है, जिससे हिंदू बहुसंख्यकवाद अपनी जड़े फैला रहा है। भारतीय धर्मनिरपेक्षता अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा करने में असफल रही है इसलिए भारत को धर्मनिरपेक्षता के स्थान पर किसी अन्य विचारधारा की जरूरत है। यहाँ चटर्जी सहिष्णुता की अवधारणा देते हैं, एवं विभिन्न समूहों के मध्य प्रतिनिधि लोकतंत्र की राजनीति को शामिल करने की सिफारिस करते हैं ताकि राज्य द्वारा सुधारवादी हस्तक्षेप से मुक्त होकर आंतरिक सुधारों की परिस्थितियाँ उत्पन्न हो सके और आपसी सहिष्णुता के लिए एक सशक्त मार्ग का सृजन किया जा सके।[23]

राजीव भार्गव इन आलोचनाओं का पुरजोर खंडन करते हैं। वह पाश्चात्य धर्म निरपेक्षता से भारतीय धर्म निरपेक्षता को अलग करके देखते हैं। वह कहते हैं, 'राज्य धर्मों के मध्य एक ''सैद्धांतिक दूरी'' रखता है। यहाँ भार्गव प्रासंगिक धर्मनिरपेक्षता की बात करते हैं, इसका अर्थ है कि या तो राज्य कुछ मामलों में हस्तक्षेप करता है या हस्तक्षेप करने से बचता है, अतः राज्य इन दोनों सिद्धांतों के सहारे धार्मिक स्वतंत्रता, निजी स्वतंत्रता और नागरिकता की समानता के मूल्यों के साथ न्याय करता है।[24] राजीव भार्गव राजनीतिक एवं नैतिक धर्मनिरपेक्षता की बात भी करते हैं। नैतिक धर्मनिरपेक्षता हालांकि जमीनी सच्चाई से दूर है, जिसमें भार्गव का ये मानना है कि सभी धर्मों के लोग स्वयं ही धर्मनिरपेक्षता के मूल्यों को समाहित करते हैं, जिससे आपसी विश्वास अपने आप ही जगता है और लोग एक–दूसरे के विश्वास, परंपराओं इत्यादि को मान्यता देते हैं, किंतु यह एक दूर की कौड़ी है। इसी कारण भार्गव राजनीतिक धर्मनिरपेक्षता को नैतिक धर्मनिरपेक्षता पर वरीयता देते हैं।[25] राजीव भार्गव राजनीतिक धर्मनिरपेक्षता को तीन अलग संस्करणों में बाँटते हैं, जिनमें पहली (क) हाइपर–सेंसिटिव धर्मनिरपेक्षता है जो धर्म को राजनीति से अलग करती है, दूसरी (ख) अल्ट्रा–प्रोसिड्यूरल धर्मनिरपेक्षता है ये भी धर्म को राजनीति से अलग करने की वकालत करती है। किंतु ये दोनों ही संकल्पनाएं धर्मनिरपेक्षता की सैद्धांतिक दूरी के सिद्धांत की वकालत नहीं कर सकती है। अंत में, (ग) प्रासंगिक धर्मनिरपेक्षता, भार्गव के अनुसार यही नीति ''राजनीति एवं धर्म'' के मध्य एवं सैद्धांतिक दूरी रखने की अनुमति देती है।[26] राजीव भार्गव प्रासंगिक दूरी के द्वारा ही व्यक्तियों के सम्मानजनक जीवन को सुरक्षित रखा जा सकता है, धार्मिक भेदभाव को खत्म किया जा सकता है, धार्मिक कट्टरता को रोका जा सकता है, धर्म के आधार पर दंगों को रोका जा सकता है एवं हिंसा पर काबू पाया जा सकता है। अंत में जिन कारणों से धर्मनिरपेक्षता के आलोचक धर्मनिरपेक्षता की आलोचना करते हैं, उन्हीं कारणों को रोकने के लिए या उन पर लगाम कसने के लिए धर्मनिरपेक्षता के सिद्धांत की आवश्यकता है।[27]

अमर्त्यसेन जैसे विचारक की धर्म निरपेक्षता की आलोचना का जवाब देते हैं। सेन कहते हैं – भारत को पाकिस्तान का हिंदू प्रतिरूप कहना न्यायोचित नहीं है, जहाँ पाकिस्तान एक घोषित इस्लामिक देश है, जहाँ नियम, कानून इत्यादि इस्लामिक शैली के आधार पर ही तय होते हैं वहीं भारत में हिंदू शैली नहीं है, भारतीय राज का अपना कोई धर्म नहीं है और राज्य सभी धर्मों को समान रूप से देखता है।[28] हिंदू राष्ट्रवादियों द्वारा भी भारतीय धर्मनिरपेक्षता की आलोचना की गई है, वे इसे छद्म–धर्मनिरपेक्षता कहते हैं जिसने हमेशा मुसलमानों का पक्ष लिया है और हिंदुओं का अहित किया

है। सेन इस आलोचना को सिरे से नकार देते हैं, उनका कहना है कि ये आरोप सिर्फ राजनीतिक एवं चुनावी लाभों के लिए लगाए गए हैं, ताकि धर्म विशेष के व्यक्तियों को धर्म के नाम पर गोलबंद किया जा सके।[29]दूसरी आलोचना कहती है कि भारतीय धर्मनिरपेक्षता समूह की पहचान को राष्ट्रीय पहचान से ऊपर रखती है। सेन इस तर्क को भी नकारते हैं और कहते हैं कि भारतीय धर्मनिरपेक्षता दोनों पहचानों को अपने में समाहित करती है, कोई व्यक्ति धार्मिक होने के साथ–साथ राष्ट्रवादी भी हो सकता है, वे इस बात को सिद्ध करने के लिए गाँधी का उदाहरण देते हैं जो अपने निजी एवं सार्वजनिक जीवन में धार्मिक थे और साथ–ही–साथ राजनीतिक जीवन में एक राष्ट्रवादी, उन्होंने अपने इन दोनों जीवनों में कभी कोई विरोधाभास नहीं आने दिया।[30]

आशीष नंदी के धर्मनिरपेक्षता के आधुनिकता विरोधी होने के दावों के जवाब में सेन कहते हैं कि आधुनिकता को परिभाषित करना सरल नहीं है, यह सही है कि मध्यकालीन भारत में एक सहिष्णु समाज की स्थापना हुई थी, क्योंकि उस काल में हिंदू–मुस्लिम समुदायों के मध्य सहमति के कुछ प्रारूप मौजूद थे और आजादी के बाद के भारत में इस तरह के प्रारूप का अभाव रहा है, जिस कारण समुदायों के मध्य एक प्रकार की दूरी नजर आती है, किंतु इन्हें नजदीक लाने के लिए सहमति के आधुनिक प्रारूपों की खोज जारी है, और यदि आधुनिक युग में समुदायों के मध्य हिंसा की घटनाएं बढ़ी हैं तो इसका अर्थ ये नहीं है कि धर्मनिरपेक्षता असफल हो गई है, बल्कि इसी हिंसा को रोकने के लिए धर्मनिरपेक्षता की आवश्यकता है।[31]कुछ आलोचक ये आरोप लगाते हैं कि भारत की धर्मनिरपेक्षता देश की सांस्कृतिक पहचान को सिरे से खारिज कर देती हैं क्योंकि भारतीय संस्कृति शुरू से हिंदू संस्कृति का पर्याय रही है और सभी संस्कृतियों को समान रूप में रखकर ये एक सांस्कृतिक विषमता पैदा कर रही है। सेन कहते हैं कि भारत की संस्कृति को सिर्फ हिंदू संस्कृति मानना एक संकीर्ण विचार है, क्योंकि देश की संस्कृति सभी संस्कृतियों से मिलकर बनी है, इसलिए भारत को एक बहु–सांस्कृतिक देश कहा जाता है, जहाँ विभिन्न संस्कृतियाँ देश की मुख्यधारा में अपने को समाहित करती हैं।[32]

यह हकीकत है कि धर्म मानव जीवन को व्यापक रूप में प्रभावित कर रहा है। धर्म के साथ जब लोक कल्याण का भाव है वह सच्चे अर्थों में सबके हित का विचार रहेगा। धर्म का अनुयायी परमार्थ से कार्य करेगा। जब इसके साथ कट्टरता जुड़ेगी यह साम्प्रदायिक रंग ले लेगा। वैज्ञानिक होगा सांसारिक हितों के साथ जुड़ा होगा। अवैज्ञानिक होगा तो वह परलौकिक व आडम्बरों से युक्त होगा। भारत में अनेक धर्म व सम्प्रदाय के लोग निवास करते हैं। भारत में 'धर्म निरपेक्षता' का विचार इनके बीच समायोजन स्थापित करने का माध्यम है। भारत में धर्मनिरपेक्षता पाश्चात्य की नकल नहीं है। यह हमारी संस्कृति में निहित सर्वधर्म समभाव से अस्तित्त्व में आया है। यह भाई चारे, लोक कल्याण, समरसता से युक्त इन सबके बावजूद समाज में धार्मिक आधार पर भेदभाव मौजूद है जिन्हें दूर किया जाना अति आवश्यक है।

संदर्भ ग्रन्थ :

1 अनुराग पाण्डेय, ''भारत में धर्मनिरपेक्षता : सिद्धान्त एवं व्यवहार'', अभय प्रसाद सिंह व कृष्ण मुरारी (संपा.) 'भारत में राजनीतिक प्रक्रिया ओरियंट ब्लैकस्वॉन, हैदराबाद, 2019, पृ. 121

2 वही, पृ. 122

3 वही

4 वही

5 वही, पृ. 123

6 वही

7 वही

8 भारत का संविधान, अनुच्छेद 25

9 वही, अनुच्छेद 26

[10] वही, अनुच्छेद 27
[11] वही, अनुच्छेद 28
[12] वही, अनुच्छेद 12
[13] वही, अनुच्छेद 13
[14] अनुराग पाण्डेय, वही, पृ. 127
[15] पी.सी. जोशी, 'गाँधी–नेहरू ट्रेडिशन एंड इंडियन सेक्युलरिज्म', 2005 वाल्यूम, XLV, नं. 48
[16] दीन दयाल उपाध्याय, ''लौकिक, धर्महीन, धर्मरहित, धर्मनिरपेक्ष, अधार्मिक, अधर्मी, निधर्मी अथवा असंप्रदायिक'' पांचजन्य, 2006 पुनः मुद्रित
[17] अटल बिहारी वाजपेयी, 'ऑन द कांसेप्ट ऑफ इंडियन सेक्यूलरिज्म'', इन बर्कले सेन्टर फॉर रिलीजन, पीस एंड वर्ल्ड अफेयर्स, 1 जनवरी, 1992
[18] अनुराग पाण्डेय, वही, पृ. 132
[19] आशीष नंदी, ''द पॉलिटिक्स ऑफ सेक्यूलरिज्म एंड द रिकवरी ऑफ रिलीजियस टालरेंस'', राजीव भार्गव (संपा.) 'सेक्यूलिरिज्म इट्स क्रिटिक' ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 1998, पृ. 192
[20] अनुराग पाण्डेय, वही
[21] अशीष नंदी, वही, पृ. 321–344
[22] टी.एन. मदान, 'सेक्यूलिरिज्म इन इट्स प्लेस जर्नल ऑफ एशियन स्टडीज', वाल्यूम–46, नं. 4 नवम्बर, 1987, पृ. 758
[23] पार्थ चटर्जी, 'सेक्यूलिरिज्म एंड टालरेन्स', इकोनामी एंड पॉलिटिकल वीकली, वाल्यूम XXIX, नं. 28, 9 जुलाई, 1994, पृ. 1768–1777
[24] राजीव भार्गव, ''गिविंग सेक्यूलरिज्म इट्स ड्यू'', इकोनामी एंड पॉलिटिकल वीकली, वाल्यूम 29, नं. 28, 9 जुलाई, 1994, पृ. 1784–91
[25] वही, पृ. 1784–91
[26] वही
[27] वही
[28] अमर्त्य सेन, 'द आर्गमेंटटिव इंडिया : राइटिंग ऑन इंडियन हिस्ट्री, कल्चर एंड आइडेन्टी न्यूयार्क, 2005, अमर्त्य सेन, कौमिक बासू एंड एस. सुब्रमण्यम, ''सेक्यूलरिज्म एंड इट्स डिसकाउंटस'', कौशिक बासू व संजय सुब्रह्मण्यम (संपा.), अनरिवेलिंग द नेशन सेवइन कॉनफ्लिक्ट एंड इंडियाज सेकुलर आइडेन्टिटी, पेंगुइन, देलही, 2005, व अनुराग पाण्डेय
[29] वही
[30] वही
[31] वही
[32] अमर्त्य सेन, वही

***

प्राथमिक विद्यालयों के छात्रों में सांस्कृतिक मूल्यों के विकास में शिक्षा की भूमिका

*कौशल कुमार झा**

शिक्षा प्राप्त करने हेतु विद्यालय का समाज में महत्वपूर्ण भूमिका है। छात्रों के ज्ञान वृद्धि तथा संस्कृति का विकास इतना हुआ कि विद्यालय के बिना समुचित शिक्षा प्रदान करना असंगत प्रतीत होता है। वर्त्तमान के आधुनिक समाज में औद्योगिकरण का विकास निरंतर होता जा रहा है। अन्य सामाजिक विज्ञान भी अत्यन्त समृद्ध है कि विद्यालय की महत्ता दिन–प्रतिदिन रहा है। विद्यालय एक सामाजिक संस्था होने के कारण विद्यालय का महत्व दिन प्रतिदिन समाज में बढता जा रहा है। समानता, स्वतंत्रता, बंधुत्व और न्याय इत्यादि के आदर्श को उपयोगी मानकर विद्यालय को शिक्षा प्रदान करना चाहिए। छात्रों को विद्यालय द्वारा एक प्रसन्न, पूर्ण और सम्पन्न जीवनयापन करने योग्य बनाना चाहिए, छात्रों की कार्य कुशलता को ध्यान में रखते हुए क्रमिक विकास के उपयुक्त प्रशिक्षण देने का कार्य किया जाना चाहिए, प्रत्येक छात्रों के सोग्यताओं को ध्यान में रखते हुए व्यावसायिक शिक्षा भी विद्यालयों को देने का दायित्व है। छात्रों को क्रमिक विकास हेतु समाज एवं परिवार में समन्वय स्थापित करने का दायित्व विद्यालय पर है। विद्यालय समाज पर प्रभाव डालता है और समाज विद्यालय पर।

वर्त्तमान समय में मानवीय मूल्यों का पतन हो रहा है, ये समाज में स्पष्ट रुप से दिखाई दे रहा है। जीवन मूल्यों एवं मानवीय मूल्यों का ह्यस बहुत तीव्र गति से हो रहा है। बालकों के समग्र विकास के लिए विद्यालय द्वारा शिक्षा की समुचित रुप रेखा बनाया जाता है, जिसमें छात्रों को अनुशासन, कर्त्तव्यनिष्ठ, त्याग की भावना, सहयोग एवं परोपकार की भावना का विकास करना, सहनशीलता, विनम्रता, समानता आदि गुणों का सृजन करना, विद्यालयी शिक्षा के द्वारा छात्रों को दिया जाता है। विद्यालयी वातावरण में भाक्तिक सुख सुविधाओं एवं आधुनिक सामाजिक परिवेश के कारण छात्रों में विभिन्न रुप से विसंगति एवं कुसंस्कार व्याप्त होने लगे हैं। छात्रों को सुशिक्षित एवं कर्त्तव्यनिष्ठ विद्यालय के द्वारा सुव्यवस्थित रुप से दिया जाता है।

विद्यालय छात्रों के सर्वांगीण विकास में प्रमुख रुप से प्रभाव डालते हैं– परिवार समाजीकरण के अनेक साधनों में परिवार की भूमिका भी छात्रों को प्रभावित करते हैं, क्योंकि बच्चों का अधिकांश समय परिवार में ही व्यतीत होता है। माता–पिता के व्यवहार एवं अभिभावक के द्वारा छात्रों के मिलने वाले स्नेह तथा सहारों का प्रभाव बालकों को प्रभावित करता है। छात्रों के विकास में आर्थिक प्रभाव का भी व्यापक रुप से प्रभाव डालता है। सम्पन्न घरों के लड़कों की अपेक्षा गरीब परिवार के बच्चों पर उचित तरीके से नहीं हो पाता है। धनी परिवार के बच्चों को उचित शिक्षा प्राप्त हो जाता है, अच्छे खेलकूद करने का अवसर प्राप्त हो जाता है। गरीब छात्रों से अधिक कुशल सम्पन्न घर के छात्र होते हैं। सामाजिक वर्ग भेद का प्रभाव छात्रों को प्रभावित करता है। निम्न वर्ग, मध्य वर्ग एवं उच्च वर्ग के छात्रों में प्रत्येक सामाजिक वर्ग के नियमों, मूल्यों, मानदण्डों, विश्वासों तथा लोकरीतियों में अन्तर होता है। इसलिए भिन्न–भिन्न वर्ग के बच्चों में संस्कृति द्वारा निर्धारित मानदण्डों के अनुकूल एक विशेष प्रकार का व्यक्तित्व का विकास छात्रों में होता है।

विद्यालय का प्रभाव बालकों के विकास को समाजीकरण पर विशेष बल देते हैं, परन्तु परिवार की अपेक्षा स्कूल का मिशन अधिक सीमित होता है। स्कूल का मौलिक सम्बन्ध बच्चों के औपचारिक निर्देशन तथा उनके ज्ञानात्मक कौशलों के विकास से होता है। इसी विभिन्नता के कारण परिवार तथा स्कूल की भूमिका में अन्तर होता है। विद्यालय में कार्यरत शिक्षक जितना अधिक कौशलयुक्त विचारवान तथा मानवीय गुणों से सम्पन्न होगा, बालक का सर्वांगिण विकास उतना ही अधिक अच्छा होगा, शिक्षक तथा शिक्षार्थी में पद–भेद लगभग वैसा ही होगा जैसा कि परिवार में माता–पिता तथा उनके बच्चे के संबंध में होता है। शिक्षक तथा शिक्षार्थी का सम्बन्ध अपेक्षाकृत सीमित होता है तथा औपचारिक होता

* (शोधार्थी), शिक्षा संकाय, ल.ना.मि. विश्वविद्यालय, दरभंगा

है। कक्षा में लगभग समान आयु वर्ग के छात्र होते हैं। अपने आयु एकरुपता के कारण बच्चे में अपने शिक्षण गुणों की तुलना करने के भाव उत्पन्न होता है। शिक्षक को भी प्रत्येक छात्र के मूल्यांकन का एक पर्सन्स के शब्दों में स्कूल प्रथम सामाजिक एजेन्सी है, जिससे बालकों में उनकी उपलब्धि के आधार पर पद–भेदीकरण का विकास होता है। कक्षा की आयु एकरुपता का दूसरा परिणाम वर्ग का उभरना है।

प्रारंभिक विद्यालयों में बालकों को खेल तथा खेल के साथ में उनके मित्रों तथा खेल के साथियों का महत्वपूर्ण योगदान होता है। प्रत्येक खेल के कुछ निश्चित नियम, मूल्य तथा मानदण्ड होते हैं। छात्रों में अतिरिक्त भाषा–विकास, संवेगात्मक विकास, नैतिक विकास आदि में भी सहयोग मिलता है, जो बच्चे अच्छे खेलों में भाग नहीं लेते हैं तथा बूरे बच्चों के साथ रहते हैं, उनमें बूरे सामाजिक तत्व विकसित होते हैं।

प्रारंभिक विद्यालयों के छात्रों को व्यवसायिक एवं अभिजात समूहों का प्रभाव छात्रों को अधिक प्रभावित करते हैं। छात्रों में व्यावसायिकरण का मुख्य उद्देश्य समाजों का उत्पादन बढाना या सेवा प्रदान करना है। अतः व्यवसाय द्वारा व्यक्ति का समाजीकरण प्रासंगिक है। बालकों द्वारा अपन उम्र आदि के अनुकूल बनाये गए समूह को अभिजात समूह कहा जाता है। अभिजात समूह की एक विशेषता है कि बच्चों में विपरीत मूल्यों का विकास होता है और वे ऐसे व्यवहार करने लगते हैं जिनकी स्वीकृति माता–पिता द्वारा समाप्त कर दी जाती है। इस अवस्था में मित्रता है जिसमें सहनशीलता अधिक होती है।

छात्रों के प्रत्येक समूह अथवा समाज की अपनी संस्कृति होती है, उस संस्कृति के विशेष मूल्य, प्रतिमान, विश्वास, लोकरीतियाँ, परम्पराएँ तथा मानदण्ड होते हैं जिन्हें सांस्कृतिक प्रतिरुप कहते हैं। बालक अपनी संस्कृति के इन प्रतिरुपों को माता–पिता, अभिभावक शिक्षक आदि सामाजिक माध्यम से सीख लेते हैं। छात्रों में सीखने में प्रत्यक्ष निर्देशन, अनुकरण, निरीक्षण, प्रतिरुपण, प्रक्लन आदि प्रमुख है। सांस्कृतिक भिन्नता के कारण अलग–अलग संस्कृति के बच्चों में अलग–अलग आदर्श और शील होता है।

संस्कृति के प्रकार इन दोनों तत्वों के आधार पर कुछ लोगों में संस्कृति के निम्नांकित दो प्रकार बतलाएँ हैं– (1) भौतिक संस्कृति भौतिक संस्कृति में भौतिक तत्वों जैसे मंदिर, मकान, उपकरण, दुकान, औजार, मूर्तियॉ आदि का समावेश होता है। इन तत्वों द्वारा छात्रों के व्यवहार एवं मनोवृति परोक्ष रूप से प्रभावित होता है। (2) अभौतिक संस्कृति– अभौतिक संस्कृति के निर्माण में अभौतिक तत्वों का समावेश होता है। इसके अंतर्गत समाज के मानक, मूल्यों, विश्वासों प्रथाओं परम्पराओं आदि की गणना की जाती है। अभौतिक संस्कृति का प्रभाव समाज के छात्रों के व्यवहारों परम्पराओं आदि की गणना की जाती है। अभौतिक संस्कृति का प्रभाव समाज के छात्रों के व्यवहारों एवं मनोवृत्तियों पर सीधा पड़ता है। फलस्वरूप ये छात्रों के अंत वैयक्तिक सम्बन्धों का निर्धारण करता है। (**a**) व्यक्त संस्कृति–व्यक्त संस्कृति से तात्पर्य है समाज में छात्रों के शाब्दिक तथा अशाब्दिक व्यवहार में प्रत्यक्ष रूप से देखे गये, निरंतरता तथा नियमितता से होता है। सदस्यों के व्यवहारों में दिखाई देने वाले सभी तरह के व्यवहार प्रतिमान इस संस्कृति के अंतर्गत आते हैं। (**b**) अव्यक्त संस्कृति में समाज के मानक, मूल्य, विश्वास परम्परा आदि सम्मिलित होते हैं, समाजशास्त्रियों, समाज मनोवैज्ञानिकों एवं मानव शक्तिओं द्वारा समाज के व्यक्तियों के भिन्न–भिन्न तरह के असंबंधित व्यवहारों को समझने के लिए इसका प्रयोग किया जाता है। जब भी समाज वैज्ञानिक किसी समाज की संस्कृति का विस्तृत अध्ययन करता है तो उन्हें इस संस्कृति का विश्लेषण करना पड़ता है, ताकि वे उससे संबंधित समस्याओं का अध्ययन ठीक ढ़ंग से कर सके। इसके लिए उन्होंनहे कुछ विधियों का प्रतिपादन किया है। ऐसी प्रमुख विधियॉ निम्नांकित पाँच हैं– (1) क्षेत्र विधि– इस विधि में अध्ययनकर्ता को उन व्यक्तियों के साथ रहना पड़ता है, जिसके संस्कृति का वे अध्ययन कर रहे हैं। वह उनके व्यवहारों को प्रेक्षण घर में बाहर में तथा अन्य जगहों में करता है। वह इन छात्रों एवं व्यक्तियों के शादी विवाह तथा अन्य सामाजिक कार्यक्रम में एक अध्ययनकर्ता ही हैसियत से भाग लेता है तथा उन सभी के व्यवहारों का एक–एक

रिकार्ड तैयार करता है। इस तरह से इस विधि में अध्ययनकर्ता एक सहभागी प्रेक्षक के रूप में कार्य करता है। छात्रों के व्यवहारों का अध्ययन किये जा रहे हैं एवं वह प्रेक्षण प्रविधि के अलावा साक्षात्कार का प्रयोग करता है। इसमें वह अध्ययन किये जा रहे संस्कृति में पले छात्रों से उनके रहन सहन एवं जीवन के अन्य पहलुओं के बारे में पूछ–ताछ का रिकार्ड तैयार करता है। तैयार किये गये रिकार्ड का विश्लेषण कर अध्ययनकर्ता संस्कृति के बारे में कुछ निष्कर्षो पर पहुँचता है। इस विधि का प्रमुख गुण यह होता है कि यह सरल विधि है तथा इसके द्वारा अध्ययनकर्ता वास्तविक परिस्थिति में रहकर तथ्य को प्राप्त करता है। अतः इसका परिणाम अधिक निर्भर योग्य होता है। इस विधि का प्रधान अवगुण है कि इसमें विश्वसनीयता कम पाई जाती है। विषय विश्लेषण– इस विधि द्वारा किसी संस्कृति के अध्ययन करने में या विभिन्न संस्कृतियों का आपस में तुलनात्मक अध्ययन करने में एक महत्वपूर्ण पूर्व कल्पना यह होती है कि समाज के लोकप्रिय संचार जो मैगजिन नाटक, रेडियों, टेलीविजन, अखबार आदि द्वारा प्राप्त किये जाते हैं। उसके द्वारा समाज के व्यक्तियों की सामान्य मनोवृति, रहन सहन तथा अन्य व्यवहारों का सही–सही स्पष्टीकरण होता है। इस विधि द्वारा संस्कृति के अध्ययन करने में निम्न चार कदम बतलाये गये हैं– (**a**) अध्ययन के पहले चरण में अध्ययनकर्ता को यह निश्चित करना होता है कि संचार के कौन रूप को चुना जाये, उदाहरणार्थ– किसी संस्कृति के अध्ययन करने के लिए अध्ययन कर्ता वहॉ से प्रकाशित अखबारों के सम्पादकीय विचारों को विषय के रूप में चुन सकता है। (**b**) अध्ययन के दूसरे चरण में वह विषय के तत्वों की गणना करता है। यहॉ तत्व से मतलब विषय की मुख्य घटनाऐं वैसे दूसरों को मदद करना करने की घटना, उपलब्धि, लड़ाई–झगड़ा की घटना आदि से हेाता है। तत्वों की गणना करने के लिए वह विश्लेषण की इकाई तैयार करता है। विश्लेषण की इकाई शब्द वाक्य पैराग्राफ कुछ भी हो सकता है (**c**) अध्ययन का तीसरा चरण जो सबसे महत्वपूर्ण होता है, इसमें अध्ययनकर्ता उपयुक्त विश्लेषणात्मक श्रेणियों को चुनता है। विश्लेषणात्मक श्रेणी मूल्य श्रेणी के हो सकते हैं। या विषय वस्तु श्रेणी के हो सकते हैं, फिर पक्ष–प्रतिपक्ष श्रेणी के हो सकते है। (**d**) अध्ययन के अंतिम चरण में अध्ययनकर्ता तैयार किये विश्लेषणात्मक श्रेणियों के आधार पर मात्रात्मक व्याख्या करता है। कभी–कभी वह इन मात्रात्मक व्याख्या के अलावा गुणात्मक व्यख्या के संपूरक के रूप में होता है– चाइल्ड तथा उनके सहयोगियों तथा मैकग्राना हन एवं बेनी ने अपने–अपने अध्ययनों में इस विधि की उपयोगिता साबित किया है। इस विधि का एक प्रमुख अवगुण होता है कि इसका प्रयोग संस्कृति के हर पहलुओं के अध्ययन में नहीं किया जा सकता है। खासकर अव्यक्त संस्कृति के कुछ पहलुओं के अध्ययन में इसका प्रयोग सम्भव नहीं हो पाता है।

क्रांस सांस्कृतिक विधि–इस विधि का प्रयोग मूलतः कुछ सीमित संख्या में चुने गये समाज के संस्कृतियों का आपस में तुलना करने के लिए किया जाता है। इस विधि का मुख्य प्रयोग मूलतः कुछ सीमित संख्या में चुने गये समाज के संस्कृतियों का आपस में तुलना करने के लिए किया जाता है। इस विधि का मुख्य उद्देश्य चुने गये विभिन्न संस्कृतियों के बीच समानता तथा अंतर पर प्रकाश डालना होता है। इस विधि में सबसे पहले अध्ययनकर्ता कुछ खास–खास सांस्कृतिक पहलुओं को चुनता है और उन्हीं पहलुओं पर वह चुन गये समाज के संस्कृतिया की तुलना करता है। प्रत्येक समाज की संस्कृ को वह उन पहलुओं जैसे कोई विशेष प्रथा, रीति–रिवाज, विश्वास, मूल्य पर एक प्राप्तांक प्रदान करता है और बाद में वह इन्हीं प्राप्तांकों की तुलना करके विभिन्न संस्कृतियों के बीच व्याप्त समानता तथा अंतर के बारे में सामान्य निष्कर्ष पर पहुँचता है। प्रक्षेपी विधियॉ एवं मनोवृत्ति मापनी– कुछ अध्ययनकर्ताओं ने प्रक्षेपी तथा मनोवृति मापनी द्वारा भी संस्कृति का अध्ययन किया जाता है। प्रक्षेपीविधि में संस्कृति के मूल्यों मानकों आदि से संबंधित तस्वीर होते हैं, जिन्हें देखकर कुछ प्रश्न का उतर उन छात्रों को देना होता है जो उस संस्कृति में पाले पोसे जाते हैं। गोल्ड स्कीम्ड तथा एर्गटन ने प्रक्षेपी प्रविधि द्वारा अमेरिका के एक जनजाति के सांस्कृतिक मूल्यों का संतोषजनक अध्ययन किया टर्नर ने एक मनोवृत्ति मापनी लो गटमैन प्रविधि पर आधारित था, बनाकर अमेकिन छात्रों एवं अंग्रेजी छात्रों के सांस्कृतिक मूल्यों का संतोषजनक तुलनात्मक अध्ययन किया। इस विधि द्वारा प्राप्त आंकड़ों पर पूर्णरूपेण भरोसा नहीं किया जा सकता है।

भौतिक संस्कृति वे पदार्थ जो मनुष्य द्वारा बनाए गये हैं या फिर प्रकृति में मौजूद है, जिन्हें हम आसानी से देख और घूर सकते हैं, भौतिक संस्कृति का अंग कहलाते हैं अर्थात पदार्थ ही भौतिक संस्कृति होता है। पहले मनुष्य की आवश्यकताएँ सीमित थी, फिर धीरे–धीरे मनुष्य की आवश्यकताएँ बढ़ती चली गयी। सभ्यता के विकास में मनुष्य ने अपने लिए आवश्यक वस्तुओं का अपादन शुरू कर दिया था। सर्वप्रथम मनुष्य ने पत्थर के वर्त्तनों, तीरों एवं औजारों का निर्माण किया। क्योंकि इससे वह अपना शिकार करता था, जंगली जानवरों से अपनी रक्षा करता था। यह मानव सभ्यता का प्रारंभिक चरण था। धीरे–धीरे उसकी आवश्यकताओं में वृद्धि हुई और उसने आग काआविष्कार किया। क्रमशः विकास के साथ इस प्रकार सभ्यता एवं संस्कृति का विकास हुआ और मानव की आवश्यकताएँ भी बढ़ती गई और उसने आवश्यकतानुसार अपने उपभोग की वस्तुओं उत्पादन करना आरंभ कर दिया। इसके फलस्वरूप भौतिक वस्तुओं का उत्पादन प्रारम्भ हुआ–घड़ी, रेडियो, साइकिल, टी0वी0 पंखा, स्कूटर, फ्रिज, कूलर, कम्प्युटर एवं आधुनिक मशीने और उपभोगजन्य अनगिनत भौतिक सामग्री का उत्पादन शुरू हो गया। भौतिक संस्कृति आज के युग की आवश्यकता बन चुकी है।

संस्कृति समाज में व्यक्ति के जीवन दृष्टि को व्यापक बनाकर उसमें सामूहिक भावना पैदा करती है, चाहे कोई भी संस्कृति हो वह अच्छाई का संदेश देती है। प्रत्येक संस्कृति छात्रों को यह शिक्षा देती है कि अपने दृष्टिकोण को उदार बनाकर दूसरे व्यक्ति अथवा समूह के लिए सोचं।

कोई भी संस्कृति सामाजिक संबंधों को बनाये रखने के लिए छात्रों को प्रभावित करती है, वस्तुतः संस्कृति सामुदायिक जीवन छात्रों को सीखलाने का सूत्रधार होता है। उसके अभाव में सामाजिक अराजकता की स्थिति पैदा हो सकती हे। छात्रों के व्यवहार को नियमित एवं नियंत्रित करती है। साथ ही छात्रों को सामूहिक अनुशंासन भी कायम करती है।

संस्कृति छात्रों के नीवन आवश्यकताओं को जन्म देती है। संस्कृति छात्रों के मन में नई जिज्ञासा का संचार करती है और आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक होती है यह संस्कृति ही है कि छात्रों एवं समूहों के सदस्यों के धार्मिक, नैतिक कलात्मक एवं सौदर्यात्मक हितों की संतुष्टि होती है। क्लब, थियेटर, क्रीड़ा समूह आदि की ओर हमें संस्कृति ही ले जाती है। मानव समूह के द्वारा छात्रों में भी संस्कृति का आधार है और सांस्कृतिक मूल्यों में किसी भी तरह का परिवर्तन संपूर्ण सामूहिक जीवन को प्रभावित करता है। जब दो संस्कृतियॉ एक दूसरे के निकट आती है तो सांस्कृतिक विकास होता है। एवं सांस्कृतिक परिवर्तन कहा जाता है। कभी–कभी इस सांस्कृतिक परिवर्तन की विरोधी प्रक्रिया भी शुरू हो जाती है। उदाहरणार्थ– भारतवर्ष में अंग्रेजों से बहुत सी बाते ग्रहण की गई लेकिन राष्ट्रीयता की भावना तथा स्वदेशी आन्दोलनों के कारण बहुत सी चीजों का बहिस्कार किया गया। प्राथमिक विद्यालयों में छात्रों को विभिन्न संस्कृति एक दूसरे से कुछ लेकर एवं कुछ देकर विकसित होता है। संसार की हरेक संस्कृति में इन विभिन्न संस्कृति एक दूसरे से कुछ लेकर एवं कुछ देकर विकसित होता है। संसार की हरेक संस्कृति में इन विभिन्न संस्कृति एक दूसरे से कुछ लेकर एवं कुछ देकर विकसित होता है। संसार की हरेक संस्कृति में इन तथ्यों का समावेश है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :

1. आधुनिक विकासात्मक मनोविज्ञान –महेन्द्र कुमार, यूनिवर्सिटी बुक हाउस, दू0शि0नि0, ल0ना0मि0 वि0, दरभंगा
2. सांस्कृति मनोविज्ञान–कवंलजीत कौर, यूनिवर्सिटी बुक हाउस, दू0शि0नि0, ल0ना0मि0वि0, दरभंगा
3. सिघल महेशचन्द्र – भारतीय शिक्षा की वर्त्तमान समस्याएँ, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर

***

मध्यमरामचरितम् नाटक के आदर्श नायक राम का चरित्र : एक विवेचन

*सत्येन्द्र कुमार यादव**

'मध्यमरामचरितम्' नाटक के नायक राम हैं। ये धीरोदात्त प्रकृति के दिव्यादिव्य नायक हैं। धीरोदात्त प्रकृति का नायक प्रायः राजा अथवा देवता होता है। धीरोदात्त प्रकृति का नायक निरभिमानी अत्यन्त गम्भीर, स्थिर और अविकत्थन होता है। यथा–

''महासत्वोऽतिगम्भीरः क्षमावानविकत्थन।
स्थिरो निगूढ़ाहारो धीरोदात्तो दृढ़वतः।।'' – दशरूपक 2/4

धीरोदात्त नायक सम्पूर्ण आदर्शों से युक्त होता है। नाटक के वर्ण्य विषयों के अनुरूप श्रीराम का स्वभाव 'धीरोदात्त नायक की कोटि में आता है। इनमें कहीं भी न चंचलता है, न औदात्य है और न ही अनावश्यक विलास प्रियता है। माया, झूठ कपट आदि से वे सर्वथा परे हैं। अतः नायक के धीरोद्धत, धीरललित आदि प्रभेदों के लक्षण उनमें नहीं पाये जाते। घटना के वर्ण्यविषयों के अनुसार श्रीराम में कहीं भी धृष्टता या स्वतंत्र निरंकुशता, कामाचार आदि की प्रवृत्ति का लेशमात्र भी संस्पर्श नहीं है। यह सर्वथा अनुकूल–नायक हैं। घटनाक्रम की स्वाभाविकता, उसकी सहज–संवेद्यता तथा परिस्थिति के अनुसार उसके प्रतीकार की यथोचित क्षमता श्रीराम का निजी वैशिष्ट्य है। अतः साक्ष्यों के आधार पर श्रीराम के नायकत्त्व के परिचय के रूप में कुछ उदाहरण द्रष्टव्य है।

उच्चकुल–प्रसूता

श्रीराम की उच्चकुल–प्रसूतता सर्वविदित है। विमल सूर्यवंश में उत्पन्न होकर उन्होंने वंशानुरूप अपने आचरण से वंश की विमलता और उच्चता का पूर्ण संरक्षण किया है। श्रीराम द्वारा दण्डकारण्य में राक्षस–वध की प्रतिज्ञा के अनन्तर उनके कुलानुरुप इस वीरोचित कार्य का वर्णन करते हुए विभूति ने उनकी कुलीनता की प्रशंसा की है। यथा–

चण्डांशुकुलसंभूतिरेष शीतांशुरद्भुतः।
तमसां रक्षतां हन्ता, रामस्तापोपशान्तये।।[1]

अर्थात् प्रचण्ड किरणों वाले सूर्य के कुल में यह अद्भुत चन्द्र उदित हुआ है। यह अंधकार तथा राक्षस दोनों का हनन करने वाला राम रूप चन्द्रमा ताप को शांत कर देने वाला है।

नायक राम के गुण

शालीनता

शालीनता जैसे गुण का परिचय श्रीराम ने पग–पग पर दिया है। विपत्ति के समय निषादराज द्वारा राज्य समर्पण की बात पर वे लोभ में नहीं आते। यहाँ तक कि उसके द्वारा दिये गये उपहारों को भी ग्रहण नहीं करते। अपितु मुनिवेशोचित का ही उपहार ग्रहण करते हैं। शालीनता का इससे अच्छा उदाहरण भला क्या हो सकता है। बल्कि उन्होंने निषादराज के प्रति ऐसा करने के लिए कृतज्ञता ही व्यक्त की। यथा–

श्रीराम : अलमुपहारैर्मित्र!

प्रतिग्रहोऽथवा भिक्षा याच्या वा दैन्यभाषणम्।
न धन्विनां भयं वाऽपि क्षत्रियाणां विशेषतः।।**–मध्यमरामचरितम् 2/42**
अलमद्योपहारेण मुनीनामपरिग्रहः।
अस्माभिश्चानुकर्त्तव्यः सम्यग्विपिनवासिभिः।।**–मध्यमरामचरितम् 5/43**
केवलं फलमूलादि क्षुधायाः शान्तये सकृत्।
स्वयमाहृत्य खादित्वा सावधानाश्चरामहे।।–**मध्यमरामचरितम्, 2/44**

---

* शोध-छात्र,संस्कृत विभाग, स्नातकोत्तर महाविद्यालय गाजीपुर

अर्थात् मित्र! ये उपहार मुझे मत दो। धनुर्धरों को विशेषरूप से क्षत्रियों को किसी से दान नहीं लेना चाहिए, भिक्षा नहीं मांगनी चाहिए, दीनतापूर्ण वाणी नहीं बोलनी चाहिए तथा किसी से भय नहीं करना चाहिए। यह उपहार रहने दो। मुनियों के लिए अपरिग्रह विहित है और मुनि व्रत लेने के बाद हमें भी उसका ही अनुपालन करना चाहिए। क्षुधा की शांति के लिए एक बार केवल फल और मूल को स्वयं लाकर सेवन करके हम सावधान होकर विचरण करने वाले हैं।

श्री राम की शालीनता उस समय और निखर जाती है, जब वे बार–बार भरत की प्रार्थना के बाद भी अयोध्या लौटने के बजाय पिता की आज्ञा से वन में रहना ही स्वीकार करते हैं। वे इसका युक्तियुक्त समर्थन भी करते हैं। यथा–

श्रीराम : – एकोऽसौ दातुकामो मे, राज्यं तातोऽन्वमोदत।
पित्रा मध्याम्बया द्वाभ्यामादिष्टोऽरण्यमागतः।।[2]
एष भूपस्य वाऽऽदेशः पित्रोराज्ञाऽथवा भवेत्।
प्रशास्तु भरतो राज्यमहं वत्स्यामि कानने।।

–मध्यमरामचरितम्, 4/42

अर्थात् श्री राम कहते हैं कि पिताजी ने अकेले ही मुझे राज्य देने की इच्छा तथा अनुमोदन किया था, किन्तु पिताजी और मध्यांबा दोनों की आज्ञा पाकर मैं वन को आया हूँ। यह महाराजा का आदेश हो अथवा माता–पिता की आज्ञा, भरत राज्य का शासन करें तथा मैं वन में निवास करूँगा।

जनप्रियता

श्रीराम जन प्रिय हैं उनकी जनप्रियता उस समय प्रमाणित होती जब वनगमन के समय उन्हें नगर के बाल–वृद्ध–युवा सभी वनगमन से रोकते हैं। इतना ही नहीं अपितु श्रीराम के वन प्रस्थान कर देने पर वे सभी उनके साथ प्रस्थित हो जाते हैं। उदाहरण द्रष्टव्य है –

केचित्सामर्थ्ययुक्ता अभिमुखमभितो राममार्गं समेता,
मा गाः स्वामिन्नरण्यं प्रकटमुखरुषाऽऽक्रोशवाचो व्यरुन्धन्।
केचिद् बद्धाग्रहस्ता अवनतवदना रुद्धकण्ठा अवाचो,
वृद्धा बाला युवानः सबलनिबलाः सर्व एवात्र पौराः।

–मध्यमरामचरितम्, 2/2

तथा

वीक्षस्व मित्र, विकलान्पुरवासिलोकान्,
रामं प्रयान्तमनुयातु मिमान्प्रवृत्तान्।
ये पृष्ठतः सलगुडाः स्थविरा अशक्ता,
बाहून्विधूय गमनाद्विनिवारयन्ति।।[3]

अर्थात् कुछ लोग जो सामर्थ्य से युक्त हैं, वे दोनों ओर से राम के मार्ग पर आकर इकट्ठा हो गए हैं और हे स्वामी, आप वन मत जाइए, यह कहकर अपना रोष प्रकट करते हुए उनका मार्ग अवरूद्ध कर रहे हैं। कुछ लोग दोनों हाथ जोड़कर खड़े हो गए हैं तथा कुछ लोग मुख नीचे करके चुपचाप खड़े हैं क्योंकि उनके कंठ रुँध गए हैं। वृद्ध, बालक, युवक, सबल, निर्बल, सारे के सारे पुरवासी यहाँ आ गये हैं।

देखो मित्र, इन पुरवासियों को जो अत्यन्त व्याकुल हैं तथा श्रीराम के साथ चले जाने को तत्पर हैं। उनको देखो, जो वृद्ध हैं तथा अशक्त हैं, वे हाथ में डंडे के सहारे चल रहे हैं और श्रीराम को वन जाने से रोक रहे हैं, मना कर रहे हैं।

श्रीराम की जनप्रियता किस सीमा तक है, यह उस समय देखते बनती है, जब श्रीराम पुरवासियों को छोड़कर अकेले प्रस्थान करते हैं। श्रीराम ने ऐसा इसलिए प्रिय पुरजन भूख, प्यास, नींद से व्याकुल होकर अत्यन्त परिश्रान्त मेरी चिन्ता में व्यथित रहेंगे। भूख, प्यास की गणना किये बगैर इनका इस तरह दुःखी रहना ठीक नहीं। अतः कर्त्तव्यपालन के लिए कपटपूर्वक चले जाने से आज मेरे

हृदय में दुःख ने प्रथम बार प्रवेश किया है, ऐसा श्रीराम सोचते हैं। पुरजनों से इतना राग जनप्रियता की पराकाष्ठा को अभिव्यक्त करता है। यथा–

'अस्मत्कृते पुरजनोऽपि कथं पिपासां,
क्षुच्चागणय्य भुवि सुप्त इदं न युक्तम्।। **–मध्यमरामचरितम् 2/6**
एतानिहैव सरितस्तटभूतलाड्.के,
सुप्तान्विहाय निभृतं निशि निर्दयस्य।
रामस्य हन्त कपटेन गमिष्यतो मे,
दुःखाड्.कुरस्य हृदये प्रथमावतारः।।[4]

अर्थात् हमारे कारण हमारे पुरजन भी भूखे–प्यासे भूमि पर ही सो गये हैं। यह ठीक नहीं है। इन भोले पुरवासियों को यहीं नदी तट पर रात में सोया हुआ छोड़कर चुपके से चले जाने को सोच रहे मुझ निर्दयी के हृदय में दुःख के अंकुर का यह प्रथम प्रादुर्भाव है। अर्थात् यह उत्तरोत्तर बढ़ता ही रहेगा।

शास्त्रज्ञ

श्री राम शास्त्रज्ञ हैं, तभी तो शास्त्रीय मर्यादाओं के अन्तर्गत कर्त्तव्य का समर्थन करते हैं। वनवास के विषय में पिता की आज्ञा से बढ़कर माता की आज्ञा को सिद्ध करना 'पितुदर्शगुणामाता' इत्यादि उनके शास्त्रीय सिद्धान्तों के ज्ञान को दर्शाता है। 'मध्यमरामचरितम्' से उपर्युक्त का उदाहरण देखिए–

एकोऽसौ दातुकामो मे, राज्यं तातोऽन्वमोदत।
पित्रा मध्याम्बया द्वाभ्यामादिष्टोऽरण्यमागतः।।**–मध्यमरामचरितम् 4/41**

अर्थात् पिताजी ने अकेले ही मुझे राज्य देने की इच्छा तथा अनुमोदन किया था, किन्तु पिताजी और मध्यांबा दोनों की आज्ञा पाकर मैं वन को आया हूँ।

श्रीराम राजनीतिशास्त्र में भी पारंगत हैं। भरत द्वारा राजा के अधिकारों की विवेचना करने पर श्रीराम सम्पत्ति के दान में बाद के निर्णय मान्य बताये हैं और राजनीतिके अनुसार भरत को ही राज्याधिकारी सिद्ध करते हैं। यथा–

पूर्वोच्छा बाध्यते पश्चात्, संपत्तिं दातुमिच्छतः।
परयापीच्छया तस्मात्, परैवाज्ञा गरीयसी।।**–मध्यमरामचरितम् 4/34**

अर्थात् सम्पत्तिदाता की पूर्व इच्छा बाद की इच्छा से बाधित हो जाती है। इसलिए बाद की आज्ञा ही बलवती होती है।

भाषाविद

'मध्यमरामचरितम्' नाटक के नायक श्रीराम 'भाषाविद' हैं। हनुमान के ब्राह्मण वेष धारण कर संस्कृतमय भाषण को सुनकर वे उनसे कह उठते हैं कि तुम भाषा और वेष से पण्डित लग रहे हो। इस प्रकार श्रीराम की शास्त्रज्ञता सुस्पष्ट है यथा–

मन्ये प्रत्युत्तरं सम्यग् लक्ष्मणोऽयं ममानुजः।
भाषावेशप्रयोगेण सांप्रतं पण्डितायसे।।[5]

अर्थात् मैं समझता हूँ, यह उत्तर सटीक है। यह मेरे भाई लक्ष्मण हैं। भाषा तथा वेश के प्रयोग से इस समय तुम एक पण्डित लग रहे हो।

अलौकिक सामर्थ्य

श्रीराम के चरित में अनेकों ऐसे कार्य हैं, जो साधारण जन के द्वारा सम्भव नहीं हैं। प्रकृत नाटक के अन्तर्गत भी बालि जैसे महावीर का एक बाण से वध अलौकिक कार्य ही कहा जा सकता है। इसकी वे प्रतिज्ञा भी करते हैं। यथा–

बालिनं निहनिष्यामि शरेणैकेन केवलम्।
मा भीस्त्वं मित्र सुग्रीव, रामोद्विर्नाभिभाषते।।**–मध्यमरामचरितम् 6/43**

इसी प्रकार चौदह हजार राक्षसों से युक्त खर–दूषण का अकेले वध करना अलौकिक सामर्थ्य को अभिव्यक्त करता है। यथा–

रामबाणनिहिताखिलसैन्यो,
द्वन्द्वयुद्धमसुरः प्रवितन्वन्।
मामायापि रघुनन्दनं रणे,
जेतुमिच्छुरधुना निहन्यते।।**–मध्यमरामचरितम् 6/4**

एक ही बाण से समुद्र–शोषण, वानर सेना द्वारा सेतुबन्ध निर्माण कार्य श्रीराम की अलौकिक कार्यक्षमता के उदाहरण हैं। यथा–

रघुवरे धनुषीषुवरं दध–
त्यनल वर्षिणमाकुलितोऽम्बुधिः।
प्रभुशरानलदाहसमाकुला–
खिलपयश्चर आह कृतांजलिः।।[6]

'मध्यमरामचरितम्' नाटक में नायक श्रीराम का एक और अद्भुत कार्य वर्णित है, जो लोक–सामान्यजन से सम्भव ही नही है। इसे पूर्ण करने के लिए स्वयं अगस्त्य मुनि ने श्रीराम से अभ्यर्थना की थी। यह कार्य है– पंचाप्सरतीर्थ के माण्डकर्णि ऋषि को मोक्ष प्रदान करना। इस प्रकार श्रीराम अलौकिक सामर्थ्य एवं अद्भुत कार्यक्षमता के धनी हैं। यथा–

अद्य राम विमोक्तव्यो माण्डकर्णिर्महातपाः।
त्वया कृपालुना स्त्रीणां कूटबन्धमुपागतः।। **–मध्यमरामचरितम् 7/33**
ओमित्युक्वा प्रभू रामो, विस्मयाय वनोकसाम्।
पश्यतामेव सर्वेषां, चमत्कारमिवाकरोत्।। **–मध्यमरामचरितम् 7/35**

अयि भो! मुनिस्तु श्रीरामदर्शन समकालमेव प्रकाशपुञ्जरूपेण श्रीरामस्यान्तः प्रविश्यराममयो जातः। देवबालाश्च कृतांजलयः श्रीरामाभिमुखमुपतिष्ठन्ति।[7]

इस प्रकार श्रीराम उच्च्व कुल प्रसूत, धीरोदात्त एवं मानवीय गुणों से पूर्ण सम्पन्न पात्र हैं। सुख–दुःख में अविचलित रहना, कर्त्तव्य का औचित्यपूर्ण पालन करना राम का सहज गुण है। वीरता, निर्भीकता, वचन पालन की परायणता, मित्र के प्रति सहज उपकार का भाव रखना, शत्रु के प्रति भी दया भाव राम की विशिष्टता है। भक्ति रखने वाले, साधनहीन जनों का आदर करना वे जानते हैं। प्रेम के आगे वे जाति, कुलधर्म को विशेष महत्व नहीं देते हैं। सत्य–प्रतिज्ञ और उचित मार्ग का अनुशरण करते हुए गुरुजनों की आज्ञा का पूर्ण समादर करने वाले हैं। राम के चरित्र में दानवीरता, शालीनता, पितृभक्ति, भातृप्रेम एवं सखाभाव का निदर्शन होता है। इस प्रकार डॉ0 कृपाराम त्रिपाठी 'अभिराम'कृत 'मध्यमरामचरितम्' नाटक में राम का एक आदर्श चरित नायक के रूप में समीचीन वर्णन किया गया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :

1. मध्यमरामचरितम्, डॉ0 कृपाराम त्रिपाठी 'अभिराम', शारदा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, 2010, पंचम अंक, श्लोक सं0 35
2. मध्यमरामचरितम् 4/41
3. मध्यमरामचरितम् 2/3
4. मध्यमरामचरितम् 2/7
5. मध्यमरामचरितम् 6/38
6. मध्यमरामचरितम् 6/80
7. मध्यमरामचरितम्, पृ0 89 का सम्भूति का सम्वाद।

***

वर्तमान सदी की चुनौतियां और गांधी दर्शन की प्रासंगिकता

*डॉ. विभा सिंह**

''वर्तमान सदी की चुनौतियां और गांधी दर्शन की प्रासंगिकता'' वर्तमान सदी, पूंजीवाद की विजय एवं उदारीकरण, वैश्वीकरण की प्रक्रिया के फलस्वरूप मानव के चरम विकास के रूप में देखीजा रही है। अपने प्रारंभिक दौर में ही 21वीं सदी को हिंसा, साप्रदायिक टकराव, धार्मिक कट्टरता, जातिवाद, नस्लवाद, बेरोजगारी, भुखमरी, युद्ध, आतंकवाद एवं अन्य कई विकट समस्याओं से जूझना पड़ रहा है। वैश्वीकरण के इस दौर में जो शक्तिशाली है, वही जीवित रहेगा जैसे जंगलराज की अवधारणा को स्थापित करने की कोशिश की जा रही है। उदारवाद के नये रूपने मानववाद को तिलांजलि देकर पूंजीपतियों को विश्व स्तर पर लूट की छूट दे दी है। अमीर और अमीर तथा गरीब और गरीब होने लगे हैं, पूंजीवादी साम्राज्य ने अफ्रीकी देशों का तहस–नहस कर दिया है। अरब देशों को मजहबी कट्टरता में समेटकर पूंजीवादी देश अपना उल्लू साधने में लगे है। एशियाई देशों को जातीय एवं क्षेत्रीय टकरावों में उलझाये रखा गया है। जनवादी आन्दोलनों के खिलाफ यथास्थिवाद का पोषण करने के लिये जालिम सरकारों को पूंजीवादी राज्यों का संरक्षण मिल रहा है। तथाकथित लोकतांत्रिक राज्य जनवादी मांगों को हिंसक रूप से कुचल रहे हैं। आधुनिक हथियारों के निर्माण एवं इनकी बिक्री के लिये पूंजीवाद ने राज्यों को युद्ध के लिये भी प्रोत्साहित किया है।

जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के प्रवेश के रास्ते साफ है। फलस्वरूप बेरोजगारी बढ़ी है। ऐसी अर्थव्यवस्था का विकास हो रहा है, जहां सब कुछ बाजार तय करेगा। ऐसी स्थिति में सामाजिक सरोकारों की कीमत पर मुनाफाखोरी ही बढ़ेगी। आर्थिक उदारीकरण ने योजनाबद्ध ढंग से श्रमिकों के लोकतांत्रिक अधिकारों को क्षति पहुंचाई है। आज विश्व जगत निश्चित रूप से विनाश के कगार पर खड़ा है। इसका कारण है विकट जातीय एवं धार्मिक विद्वेश जिनके परिणामस्वरूप ऐसे युद्ध शुरू हो सकते हैं जिनकी मिसाल इतिहास में नही मिलेगी। परमाणु अस्त्रों की संख्या में अंधाधुध वृद्धि का बराबर बना हुआ खतरा जिससे अकल्पनीय विनाश की नौबत आ सकती है। ऐसी स्थिति में मानव जाति को अपनी रक्षा के लिये नैतिक अथवा भौतिक दोनों में से किसी एक बल को चुनना है।

महात्मा मोहनचन्द करमचंद गांधी का जीवन दर्शन भौतिक बल का विरोध करते हुये नैतिक बल के द्वारा विकट समस्याओं के सामाधान का मार्ग प्रस्तुत करता है। सत्य एवं अहिंसा गांधी दर्शन का मूल आधार है। नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों का सार सत्य एवं अहिंसा ही है। गांधी जी ने मानव आत्मा के प्रति अपनी आस्था पर और सांसारिक विषयों में आध्यात्मिक मूल्यों और तकनीकों को लागू करने पर बल दिया। गांधी जी ने प्रयोग के तौर पर राज्य की संगठित शक्ति के सामने अहिंसा और सत्य की पवित्र शक्ति को ला खड़ा किया। गांधी जी की सत्य के प्रति भक्ति ने ही उन्हें राजनीति में उतरने के लिये प्रेरित किया। गांधी जी धर्म को राजनीति का एक अभिन्न हिस्सा मानते थे। उनका कहना था कि जो लोग यह कहते हैं कि धर्म का राजनीति से कोई संबंध नहीं है, वास्तव में धर्म के अर्थ को समझते ही नहीं। गांधी जी के अनुसार ईश्वर का मानवता से पृथक मानना भ्रामक है। गांधी जी के शब्दों में, ''मैं उन ईश्वर के अलावा जो लाखों मूकजनों के हृदय में निवास करते है, अन्य किसी ईश्वर को नहीं मानता। महात्मा गांधी मानवता की सेवा को ही वास्तविक धर्म समझते थे। गांधी जी ने राजनीति में धर्म के प्रयोग से राजनीति का आध्यात्मीकरण किया।

निःशस्त्र प्रतिरोध एवं सत्याग्रह की पद्धति का प्रयोग किया गया महात्म गांधी ने कोई वाद नहीं चलाया। समय–समय पर परिस्थितियों के अनुसार राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक तथा धार्मिक विचार प्रकट किये इन्हीं को संग्रह करके गांधीवाद का नाम दे दिया गया। गांधी जी ने स्वयं कहा था कि ''गांधीवाद नाम की कोई वस्तु नहीं है। मैं अपने पीछे कोई सम्प्रदाय छोड़कर नहीं जाना

* विभागाध्यक्ष श्री वासुदेव प्राथमिक शिक्षण प्रशिक्षण संस्थान गुतवन, जलालपुर, जौनपुर।

चाहता हूँ। मैं किसी नये मत को चलाने का दावा नहीं करता। सत्य और अहिंसा उतने ही पुराने हैं जितने कि पर्वत। मैंने तो केवल दोनों को विस्तृत क्षेत्र में प्रयोग करने का प्रयत्न किया है।

गांधीजी ने कभी हिंसा को स्वीकार नहीं किया वे आजीवन अहिंसा के समर्थक रहे। महात्मा गांधी ने कहा–''व्यक्ति की दो अन्तरात्माएं नहीं हो सकती एक व्यक्तिगत और सामाजिक तथा दूसरी राजनीतिक।'' मानवीय कार्यों के लिये सभी क्षेत्रों में एक ही नैतिक सहिता का पालन किया जाना चाहिये। हमें सत्य और अहिंसा को केवल व्यक्तिगत व्यवहार के लिये ही नहीं वरन संधों, समुदायों और राष्ट्रों के व्यवहार के सिद्धान्त बनाना है।

गांधी जी मानते थे कि हिंसा से कोई समस्या हल नहीं होती। हिंसा केवल प्रतिहिंसा को जन्म देती है। अहिंसा विरोधी के मन में मस्तिष्क पर स्थाई विजय दिलाने में समर्थ है। गांधी के शब्दों में अहिंसा का तात्पर्य अत्याचारी के प्रति नम्रतापूर्ण समर्थन नहीं है, वरन् इसका तात्पर्य अत्याचारी की मनमानी इच्छा का आत्मिक बल के आधार पर प्रतिरोध करना है। अहिंसा को मानव जगत का सर्वोच्च नियम मानते हुये गांधी जी का मत था कि अहिंसा के आधार पर ही एक सुव्यवस्थित समाज की स्थापना और भावी जीवन की उन्नति संभव है। महात्मा गांधी ने यंग इंण्डिया में लिखा कि मैं स्वप्नदर्शी अथवा कल्पना बिहारी व्यक्ति नहीं हूँ। मैं व्यावहारिक आदर्शवादी हूँ। अहिंसा का धर्म केवल मनीषियों एवं संतो के लिये नहीं है, वह सामान्य व्यक्ति के लिये भी है।

गांधी जी राज्य को भी अहिंसक स्वरूप प्रदान कर उसके अहिंसक समाज में परिवर्तित करने की बात करते थे। गांधी जी पुलिस, सेना, जेल, न्यायालय एवं प्रशासनिक विकास का प्रयोग जनता की सेवा के लिये करने को कहते थे। इनका प्रयोग जनता को डराने एवं कष्ट देने के लिये नहीं किया जाना चाहिये। शासन के स्वरूप को लोकतांत्रिक बनाने के लिये गांधी जी गांव समाज की स्थापना पर बल देते थे। गांव पंचायतें ही समस्त शासन के सत्ता का केन्द्र होनी चाहिये। गांधी जी व्यक्तिगत सम्पत्ति का प्रयोग समाज हित में करने की बात करते थे। वस्तुतः उनकी सम्पत्ति का वास्तविक स्वामी समाज है, वे तो इस संपत्ति के संरक्षक के रूप में कार्य करेंगे। श्रम सभी के लिये अनिवार्य होगा। सभी को समान सामाजिक अधिकार प्राप्त होंगे। गांधी जी बड़े उद्योगों को समाप्त कर छोटे–छोटे लघु उद्योगों की स्थापना पर बल देते थे। प्रत्येक व्यक्ति उत्पादन एवं साधनों का स्वयं स्वामी होगा। आर्थिक क्षेत्र में प्रतियोगिता विरोध व शोषण को समाप्त कर दिया जायेगा। मशीनों को मानवीय श्रम के शोषण का साधन नहीं बनाया जायेगा। वे औद्योगिकरण के विरोधी थे। गांधी जी मजदूरी एवं पूंजीपतियों में टकराव की जगह सहयोग की बात करते थे। गांधी जी पूंजीपति वर्ग को ट्रस्टी के रूप में कार्य करने की सलाह देते हैं। मजदूरों को पूंजीपतियों के संसर्ग में रहकर उनसे लाभ उठाना चाहिये। गांधी जी समस्त विश्व को एक परिवार समझते थे। विश्व बन्धुत्व की भावना रखते हुये वे राष्ट्रवाद के समर्थक थे। उनके आदर्श का विश्व अंतर्राष्ट्रीय शांति, सहयोग तथा मित्रता का था। वर्णव्यवस्था का समर्थन करते हुये वे अस्पृष्यता का खात्मा चाहते थे। साम्प्रदायिक एकता पर बल देते थे एवं स्त्रियों की दशा में सुधार के कट्टर समर्थक थे। वे शिक्षा के क्षेत्र में राजगार परक शिक्षा एवं मातृभाषा में शिक्षा प्रदान करने के पक्ष में थे। राजनीति में धर्म के सर्वाभौम नियमों सत्य, अहिंसा, प्रेम, सेवा आदि का पूर्ण रूप से पालन किया जाये। गांधी राजनीति से राजनीति के मान्य सिद्धांतों–विग्रह–विघटन, विद्रोह आदि को समाप्त कर उसके स्थान पर सद्भावना, सहयोग समन्वय की स्थापना चाहते थे। अपने अहिंसात्मक अस्त्रों–असहयोग आंदोलन, सविनय अवज्ञा आंदोलन, हिजरत या प्रवजन, अनशन, हड़ताल केवल आंतरिक क्षेत्र में ही नहीं वरन् विदेशी आक्रमण की स्थिति में भी सत्याग्रह का सुझाव दिया।

डॉ. अम्बेडकर ने कहा था– यदि प्रजातंत्र के शासन की बागछोर पंजीपतियों के हाथों में जाती है तो फिर अन्य प्रजाजनों को गुलामी में ही जीना मरना होगा। आज के वैश्वीकरण में वहीं स्थितियां देखने को मिल रही है। गांधी जी ने अपने दौर में निश्चित ही एक आदर्श प्रस्तुत किया था। गांधी जी के सत्य अहिंसा के सिद्धांत हर दौर में प्रासंगिक रहे हैं। लेकिन इस बात से भी इंकार नहीं किया जा सकता कि इन्ही आदर्शवादी मूल्यों की रक्षा के नाम पर बड़े–बड़े युद्ध भी लड़े गये हैं। और रक्तपूर्ण क्रान्तियां भी हुई हैं।

धार्मिक ग्रन्थों में राम–रावण युद्ध, कौरव–पाण्डव युद्ध आधुनिक इतिहास में फ्रान्स की क्रान्ति, रूस की क्रान्ति, चीन की क्रान्ति प्रथम एवं द्वितीय विश्व युद्ध मानवता की रक्षा और उसे न्याय प्रदान करने के लिये ही लड़े गये।

आधुनिक ज्ञान–विज्ञान में ऐसी योजनाएं बनाई जा सकती है, जिसके द्वारा दुनिया के अधिंकाश देशों को भूख, गरीबी, बेरोजगारी से यानि अभाव के अभिशाप से मुक्ति मिल सके। बशर्ते कि दुनिया की उत्पादन क्ष्ज्ञमता का दुरूपयोग थोड़े से सत्तावान लोगों की विलासिता, स्वच्छंद उपभोग और हैसियत बढ़ाने की होड़ के लिये न किया जाये। ऐसा तभी संभव है कि जब सत्तावन वर्ग जो पूंजी का केन्द्रीयकरण चाहता है उसे अपदस्थ कर दिया जाये।

गांधी जी का सिद्धांत उन्हें अपदस्थ करने के किसी भी आन्दोलन के खिलाफ है। ऐसे में गांधी जी ने पूंजीपतियों के लिये रक्षा कवच का ही काम किया। गांधी जी का ट्रस्टीशिप पूंजीवाद की ही रक्षा करता है। क्रान्ति द्वारा सबको स्वतंत्रता देने और मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण को समाप्त कर देने के लिये किये जाने वाले आन्दोलन में कुछ रक्तपात हो जाये तो मानवता की रक्षा के लिये किया जाने वाला आन्दोलन स्थगित करना न्यायसंगत नहीं है। जनता की सामाजिक गतिशील ताकत ही सामाजिक बदलाव लाती है। गांधी जी एक ऐसे नेता था कि जो बड़े पैमाने पर जनता को संघर्ष के लिये लामबंद कर सकते थे। साथ ही जनता की ओर से हिंसा के नाम पर संघर्ष को स्थगित कर सकते थे। गांधी जी का यह कार्य पूंजीपति व सामंतों का ही हित पोषण करता था। त्याग और बलिदान में महात्मका गांधी और उनके अनुयायियों की तुलना में क्रान्तिकारी किसी भी रूप में कम नहीं हैं।

सन्दर्भ :

- डॉ. बी. पट्टाभिसीता रमैया : गांधी और गांधीवाद, हिन्दी अनुवाद–वेदराज वेदालंकार, शिव लाल अग्रवाल एण्ड कं. प्रा.लि., आगरा।
- गाँधी जी : अहिंसक समाज की ओर
- डॉ. अचुत्यानन्द घिडिल्याल : आधुनिक भारतीय आर्थिक विचारक
- डॉ. प्रुल्लचन्द्र ओझा : रोमारोला महात्मा जी का जीवन दर्शन

***

उन्नाव जिले में शस्य प्रतिरूप : एक भौगोलिक अध्ययन

*दीपा यादव**
*डॉ. आनन्दकर सिंह***

सारांश

भारत एक कृषि प्रधान देश है। देश की 58 प्रतिशत जनसंख्या प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर ही निर्भर है। कृषि एक बहुआयामी क्षेत्र है जिसे कई सारे कारक प्रभावित करते हैं। साथ ही कृषि कई सारे तत्वों को स्वयं भी प्रभावित करता है। शस्य प्रतिरूप कृषि और उसके उत्पादन तथा उत्पादकता को प्रभावित करने वाला ऐसा ही कारक है। इस शोध पत्र में शस्य प्रतिरूप का उन्नाव जिले के संदर्भ में अध्ययन किया गया है। इस अध्ययन में जी आई एस और रिमोट सेंसिग से प्राप्त डेटा का विश्लेषण किया गया है। इसके अलावा प्राथमिक स्रोतों से भी आंकड़े जुटाये गये हैं। अध्ययन के उपरांत यह ज्ञात हुआ कि जिले में गेंहूं सर्वप्रमुख फसल है। दूसरी प्रमुख फसल धान है। इसके अलावा मक्का, दाल, तिलहन, सरसों आदि अन्य महत्त्वपूर्ण फसलें हैं। इस आधार उन्नाव जिले का शस्य प्रतिरूप गेंहूं–चावल प्रधान है। जिले में कृषिगत कई समस्याएं भी हैं। इन समस्याओं का इस अध्ययन में संज्ञान लिया गया है तथा उनका निदान भी बताया गया है।

ज्ञमलूवतक दृ शस्य, शस्य प्रतिरूप, जी आई एस, उत्पादन, उन्नाव।

1. प्रस्तावना

शस्य प्रतिरूपका अध्ययन न केवल कृषि प्रणाली की समग्र स्थिरता को समझने के लिए उपयोगी है, बल्कि यह उत्पादन एवं उत्पादकता की वृद्धि करने में भी सहायक रहता है। शस्य प्रतिरूप का तात्पर्य किसी निश्चित समय में विभिन्न फसलों के अंतर्गत क्षेत्र के अनुपात से है। आर सी तिवारी के अनुसार – "Cropping pattern means proportion of area under various at a pint of time." दूसरे शब्दों में, शस्य क्रम किसी क्षेत्र में उगायी जाने वाली फसलों के अनुक्रम को प्रदर्शित करता है जो कृषि जलवायुविक तथा सामाजिक–आर्थिक कारकों से प्रभावित होता है।

प्रायः शस्यन को क्षेत्रफल के आंकड़ों के आधार पर प्रदर्शित करते हैं। क्षेत्रफल के आधार पर भारत को 103 शस्यन क्षेत्रों में विभाजित किया जा सकता है। जिसमें से उत्तर प्रदेश में 12 शस्यन क्षेत्र स्थित हैं।

इसके अंर्तगत किसी क्षेत्र की सर्वाधिक उपज देने वाली फसलों का भूमि एवं जलवायु के संदर्भ में चुनाव किया जाता है। इसके उपरांत इन फसलों के साथ सर्वाधिक उपयुक्त फसल–चक्र का चुनाव किया जाता है। शस्यनक्रम में विभिन्न प्रकार की फसलों का उगाया जाना तथा उनकी सफलता उस स्थान की भूमि, जलवायु आदि के अतिरिक्त किसान की रुचि तथा अभिरुचि, भूमि का क्षेत्रफल, बाजार की, सिंचाई की सुविधा, स्थानीय रीति–रिवाज तथा योजना संबंधी आवश्यकताओं से भी प्रभावित होता है।

शस्य प्रतिरूप निर्धारण के कई मानदण्ड हैं। जैसे प्रमुख फसलों का संयोजन, तथा बुआयी मौसम आदि। फसल–संयोजन के आधार पर भारत में मुख्यतः चार प्रकार के शस्य–प्रतिरूप प्रचलित हैं–

1. एकल शस्य प्रतिरूप,
2. शस्य–चक्र,
3. बहुफसली शस्यन,
4. मिश्रित शस्य प्रतिरूप,

शस्य प्रतिरूप को बुआयी मौसम के अनुसारतीन भागों में विभाजित किया जा सकता है–

* शोधार्थी-भूगोल विभाग, जीवाजीविश्वविद्यालय ग्वालियर (म.प्र)
** सह-प्राध्यापक भूगोल विभाग, शास. एस. एल. पी. कॉलेज, मुरारग्वालियर (म.प्र)

1. द. प. मानसून के समय उगायी जाने वाली फसलें या खरीफ फसलें – इसमें ज्वार, बाजरा, धान, मक्का मडुआ, मूंगफली और कपास आदि प्रमुख हैं।
2. मानसून के उपरांत उगायी जाने वाली फसलें या रबी फसलें – इसमें गेंहूं, जौ, चना, मटर, सरसों आदि प्रमुख हैं।
3. मानसून पूर्व उगायी जाने वाली फसलें या जायद फसलें – इसमें जूट, धान, सब्जी, प्याज आदि प्रमुख हैं।

किसी क्षेत्र में शस्य प्रतिरूप के निर्धारण के लिये उस क्षेत्र में सर्वाधिक भूमि पर उगायी जाने वाली फसल को "आधारफसल"मानते हैं। शस्य प्रतिरूप निर्धारण में इसका विशेष महत्त्व होता है।इसके अलावा उस फसल के साथ उसी मौसम में उगायी जाने वाली फसलों को "साहचर्य फसल" या "पूरक फसल" कहते हैं।

2. अध्ययन क्षेत्र

प्राचीन काल में उन्नाव कोसल क्षेत्र के अंतर्गत सम्मिलित था। बाद में इसे अवध क्षेत्र में शामिल किया गया।ऐतिहासिक साक्ष्यों से ज्ञात होता है कि प्रसिद्ध चीनी तीर्थयात्री ह्वेन–त्सांग (636 ई.) भी उन्नाव में आये थे।लगभग 900 साल पहले, इस शहर का स्थल सघन वन से आच्छादित था। एक चौहान राजपूतगोडो सिंह ने 12वीं शताब्दी में जंगलों को साफ करवाकर, सवाई गोडो नाम से एक शहर की स्थापना किया।यह कुछ समय बाद कन्नौज के शासकों के हाथों में चला गया।कन्नौज के शासक ने खांडे सिंह को राज्यपाल के रूप में नियुक्त किया। बाद में एक बिसेन राजपूत और राज्यपाल के लेफ्टिनेंट अनवंत राय सिंह ने खांडे सिंह को मार डाला और यहां एक किला बनाया तथा इस जगह का नाम बदलकर उन्नाव कर दिया।

1857–58 में अंग्रेजों द्वारा अवध के अधिग्रहण के बाद, पुरवा जिला अस्तित्व में आया जिसका मुख्यालय उन्नाव बनाया गया।

उन्नाव जिला लगभग समांतर चतुर्भुजाकार है।इसका अक्षांशीय विस्तार 26°8' उत्तर से लेकर 27°2'उत्तर और देशांतरीय विस्तार 80°3' पूर्व से लेकर 81°3' पूर्व के बीच स्थित है।इसकी उत्तर–दक्षिण लंबाई 96 किमी. जबकि पूर्व–पश्चिम चौड़ाई 47 किमी. है।इसका कुल क्षेत्रफल 4,558 वर्ग किमी है। उन्नाव जिले के उत्तर में हरदोई, पूर्व में लखनऊ तथा दक्षिण में रायबरेली जिले स्थित हैं। पश्चिम में गंगा नदी इसे कानपुर और फतेहपुर जिलों से अलग करती है(उन्नाव जिला : अवस्थिति और विस्तार मानचित्र सं. – 1, 2 और 3)।

मानचित्र सं. – 1 मानचित्र सं. –2

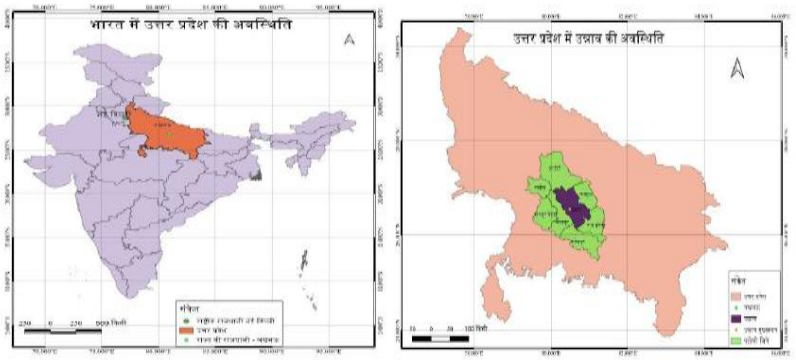

मानचित्र सं 3

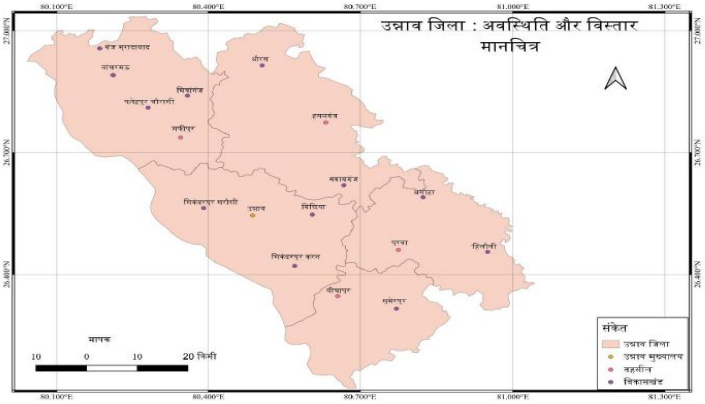

गंगा, कल्याणी और सई जिले की मुख्य नदियाँ हैं। गंगानदी इसकी पश्चिमी और दक्षिणी सीमा बनाती है जबकिकल्याणी और सई नदियां इसकी उत्तरी और पूर्वी सीमाएँ बनाती हैं। जिले की अन्य मुख्य धाराओं में कल्याणी, तानई, लोनी और मोराही (नौरही) आदि हैं।

भूगर्भीय रूप से यह जिला विशाल इंडो–गंगेटिक जलोढ़ मैदान का हिस्सा है, जिसका निर्माण इओसीन काल में उत्तर की ओर अपसरित गोंडवानालैंड और हिमालयी बेल्ट के बीच भूसन्नति में धीरे–धीरे अवसाद केनिक्षेपण से हुआ है।यह मैदान बजरी, रेत, गाद और मिट्टी के प्राचीन और नवीन निक्षेपों से बना है।

उन्नाव जिले का औसत तापमान जनवरी में 28°C जबकि जुलाई में 41°C रहताहै। यहां औसत वार्षिक वर्षा 88 सेमी होती है। अगस्त माह में सर्वाधिक 28.6 सेमी वर्षा होती है।जिला उपोष्णकटिबंधीय जलवायु में स्थित है। यह केंद्रीय समतल क्षेत्र (जोन – 4) कृषि जलवायु प्रदेश में स्थित है।

जिले में शारदा नहर प्रणाली और ट्यूबवेल के माध्यम से सिंचाई होती है। जिले के लगभग 70.9 प्रतिशत में खेती होती है, जिसमें से 92ः क्षेत्र सिंचित है।शुद्ध बुवाई क्षेत्र लगभग 3,00,000 हेक्टेयर क्षेत्र है। जिले के पश्चिमी भाग में गंगा और उसकी सहायक नदियों कल्याणी, खार, लोनी और मरहाई और जिले के पूर्वी भाग में सई नदी द्वारा सिंचाई होती है। ये सभी नदियाँ प्रकृति में बारहमासी हैं। सतही जल सिंचाई का हिस्सा 48ः है जबकि भूजल का 52ः है। जिले की अर्थव्यवस्था मुख्य रूप से कृषि पर निर्भर करती है।

उन्नाव अपने चमड़ा उद्योग और चमड़े के सामान के लिए जाना जाता है। चर्मशोधन उन्नाव में सबसे बड़ा उद्योग है। सुपरहाउस ग्रुप, मिर्जा टैनर्स, रहमान एक्सपोर्ट्स और जमजम टैनर्स आदि प्रमुख चर्मशोधन कारखाने हैं। उन्नाव लिहाफ (रजाई) और मच्छरदानी उत्पादन तथा छपाई और रंगाई के लिए भी जाना जाता है। मगरवाड़ा औद्योगिक क्षेत्र और उन्नाव औद्योगिक क्षेत्र उन्नाव के प्रमुख औद्योगिक उपनगर हैं।

2011 की जनगणना के अनंतिम जनसंख्या आंकड़ों के अनुसार–कुल जनसंख्या 3,108,367 है। इसमें से 1630087 पुरुष तथा 1478280 महिलाएं हैं। लिंगानुपात 907 जबकि साक्षरता दर 66.37ः है। उन्नाव का जनघनत्व 700 व्यक्ति/वर्ग किमी है।

तालिका सं. –1 (तहसील और विकासखण्ड)

क्र. सं.	तहसील	क्र.सं.	विकासखण्ड
1.	बीघापुर	1.	बीघापुर
		2.	सुमेरपुर
2.	पुरवा	3.	असोहा
		4.	पुरवा

		5.	हिलौली
3.	उन्नाव	6.	सिकंदरपुर सरौसी
		7.	सिकंदरपुर करन
		8.	बिछिया
4.	हसनगंज	10.	औरस
		11.	मियांगज
		12.	हसनगंज
		13.	नवाबगंज
5.	सफीपुर	14.	गंज मुरादाबाद
		15.	बांगरमऊ
		16.	फतेहपुर
		17.	सफीपुर

3. शोध प्रविधि

इस अध्ययन में प्राथमिक आंकड़ों का संग्रह व्यक्तिगत सर्वेक्षण और ईमेल तथा ह्वाटसएप के माध्यम से प्रश्नावली और अनुसूची भेजकर किया गया है।शस्य–प्रतिरूप संबंधी आंकड़ों के लिये कृषि विभाग एवं आई सी आर आई एस ए टी से सहायता लिया गया है। जनसंख्या संबंधी आंकड़े जिला जनगणना पुस्तिका 2011 से प्राप्त किये गये हैं। अक्षांश – देशांतर, क्षेत्रफल और कृषि योग्य भूमि से संबंधित आंकड़े राजस्व विभाग –उन्नाव से प्राप्त किया गये हैं।प्राप्त आंकड़ों के विश्लेषण में एम. एस. एक्सल की सहायता ली गयी है। आंकड़ा प्रदर्शन हेतु वृत्तारेख, दंडारेख एवं तालिका आदि का प्रयोग किया गया है। फसल शस्य–प्रतिरूप मानचित्रण हेतुरिमोट सेंसिंग (आरएस),आईआरएस डेटाऔर क्यू जी. आई. एस. सॉफ्टवेयर का प्रयोग किया गया है।

4. उद्देश्य

- क्षेत्र में बुआयी मौसम के अनुसार फसल प्रतिरूप का अध्ययन करना।
- विकासखण्डवार फसल वैविध्य का अध्ययन करना।
- क्षेत्र में कृषिगत समस्याओं का अध्ययन करना।

5. परिकल्पना

- अध्ययन क्षेत्र में फसल वैविध्य अधिक है।
- अध्ययन क्षेत्र में कृषिगत कोई समस्या नहीं है।

6. परिणाम

6.1.उन्नाव जिले में खरीफ का शस्यप्रतिरूप

6.1.1 बोये गये क्षेत्रफल के अनुसार खरीफ शस्य प्रतिरूप

उन्नाव जिले में खरीफ फसलों जैसे धान, मक्का, ज्वार, बाजरा, गन्ना, मूंगफली, अरहर, तिल और तिलहन आदि के अंतर्गत कुल कृषित क्षेत्र का 68 प्रतिशत क्षेत्र सम्मिलित है। अधोलिखित वृत्तारेख (वृत्तारेख सं– 1) और दण्डारेख (दण्डारेख सं– 1) के अध्ययन से स्पष्ट है कि 44 प्रतिशत क्षेत्र में धान, 17 प्रतिशत क्षेत्र में मक्का, 15 प्रतिशत क्षेत्र में दालें, 11 प्रतिशत क्षेत्र में तिलहन आदि बोया जाता है। इस प्रकार बोये गये क्षेत्र के अनुसार उन्नाव जिले में खरीफ फसल में धान, मक्का, दाल और तिलहन मुख्य हैं।

वृत्तारेख सं – 1

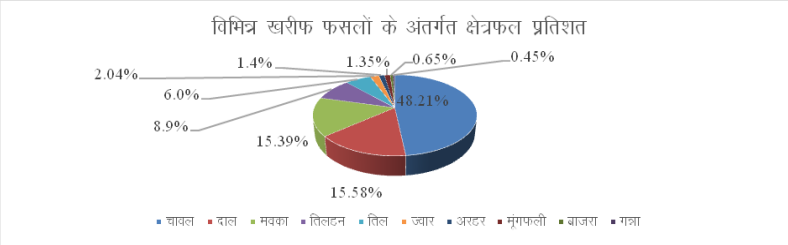

दण्डारेख सं– 1

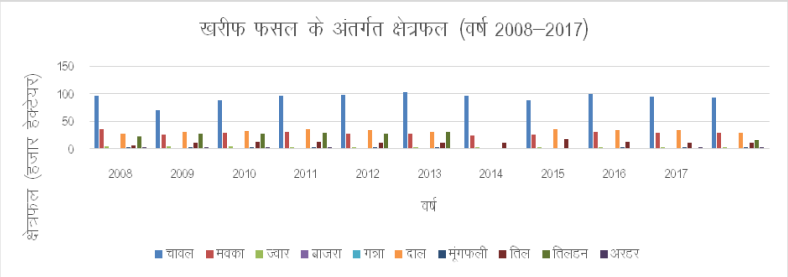

6.1.2 उत्पादन के अनुसार खरीफ शस्य प्रतिरूप

अधोलिखित रेखारेख (सं. 1) के माध्यम से स्पष्ट है कि खरीफ के मौसम में धान मुख्य फसल है। इसके अलावा मक्का और दाल भी महत्त्वपूर्ण फसलें हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि उन्नाव जनपद में खरीफ के मौसम में धान, दाल और मक्का मुख्य हैं।

रेखारेख –सं. 1

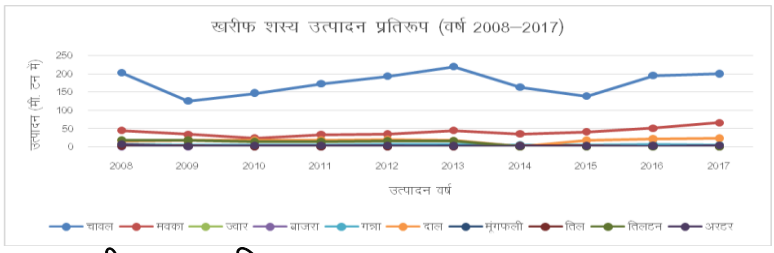

6.1.3 विकासखण्डवार खरीफ शस्य प्रतिरूप

अधोलिखित दण्डारेख (सं. 2) के अवलोकन से स्पष्ट है कि विकासखण्डवार शस्य प्रतिरूप में भी धान, मक्का, और उड़द (दाल) की प्रधानता है।

दण्डारेख – सं. 2

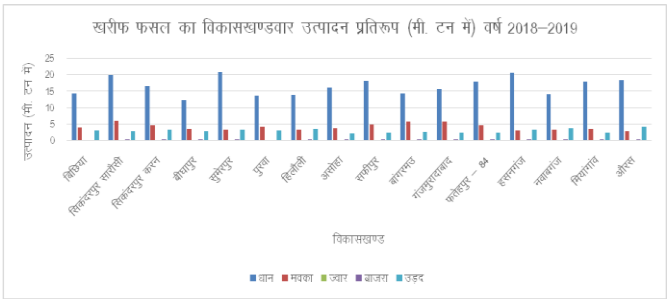

6.2.उन्नाव जिले में रबी का शस्यप्रतिरूप

6.2.1 बोये गये क्षेत्रफल के अनुसार रबी शस्य प्रतिरूप

अधोलिखित वृतारेख (सं. 2) के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि जिले में रबी के फसल के अंतर्गत मुख्य उपज गेंहूं है। इसके अंतर्गत सकल शस्य क्षेत्र का 79.52 प्रतिशत क्षेत्र समाहित है जबकि रबी के मौसम में अन्य फसलों की तुलना में गेंहूं का बोया गया क्षेत्र 92.57 प्रतिशत है। जिले में गेंहूं के अलावा सरसों के अंतर्गत 5.57 प्रतिशत तथा काबुली चना के अंतर्गत 1.24 प्रतिशत क्षेत्र सम्मिलित है।

वृतारेख – सं. 2

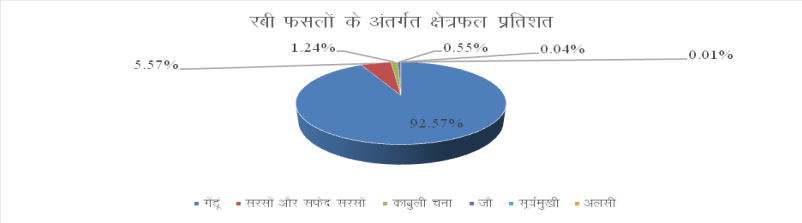

6.2.2 उत्पादन के अनुसार रबी शस्य प्रतिरूप

उन्नाव जिले में गेंहूं मुख्य फसल है। इसका प्रमुख कारण उपजाऊ मृदा, औसत वार्षिक वर्षा तथा सिंचाई की अच्छी सुविधा का होना है। रबी मौसम की सभी फसलों में सर्वाधिक क्षेत्र पर गेंहूं ही उगाया जाता है। गेंहूं का उत्पादन भी अन्य फसलों की अपेक्षा अधिक है (रेखारेख सं. 2)।

रेखारेख– सं. 2

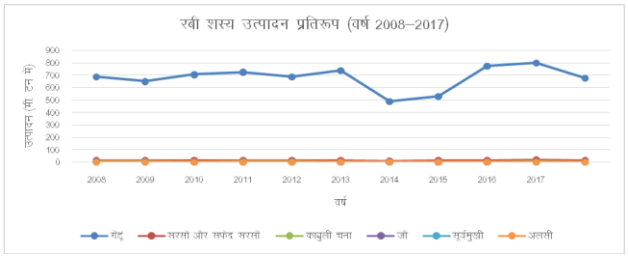

6.2.3 विकासखण्डवार रबी शस्य प्रतिरूप

विकासखण्ड स्तर पर प्राप्त आंकड़ों के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि गेंहूं सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण फसल है। अन्य फसलें प्रायः गौण हैं (दण्डारेख सं. 3)।

दण्डारेख –सं. 3

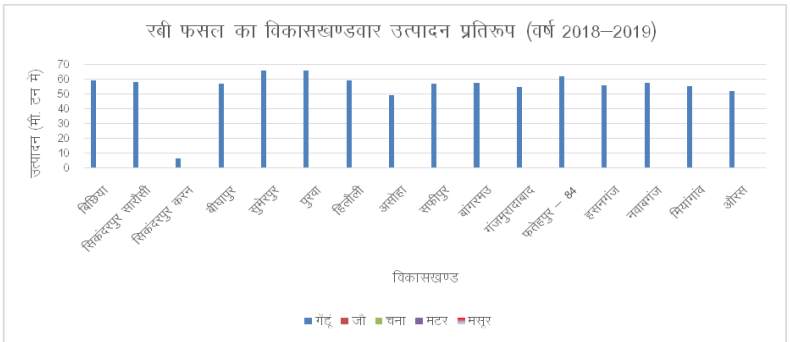

7. निष्कर्ष

उपर्युक्त अध्ययन से ज्ञात होता है कि

1. उन्नाव जनपद में गेंहूं सर्वप्रमुख फसल है। इसके बाद धान दूसरी सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण फसल है। इस प्रकार स्पष्ट है कि प्रथम परिकल्पना निरस्त हो जाती है।
2. दाल, मक्का, तिलहन, सरसों आदि अन्य महत्त्वपूर्ण फसलें हैं।

3. ज्वार, बाजरा, मूंगफली, उड़द, तिल, गन्ना, अरहर आदि की खेती प्रायः कम क्षेत्रफल में होती है।
4. विकासखण्डवार फसलों के अध्ययन से भी उक्त तथ्यों की पुष्टि होती है।
5. अधिकांश विकासखण्डों में गेंहूं और धान मुख्य फसलें हैं।
6. उक्त तथ्यों के आलोक में कहा जा सकता है कि उन्नाव जिले में फसल प्रतिरूप गेंहूं–धान प्रधान है।
7. फसल का यह प्रतिरूप भौतिक और सामाजिक–आर्थिक कारकों द्वारा निर्धारित होता है।
8. इसके अलावा मृदा उर्वरता, वर्षा प्रतिरूप, उर्वरकों का उपयोग, कृषकों की मनोदशा आदि भी इसके निर्धारक कारक हैं।
9. अध्ययन क्षेत्र में मृदा क्षारीयता, प्रौद्योगिकी की कमी, उन्नत बीजों का अभाव, फसल–प्रणाली की कमी आदि विद्यमान है। अतः द्वितीय परिकल्पना भी निरस्त हो जाती है।

8. सुझाव

1. जिले में एक बृहत क्षेत्र मृदा क्षारीयता से ग्रस्त है। इसलिए इस भूमि को उत्पादक बनाने के लिए कम लागत वाली मृदा सुधार तकनीक का प्रचार–प्रसार किया जाना चाहिए है।
2. उच्च जल स्तर वाले क्षेत्रों में उपयुक्त फसल प्रणाली शुरू करने की आवश्यकता है।
3. जिले में राज्य की तुलना में कम फसल उत्पादकता है। इसके लिये भ्ल्ट बीजों के प्रयोग को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।
4. मिट्टी और पर्यावरणीय स्वास्थ्य में सुधार और रासायनिक भार को कम करने के लिए फसलों में आईपीएम और आईपीएनएम प्रौद्योगिकी का प्रयोग किया जाना चाहिए।
5. चावल, गेहूं, सरसों, जौ, गन्ना, सब्जियों आदि की उपयुक्त नमक सहिष्णु किस्मों का प्रयोग किया जाना चाहिए।
6. ग्रामीण युवाओं और कृषक महिलाओं के सामाजिक–आर्थिक स्थिति सुधार हेतु मशरूम उत्पादन, मधुमक्खी पालन, वर्मीकम्पोसटिंग, डेयरी फार्मिंग, बकरी पालन, वानिकी और सब्जी उत्पादन, बीज उत्पादन और फलों तथों पौधों की नर्सरी आदि लगाने के बारे में प्रशिक्षित करना चाहिए।
7. कृषि महिलाओं को उन्नत फसलोत्तर प्रौद्योगिकी के साथ–साथ उद्यमिता विकास के बारे में प्रशिक्षित करना चाहिए।
8. जिले में तिलहन और दलहन की फसलों का क्षेत्रफल कम है। इसे बढ़ाया जाना चाहिए।
9. रबी और खरीफ में मूंगफली की अल्पकालीन किस्मों का प्रयोग किया जाना चाहिए।
10. उत्पादन बढ़ाने के लिए तिलहन और दलहनी फसल में जैव उर्वरकों का उपयोग प्रयोग किया जाना चाहिए।

9. संदर्भ सूची

9.1 पुस्तक

1. Nevill, H.R. (1903). Unao: A Gazetteer, Being Volume XI Of The District Gazetteers Of The United Provinces Of Agra And Oudh. Allahabad: Government Press. pp. 90, 113–39, 171, 217, 240–1.
2. Singh, J. (1985), Agricultural Geography, p.242
3. Shafi, M (1960), Measurement of Agricultural Efficiency in Uttar Pradesh, *Economic Geography*, Vol.36,
4. Yang, W.M (1968), Methods of Farm Management Investigation for Improving Farm Productivity, No. 80, F.A.O., Rome,
5. आर. सी. तिवारी (2019), कृषि भूगोल, प्रवालिका प्रकाशन इलाहाबाद पृ. सं. 125,126

9.2 शोधग्रंथ

1. Fazilur Rahaman (1999) "Diffusion of Agricultural Innovations in Upper Ganga-Yamuna Doab" Under the Supervision of Prof. Azimuddin Qureshi Dept. of Geography AMU Aligarh (India)

9.3 शोधपत्र

1. S. Panigrahy, S.S. Ray, K. R. Manjunath, P.S. Pandey, "A Spatial Database of Cropping System and It's Characteristics to AID Climate Change Impact Assessment Studies", ISPRS Archives XXXVIII-8/W3 Workshop Proceedings: Impact of Climate Change on Agriculture
2. Hifzur Rehman, Abdul Wahab and Asif, "Agricultural Productivity and Productivity Regions in Ganga-Yamuna Doab"
3. Bhalla, G.S (1978), Spatial Pattern of Agricultural Labour Productivity, *Yojona*, Vol.22, No.3, , pp.09-11
4. Munir, A (1988), Agricultural Productivity and Regional Development- A Case Study of the Sub- Himaliyan East Region of Uttar Pradesh, *The Geographer*, Vol.35, No.2, pp.48-49.
5. Rehman, H (1976), Mechanization of Farming and its Impact on Food Crop Productivity in Uttar Pradesh, *The Geographer*, Vol. 23, No. 2, , pp. 43-56,
6. July Rehman, H (2003),Spatial Distribution of Agricultural Productivity and Its Correlates in North Bihar Plain, *The Geographer*, Vol. 50, No. 1, , pp.73-84, Jan.

9.4 रिपोर्ट

1. जिला जनगणना पुस्तिका 2011, भाग –गगपप दृ ।
2. District survey report (d.s.r.) District of district-unnao

9.5 वेबसाइट

1. https://unnao.nic.in/
2. https://imd.gov.insection/climate/unnao.htm
3. http://cgwb.gov.in/NR/hydro/dist36

***

अंतर -सामुदायिक वैवाहिक संबंधः एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (सागर नगर के जैन समुदाय के विशेष संदर्भ में)

*नेहा जैन**
*प्रो. दिवाकर शर्मा***

पृष्ठभूमि

अंतर– सामुदायिक विवाह समाजशास्त्र विषय में एक नवीन अवधारणा है। जिसमें दो अलग–अलग समुदाय के मध्य वैवाहिक संबंध स्थापित होते हैं। लिए गये शोध विषय को सागर नगर के जैन समुदाय के संदर्भ में देखा गया है। जैन समुदाय अपनी सात्विक संस्कृति के लिए विख्यात है। इस समुदाय का उड़ीसा राज्य के लोगों के साथ वैवाहिक संबंध बन रहे हैं इन दोनों ही समुदायों के बीच सांस्कृतिक विभेद है। इस विभेद के बावजूद भी वैवाहिक संबंध स्थापित होना समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है। इस विषय को समझने के लिए गुणात्मक शोध प्रकृति का उपयोग किया गया है। शोध में अन्वेषणात्मक शोध संरचना लगाई गई है तथ्य संकलन के लिए अर्द्ध संरचित साक्षात्कार एवं अवलोकन विधि का प्रयोग किया गया है। इस शोध अध्ययन में वैयक्तिक अध्ययन पद्धति के माध्यम से तथ्यों का संकलन किया गया है। शोध पत्र के माध्यम से यह जानने का प्रयास किया गया है कि वह कौन से कारण है जिससे जैन समुदाय अंतर सामुदायिक विवाह करने के लिए अपने समुदाय को प्रोत्साहित कर रहा है।

शब्द कुंजी – अंतर –सामुदायिक विवाह

मनुष्य का सबसे बड़ा गुण उसकी संस्कृति है। ऐसी सांस्कृतिक गुण के कारण व्यक्ति अपने व्यवहार करने के तरीके एवं सामाजिक संबंधों के निर्माण की प्रक्रिया को संपन्न करता है। व्यक्ति अपने परिवर्तन और विकास में सहयोग को प्राप्त करने के लिए अन्योयाश्रित होता है। जो कि बिना संबंधों के निर्माण के संभव नहीं हो सकता। यदि प्रसिद्ध समाजशास्त्री **पारसंस** के सिद्धांत में व्यक्ति की आवश्यकता या लक्ष्य प्राप्ति को समझें, तो स्पष्ट होगा कि प्रत्येक व्यक्ति की सामाजिक क्रिया एवं संबंध बनाने के पीछे उसका निर्धारित लक्ष्य होता है। जिसके लिए वह समाज एवं संस्कृति में से एक माध्यम का चयन करता है, इस माध्यम के चयन के पीछे कई प्रकार के कारण होते हैं। जो कि उस कर्ता यदि व्यक्ति के पास निहित स्रोतों पर आधारित होते हैं। जिसमें उसका सबसे सुलभ माध्यम प्राप्त हो उसी का चयन व्यक्ति द्वारा किया जाता है। जैन समाज द्वारा अंतर सामुदायिक विवाह करने के पीछे यदि इस सिद्धांत का प्रयोग करके समझने का प्रयास करें तो स्पष्ट होगा कि जैन समुदाय के व्यक्ति का लक्ष्य विवाह संपन्न करना है। क्योंकि विवाह सामाजिक निरंतरता के लिए एक आवश्यक कड़ी है, जिसके बिना किसी भी समाज का अस्तित्व संभव नहीं हो सकता किंतु जब व्यक्ति को विवाह के लिए अपने समुदाय में माध्यम प्राप्त नहीं होता तो वह दूसरे समुदाय से अपनी क्षमता द्वारा माध्यम की तलाश करता है। यहीं प्रक्रिया अंतर–सामुदायिक विवाहो को प्रोत्साहित करती है।

सामुदायिक संबंध – समाजशास्त्र विषय के रूप में नवीन हैं, किंतु इसका इतिहास प्राचीन है।(**बोगडस**) समाज के निर्माण के साथ ही व्यक्ति के अंदर अपने स्वार्थों की भावना का निर्माण होने लगता है,इसी स्वार्थ पूर्ण भावना में क्षेत्र, धर्म, जाति जैसी अवधारणा ज्यादा प्रभावशाली होने लगती हैं। व्यक्ति अपने जीवन को व्यवस्थित रूप से चलाने के लिए अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करना चाहता है। प्रोफ़ेसर **ग्रीन** द्वारा दो प्रकार की क्रियाओं की बात की गई है। वह कहते हैं कि व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सहयोग या संघर्ष में से किसी एक क्रिया का चयन करता है। लेकिन

* शोधार्थी, समाज शास्त्र एवं समाज कार्य विभाग, डॉ हरि सिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)
** (शोध निर्देशक), समाज शास्त्र एवं समाज कार्य विभाग, डॉ हरि सिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)

व्यक्ति असहयोग की अपेक्षा सहयोग को अधिक बल प्रदान करना चाहता है और संबंधों के निर्माण की प्रक्रिया इसी सहयोग से आरंभ होती है।

मानव द्वारा बनाए गए संबंधों में दो प्रकार के संबंध सबसे महत्वपूर्ण होते हैं प्राथमिक संबंध एवं द्वितीयक संबंध। (**कूले**) व्यक्ति जन्म के साथ ही प्राथमिक संबंधों के जाल से जुड़ा होता है। जिसमें परिवार, पड़ोस एवं उसकी मित्र मंडली शामिल होती है। (**कूले**) बच्चे के बड़े होने के साथ ही उनकी आवश्यकता बढ़ती जाती हैं, उसी प्रकार व्यक्ति के संबंधों की सीमा में भी वृद्धि होती है। व्यक्ति समूह से निकलकर सामुदायिक संबंधों से जुड़ जाता है। प्रसिद्ध समाजशास्त्री **किंग्स्ले डेविस** के अनुसार " समुदाय लघुत्तम प्रादेशिक समूह है, जो सामाजिक जीवन के सभी पक्षों को सम्मिलित करता है। "समुदाय किसी सीमित क्षेत्र के भीतर सामाजिक जीवन का पूर्ण संगठन है"। (**आर्गवन एवं निमकार्फ़**) "समुदाय सामाजिक प्राणियों का एक समूह है, जो सामान्य जीवन व्यतीत करते हैं जिसमें अनंत प्रकार के एवं जटिल संबंध स्थापित है, जो उस सामान्य जीवन के कारण उत्पन्न होते हैं अथवा जो इसका निर्माण करते हैं। (**गिन्सबर्ग**) समाजशास्त्र के विद्वानों द्वारा दिए तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि समुदाय व्यक्ति के जीवन पर पहचान देता है साथ ही नियम एवं संस्कृति की व्यवस्था से अपने समुदाय के व्यक्तियों की आवश्यकताओं की पूर्ति में सहयोग प्रदान करता है।

अंतर सामुदायिक संबंध – प्रत्येक समाज एवं समुदाय की एक निश्चित निर्धारित संस्कृति होती है। व्यक्ति सामुदायिक दबाव अपने ऊपर महसूस करता है। इसी कारण व्यक्ति के ऊपर समाज एवं समुदाय का नियंत्रण बना रहता है। यह दबाव सांस्कृतिक नियमों एवं व्यवहार से उत्पन्न होता है, जिसे समुदाय के संपूर्ण व्यक्ति मानते हैं। और यदि सामुदायिक व्यक्ति इसका उल्लंघन करता है तो समुदाय के अन्य व्यक्तियों द्वारा उल्लंघन करने वाले व्यक्ति की आलोचना की जाती है। यह एक अनौपचारिक नियंत्रण होता है। संचार प्रणाली के विकास के साथ ही व्यक्ति और संस्कृतियों का आपसी संपर्क दूसरे व्यक्ति एवं संस्कृतियों से बढ़ गया है। फल स्वरूप व्यक्ति एवं संस्कृतियों के बीच आदान प्रदान के साथ ही संबंधों के नियमों की नवीन स्थापना होने लगी है। व्यक्ति अपनी जरूरत एवं आवश्यकता के अनुसार अपने समुदाय के बाहर दूसरे समुदाय से अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति को ध्यान में रखकर प्राप्त अवसरों की खोज करने लगता है, और अंतर सामुदायिक संबंधों की शुरुआत होती है।

भारत भिन्नता की संस्कृति को लिए हुए एक विशाल देश है जिसमें क्षेत्र बाद खान पान, धर्म जाति आदि की अलग –अलग संस्कृति लिए हुए लोग रहते हैं। यहां तक कि भारत में प्रजाति भिन्नता के तत्व विद्यमान हैं। समुदाय का निर्माण इन सभी आधारों से होता हैं। दो समुदायों के बीच इन भिन्नताओ के बावजूद अंतर सामुदायिक संबंधों का निर्माण निश्चित रूप से ही उन दोनों समुदायों के बीच अपनी –अपनी आवश्यकताओं को पूरे करने का एक माध्यम है। इसी माध्यम के द्वारालक्ष्य को पूरा करने के लिए दोनों समुदायों के बीच अंतर– सामुदायिक संबंध स्थापित होते हैं। अंतर सामुदायिक संबंध स्थापित होने की प्राथमिक चरण दो व्यक्तियों के संपर्क से आरंभ होता है। जब दो भिन्न–भिन्न समुदाय के व्यक्ति एक निश्चित लक्ष्य को लेकर या फिर किसी निश्चित स्थान पर एक माध्यम द्वारा अपने उद्देश्य को पूर्ण करने के लिए संपर्क स्थापित करते हैं। इसके बाद उन दोनों व्यक्तियों के बीच प्रतियोगिता आरंभ होती है, यह प्रतियोगिता समायोजन के साथ दोनों समुदाय आगे बढ़ते हैं, आखिर में आत्मसात की प्रक्रिया दोनों संस्कृति समुदायों के बीच होती है।(**रॉबर्ट पार्क**)

भारत में संचार प्रणाली के फैलाव से सांस्कृतिक नियमों एवं मूल्यों का फैलाव हुआ है। इस फैलाव द्वारा नवीन संबंधों के निर्माण की प्रक्रिया का भी आरंभ हुआ, नवीन संपर्क में रोजगार शिक्षा स्वास्थ्य आदि महत्वपूर्ण आवश्यकताओं की पूर्ति करने का उद्देश्य होता है। संस्कृति के अंतर सामुदायिक फैलाव के फल स्वरूप एक समुदाय का दूसरे समुदाय की संस्कृति पर प्रभाव दिखाई देता है। जिसमें मुख्य रूप से फैशन पहनावा और खान पान द्वारा हम अंतर सामुदायिक संस्कृति को महसूस कर सकते हैं किंतु यह आदान प्रदान वैवाहिक संबंधों की सीमा रेखा को तोड़ता है तो यह एक नवीन अवधारणा को जन्म देता है। विवाह और नातेदारी जैसे संबंधों में आज की सामाजिक एवं सामुदायिक दबाव व्यक्ति पर अनौपचारिक रूप से बना रहता है।

वैवाहिक संबंध – विवाह समाज के एक महत्वपूर्ण एवं आवश्यक संस्था है, जो समाज के व्यक्तियों को यह स्वीकृति प्रदान करती है, कि पुरुष एवं स्त्री दोनों यौन संबंधों को बना सकते हैं, तथा वैध रूप से संतानों को जन्म दे सकते हैं। विवाह के बिना बनाए गए यौन संबंधों को समाज स्वीकार नहीं करता है। अपितु विवाह मनुष्य की जैविक आवश्यकता के साथ–साथ सामाजिक आवश्यकता को भी वैधानिक तरीके से पूरा करने वाली महत्वपूर्ण एवं आवश्यक संस्था है। विवाह अधिकारों का एक गुच्छा है।(**एडमंड लीच**) इसमें मुख्य रूप से निम्न अधिकार शामिल होते हैं, संतानों की उत्पत्ति यौन संबंध बनाने की स्वतंत्रता, संपत्ति पर अधिकार, सामाजिक रूप से अधिकार, समुदाय एवं लोगों के बीच विवाह जन्य संबंध स्थापित करने का अधिकार। विवाह एक सार्वभौमिक संस्था है, जो कि सभी समाजों में पाई जाती है हालांकि प्रत्येक समाज की संस्कृति के अनुसार वैवाहिक विधान अलग–अलग हो सकते हैं। विवाह, परिवार एवं नातेदारी तीनों ही समाज की आधारभूत मौलिक संस्था है, तीनों का संबंध मानव के यौन जीवन से घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ है।

व्यक्ति यौन क्रियाओं को सहवास द्वारा पूरा कर सकता है, किंतु समाज ऐसे व्यवहार को स्वीकार नहीं करता है। जबकि विवाह एक सामाजिक एवं धार्मिक संस्कारों का जाल है। हालांकि कुछ समाजों एवं समुदायों में विवाह को संस्कार के स्थान पर एक समझौता माना जाता है। समसामयिक दौर में समझौता स्वरूप विवाह की संख्या में लगातार वृद्धि हो गई है, व्यक्ति अपने जीवन की योजना को ध्यान में रखकर वैवाहिक संस्था से जुड़ता है। रोजगार के स्वरूप के अनुसार वर्तमान में वैवाहिक प्रस्ताव को प्राथमिकता दी जाती है साथ ही दोनों के व्यवसाय के अनुसार भी वैवाहिक समझौते को बल प्रदान किया जाता है उदाहरण स्वरूप डॉक्टर लड़का जीवनसाथी के लिए डॉक्टर पत्नी की अपेक्षा करता है।

विवाह समाज की एक महत्वपूर्ण एवं आवश्यक संस्था है, इसी कारण समाज एवं समुदाय वैवाहिक नियमों की पालन के प्रति अधिक सक्रिय है। निर्धारित नियमों द्वारा ही यह तय किया जाता है, कि विवाह में जीवनसाथी का चुनाव किस प्रकार से किया जाएगा। जीवन साथी के चुनाव के लिए समाज एवं समुदाय ने निर्धारित किया हुआ है। कि किस समाज से लड़की ली जा सकती है और किस समाज में से लड़के का चयन किया जाएगा। विवाह में अतः विवाह में निषेध एवं स्वीकृति स्वरूप दोनों ही नियमों के अनुसार वैवाहिक संबंधों को संपन्न किया जाता है।

अंतर सामुदायिक वैवाहिक संबंध – विवाह धार्मिक संस्कारों से बनी एक महत्वपूर्ण संस्था है, जो एक आधार शिला के रूप में परिवार एवं नातेदारी व्यवस्था के लिए माना जाता है। इसी कारण विवाह एक निश्चित नियमों द्वारा प्रत्येक समाज एवं संस्कृति द्वारा निर्धारित किया जाता है। प्रत्येक समाज एवं संस्कृति के अनुसार विवाह का स्वरूप भी सभी समाजों में अलग– अलग होता है। यह माना जाता है कि विवाह दो व्यक्तियों के बीच संबंध होता है, और यह ज्यादा हुआ तो 2 परिवारों को प्रभावित करता है विवाह उपरांत अधिकतम अपनी जाति या धर्म को विवाह प्रभावित करता है समाजशास्त्र में इसी अनुसार अंतर सामुदायिक वैवाहिक संबंधों को समझा जाता है किंतु इस प्रकार के विवाह में दो समुदाय विवाह से प्रभावित होते हैं और दोनों ही समुदाय पर इस प्रकार के विवाहो का प्रभाव दिखाई देता है।

सागर नगर के जैन समुदाय एवं उड़ीसा प्रांत के समुदाय के बीच अंतर सामुदायिक वैवाहिक संबंधों का निर्माण हो रहा है। इस प्रकार के विवाह में जैन समुदाय के लड़के का उड़िया समुदाय की लड़की के साथ अंतर सामुदायिक वैवाहिक संबंध स्थापित हो रहे हैं। इस प्रकार के वैवाहिक संबंधों में यह देखने का प्रयास किया गया है, कि वह कौन से कारण है जिससे सागर नगर के जैन समुदाय को अंतर सामुदायिक वैवाहिक संबंधों के लिए प्रोत्साहित किया है साथ ही अंतर सामुदायिक वैवाहिक संबंध निश्चित क्षेत्र एवं निश्चय समुदाय से ही क्यों हो रहे हैं। उड़ीसा समुदाय से वैवाहिक संबंध स्थापित होने के पीछे क्या महत्वपूर्ण कारण हैं।

अध्ययन विधि – इस शोध पत्र की शोध प्रकृति गुणात्मक है जिसमें विवाह के कारण को समझने का प्रयास किया गया है। अन्वेषणात्मक शोध प्ररचना का प्रयोग किया गया है। क्योंकि यह

शोध प्रकल्पनात्मक है तथ्य संकलन के लिए साक्षात्कार अनुसूची एवं अवलोकन का प्रयोग किया गया है। अध्ययन विधि के रूप में वैयक्तिक अध्ययन पद्धति का प्रयोग किया गया है। उत्तरदाताओं का चयन निदर्शन के लिए स्नोबॉल पद्धति को लिया गया है। जिसके तहत अंतर सामुदायिक विवाह हेतु परिवार एवं विवाहित जोड़ों का चयन किया गया है।

अध्ययन क्षेत्र – शोध पत्र में अध्ययन क्षेत्र का अपना एक विशिष्ट महत्त्व होता है अध्ययन क्षेत्र के निर्धारण में जैन समुदाय के पर्याप्त प्रतिनिधित्व को ध्यान में रखा गया है सागर नगर में जैन समुदाय का पर्याप्त प्रतिनिधित्व होने के साथ ही इसमें ग्रामीण एवं नगरीय दोनों ही जीवन शैलियों को देखा जा सकता है। जैन समुदाय में अंतर सामुदायिक वैवाहिक संबंधों का अध्ययन करने के लिए सागर नगर अध्ययन क्षेत्र के रूप में उपयुक्त है।

जैन समुदाय एक विशिष्ट सांस्कृतिक वातावरण में अपनी अस्मिता की रक्षा के लिए प्रयत्नशील है भारतवर्ष में जैन धर्मावलंबियों का संख्यात्मक स्वरूप समझा जाए तो यह अल्पसंख्यक समुदाय की श्रेणी में आते हैं जैन समुदाय का इतिहास एवं संस्कृति पर हिंदू धर्म का प्रभाव रहा है, बावजूद जैन समुदाय अपने अस्मिता के साथ मजबूती से खड़ा रहा है। विवाह का स्वरूप जैन धर्म में संस्कार है, जिसमें विधानों का विशेष महत्व होता है। भारत में जैन समुदाय की धार्मिक उत्पत्ति के बाद ही दो भागों में विभाजित हो गया था। सागर में श्वेतांबर जैन समुदाय है, सागर नगर के जैन धार्मिक समुदाय के वैवाहिक संबंध संस्कार स्वरूप संपन्न होते हैं।

अंतर सामुदायिक विवाह के पीछे कारण – अध्ययन के दौरान प्राप्त तथ्यों के आधार पर समझा जाए तो मुख्य रूप से जैन समुदाय के अंतर सामुदायिक विवाह के पीछे दो महत्वपूर्ण कारण निकल कर सामने आते हैं। जो सामान्य रूप से सभी उत्तर दाता से प्राप्त तथ्यों में सामान्य रूप से मिले हैं। जिसमें सागर नगर के जैन समुदाय के लड़कों की शिक्षा का स्तर , दूसरा जैन समुदाय में लिंग अनुपात असमानता का होना हैं।

1. शैक्षणिक कारण – अंतर सामुदायिक वैवाहिक संबंधों को सागर नगर के जैन समुदाय के दृष्टिकोण से समझें तो शैक्षणिक कारण एक महत्वपूर्ण कारण के रूप में निकल कर सामने आता है। शोध पत्र के विषय के अनुसार विवाहित जोड़ों की शिक्षा को समझना एक आवश्यक दृष्टिकोण है। जो इस शोध को एक नवीन दिशा प्रदान करता है। सागर नगर के जैन समुदाय के लड़के जिन्होंने अंतर सामुदायिक विवाह किए हैं उन सभी का शैक्षणिक स्तर निम्न है। लिए गए तथ्यों में मात्र एक ही उत्तरदाता स्नातक डिग्री धारी है, जो उसने विवाह उपरांत प्राप्त की सागर नगर का जैन समुदाय नौकरी की अपेक्षा व्यापार को अधिक प्राथमिकता देता है, और ज्यादातर परिवारों के पास परंपरागत व्यापार स्थापित हैं। इसी कारण से परिवार के बच्चों को पढ़ाई के साथ शुरुआत से ही पारिवारिक व्यापार में रुचि बन जाती है। वह शिक्षा प्राप्त करने की उम्र में व्यापार से भी जुड़े रहते हैं, इसका प्रभाव उनकी शिक्षा में दिखाई देता है और धीरे–धीरे उनकी शैक्षणिक स्थिति कमजोर पड़ जाती है। एक समय के बाद वह शिक्षा को छोड़ अपने परंपरागत व्यापार से जुड़ जाते हैं। जैन समुदाय में शिक्षा का दूसरा पक्ष भी अत्यधिक महत्वपूर्ण है, क्योंकि जैन समुदाय में लड़कियों का शैक्षणिक स्तर लड़कों की अपेक्षा अधिक होता है। लड़कियां व्यापार एवं व्यवसाय मैं ज्यादा रुचि नहीं रखते और उनका ध्यान शिक्षा की ओर अधिक होता है। प्राप्त तथ्यों के आधार पर सागर नगर के जैन समुदाय में लड़कियों की औसत शैक्षणिक स्तर जैन समुदाय के लड़कों की तुलना में देखें जिस कारण से लड़कियां विवाह के समय क्या इच्छा रखती है, कि उनके जीवन साथी की शैक्षणिकता उच्च रहे। यह नवीन समस्या सागर नगर के जैन समुदाय के सामने उत्पन्न होती है जिस कारण से जैन समुदाय की लड़कियां दूसरे समुदाय से वर का चुनाव कर लेती हैं। इस प्रकार के वैवाहिक संबंध से जैन समुदाय के लड़कों के सामने विवाह का संकट उत्पन्न हो जाता है और अल्पसंख्यक जैन समुदाय के लड़कों को विवाह के लिए दूसरे समुदाय की लड़कियों पर निर्भर होना पड़ता है।

2. लिंग अनुपात –किसी भी जाति समुदाय में वैवाहिक संबंधों के लिए सामान्यतः एक महिला और एक पुरुष का होना आवश्यक है। प्रत्येक समुदाय प्राथमिक रूप से विवाह के लिए अपने समुदाय के अंदर

ही के दूसरे अवसर उपलब्ध ना होने के पीछे आसमान लिंग अनुपात एक प्रमुख कारण है। सागर नगर में जैन समुदाय संख्यात्मक प्रतिनिधित्व के रूप में अपेक्षाकृत अन्य नगरों की तुलना में अधिक हैं। सागर नगर में 44,314 (संजीव :2017) जैन समुदाय के व्यक्ति रहते हैं। जिसमें महिला और पुरुष के बीच लिंग अनुपात 927 है अर्थात प्रति 1000 में से 73 व्यक्ति या तो आविवाहित रहेंगे या उन्हें अपने विवाह के लिए दूसरे समुदाय में से जीवनसाथी का चुनाव करना पड़ेगा साथ ही जब जैन समुदाय की लड़कियां दूसरे समुदाय से विवाह संबंध स्थापित कर लेती हैं तो यह संख्या और भी बढ़ जाती है।

अतः स्पष्ट है कि अंतर सामुदायिक विवाह जैन समुदाय में एक नवीन अवधारणा है जिसमें विवाहित लड़के की शिक्षा एवं जैन समुदाय में निम्न लिंग अनुपात महत्वपूर्ण कारणों में से एक है इसके साथ यह भी कहा जा सकता है कि जैन समुदाय आर्थिक रूप से संपन्न हैं जिस कारण से हुआ है, अधिकतर सामुदायिक विवाह को आसानी से पूरा कर लेता है, जबकि उड़िया समुदाय की वैवाहिक लड़कियों का आर्थिक स्तर कमजोर पड़ जाता है और उनके लिए आर्थिक संपन्न परिवार से आया वैवाहिक प्रस्ताव एक अवसर की भांति होता है। जिसे परिवार के सदस्य आसानी से स्वीकार भी कर लेते हैं दोनों ही समुदायों में अंतर सामुदायिक विवाह की संख्या बढ़ने के कारण पारिवारिक एवं सामाजिक स्वीकृति भी आसानी से प्राप्त हो जाती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

- **आरोन, रेमंड 1965 मेन करंट इन सुच लॉजिकल थॉट पेंगुइन, हार्मोडवर्थ**
- Bogardus, emory s. 1922 Introduction to Sociology, University of Southern California Press
- Devis K. (1949), human society, McMillan California
- Dumont, Louis 1962 the concepton of kinship in ancient India contribution to Indian sociology IX: 17-32
- Durkheim, E. 1964 the division of labour in society, the free press: New York
- Ginsberg M. (1972), the idea of progress, praeger publishers
- Green A. W., (1964) sociology :an analysis of of life in in model society, McGraw hall 2nd edition
- Malinowaki, B. 1944 . A Scientific theory of culture North Carolina
- Murdock, G.P. 1975. outline of World Culture: human relation area New Haven
- Ogburn, William F . 1950 Social Change With Respect to Culture and Original Nature, Viking Press
- Ogburn W.F.,&Nimkoff M. F., (1947), a handbookof sociology k Paul Trench Trubner&co.ltd London
- Parsons, T. 1937. structure of social action McGraw hill: new york
- Parsons , T. 1971. the system of modern societies . Prentice hall: Englewood Chiffs, N J
- Webar, M. 1949. the methodology of the social science free press New York
- Westermarch, Edvard. 1894, The History of Human Marriage, Macmilla and co. New York

***

उच्च शिक्षा के संगीत शिक्षण की गुणवत्ता में संगीत शिक्षण का मूल्यांकन

*डॉ. शशि शुक्ला**

आज संचार माध्यमों को कारण दुनिया बहुत छोटी और समय की गति इस प्रकार तेज हो गई है कि पुरातन और नवीन के बीच भारी अंतर आ चुका है और सर्वत्र गुत्थियाँ इस प्रकार उलझी हैं कि अब समाधान होना ही चाहिए। यह समस्या पठन पाठन, अध्ययन और अध्यापन में भी चाहे वह कोई भी विषय क्षेत्र हो। शिक्षा के क्षेत्र में उलझी गुत्थियाँ सीधे राष्ट्र पर प्रभाव डालती हैं। आज शिक्षा और नौकरी पर्यायवाची बन गये हैं यह हमारे देश का दुर्भाग्य है। आवश्यक नहीं कि सभी को नौकरी मिल सके, प्रतिभा की कीमत भी शिक्षा के समतुल्य है, दोनों का संयोग आवश्यक है क्योंकि इस सुयोग के सहारे हर स्थिति में व्यक्ति को अपना भली–भाँति व्यतीत कर लेने की उपलब्धि हाथ लगती है।

शिक्षा के दो पहलू हैं पहला कौशल विकास, दूसरा व्यक्तित्व का परिष्कार। दोनों के समन्वय से मानव सम्पूर्ण होकर ही देश का सुयोग्य नागरिक बन देश के भविष्य के योगदान दे सकता हे। आज शिक्षा के साथ–साथ शिक्षा का स्तर उठाना भी आवश्यक है और स्तर उठाने का अर्थ है कि प्रारम्भिक स्तर से ही शिक्षा में सुसंस्कारिकता और प्रधान पक्षों को समुन्नत बनाया जाये। हमारे लिये मानव संसाधन विकास मंत्री माननीय कपिल सिब्बल का वक्तव्य एक शुभ संकेत है जसिमें उन्होनें बच्चों को प्राइमरी स्तर से ही संगीत जेसे कोर्स उपलब्ध कराने पर विचार किया है।

शिक्षा की नीतियों के प्रतिपादन में सरकार एक महत्वपूर्ण पक्ष है। पाठ्यक्रम के निर्धारण में शासन समर्थ है अतः इसके लिए सर्वप्रथम उत्तरदायित्व शासन का है। इसके पश्चात् एक शिक्षक होने के नाते मैं अपना परम कर्तव्य समझती हूँ क्योंकि सरकार कोई व्यक्ति नहीं जिसका क्षेत्र से सीधा सम्पर्क हो ओर लम्बी अवधि तक बना रहे। यह एक शिक्षक से ही संभव है क्योंकि बालक अपने समय का महत्वपूर्ण समय शिक्षकों के साथ ही व्यतीत करता है, उनके प्रति श्रद्धा का भाव रखता है। अतः शिक्षक अपने अध्ययन, सर्वेक्षणों के आधार पर समय–समय पर शासन को अवगत करा शिक्षा में सुधार लाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है।

हमारा भारतीय शास्त्रीय संगीत एक ऐसी कला है जो मानव के सर्वांगीण विकास में सहायक है भारतीय शास्त्रीय संगीत उन अनैतिकताओं, आवेगों और मनोविकारों को दूर करने में पूर्णतया समर्थ है जो मनुष्य के चेतना तंत्र पर आक्रमण कर उसे खोखला कर देता है। संगीत शिक्षा का सीधा अर्थ सुसंस्कारिता का प्रशिक्षण है और हमारे शास्त्रीय संगीत का तो प्रथम धर्म ही–अनुशासन है। आज आवश्यक है कि इस मशीनी युग में, कि भारतीय शास्त्रीय संगीत जो हमारी भारतीय संस्कृति की धरोहर है उसे समृद्ध बनाने हेतु उसे शिक्षा का अभिन्न अंग मानते हुए प्राथमिक स्तर से ही शिक्षण में गूँथ दिया जाये जिससे आरम्भ से ही बच्चों में अपनी संस्कृति के प्रति जागरुकता का तो विकास तो होगा ही इसी के साथ शास्त्रीय संगीत की दशा में भी सुधार होगा। इस प्रकार प्राथमिक स्तर से भारतीय शास्त्रीय संगीत का बीजारोपण करना होगा जो माध्यमिक स्तर से सिंचित होते हुए एक सुदृढ़ वृक्ष के रूप में उच्च स्तर तक पहुँच सकेगा। इस प्रकार उच्च शिक्षण में संगीत शिक्षण को भी एक दिशा मिल सकेगी। इस कार्य के लिये मूर्धन्य विचारकों, शिक्षा–शास्त्रियों, शासनाध्यक्षों, कलाकारों सभी को इस तथ्य की उच्चस्तरीय सार्थकता समझनी होगी। इक्कीसवीं सदी की ओर बढ़ते हुये हमनें इस विषय पर गंभीर रुख नहीं अपनाया तो हमारी सांस्कृतिक धरोहर का भविष्य अंधकारमय होगा। हम अपनी ही परम्परा को दूसरों के हाथों सौंपने की गलती कर जायेगें जैसा कि आज भारतीय शास्त्रीय संगीत के माध्यम से अनेक रोगों के उपचार हेतु अनेक शोध किये जा रहे हैं।

आज संस्थागत शास्त्रीय संगीत शिक्षा प्रणाली से न ही हम कलाकार निकाल पा रहे हैं और न ही अच्छे श्रोता। जो कलाकार देश विदेश में आज अपनी कला से हमारे देश को गौरव प्रदान कर

---

* एसो प्रोफेसर, सा.रा.म.महाविद्यालय, बरेली।

रहे हैं वे अपनी परिवार की ही परम्परा से सीखकर आज उस शिखर पर बैठे हैं इससे क्या समझा जाये यही कि, आज संस्थाओं में भारतीय शास्त्रीय संगीत केवल एक विषय बढ़ाने का कार्य ही कर रहा है।

आज शास्त्रीय संगीत के स्तर को सुधारने हेतु उच्च स्तर पर मात्र चर्चायें करने के सर्वप्रथम प्राथमिक स्तर के विद्यालयों से उसके गिरते स्तर के कारण, कर्ता और कर्म पर गम्भीरता से विचार करने की आवश्यकता है। एक संगीत शिक्षक होने की स्थिति में सभी का दायित्व है इस दिशा पर प्राथमिक स्तर से विचारों का शुभारम्भ कर उन्हें वरीयता प्रदान करें और प्रशासन को इस ओर नीतियों में परिवर्तन करने हेतु बाध्य कर सके। आज तक जो भी अध्ययन हुए है उनमें अधिकतर उच्च शिक्षण की समस्याओं और उनके समाधानों को दृष्टिगत रखते हुए किये गये हैं, जबकि उच्च शिक्षण की संगीत शिक्षा में जो समस्यायें हैं या उनका स्तर गिर रहा है उनकी बुनियाद में प्राथमिक स्तर की संगीत शिक्षा की कमजोर नीतियाँ ही हैं, और इन पर अभी भी गम्भीरता से विचार नहीं किया जा रहा है। संगीत विषय जैसे विषयों को केवल ग्रेड देकर विद्यार्थी प्रारम्भ से ही उसे महत्वपूर्ण नहीं समझता। विद्यालय की समय सारणी में एक समय निश्चित जरूर किया जाता है, लेकिन उसका उपयोग विद्यालय के कार्यक्रमों के लिए।

समस्याओं के निराकरण के लिये यदि उद्देश्य सुनिश्चित कर लिये जाये तो समाधान अवश्य निकलता है आवश्यकता है केवल जागरुकता की, समस्याओं को मंथन करने की। एक उच्च शिक्षा स्तर की शिक्षिका होने के नाते मेरे समक्ष उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत के शिक्षण में जो समस्यायें उत्पन्न हुई उनका निराकरण प्राथमिक स्तर पर शास्त्रीय संगीत की शिक्षा प्रणाली में सुधान लाने के पश्चात ही सम्भव है क्योंकि एक विशाल भवन खड़ा करने के लिये सुदृढ़ नींव की ही आवश्यकता होती है। सभी संगीत शिक्षक, कलाकार, सरकार का प्रथम उद्देश्य होना चाहिए कि प्राथमिक स्तर पर शास्त्रीय संगीत की अवहेलना के कारणों का अध्ययन चिन्तन कर किसी निष्कर्ष पर अवश्य आ सकें।

उच्च शिक्षण की संस्थाओं में शास्त्रीय के विषय वैकल्पिक विषय के रूप में हैं और भविष्य में भी खोले जा रहे है। इस प्रकार की नीतियाँ लागू करने से पहले शासन ने क्या इस पर विचार किया कि इस विषय की प्रारम्भिक स्तर के विद्यालयों में क्या रूप रेखा है।

प्रत्येक विषय बालक को प्रारम्भ से पढ़ाकर उसमें रुचि पैदा करने का प्रयास किया जाता है, जिससे वह भविष्य निर्माण के लिये उस विषय को चुन लेता है इस क्रम में शास्त्रीय संगीत क्यों नहीं ?

आज जीविकोपार्जन एक अहं समस्या है ऐसे में तकनीकी विषयों पर ध्यान देकर ही उसमें जीविकोपार्जन की सोच क्यों नहीं ? क्या जीविकोपार्जन संगीत के क्षेत्र में संभव नहीं ?

बाल्यकाल, संस्कारों को ग्रहण करने में सबसे अधिक सक्षम अवस्था मानी जाती है, ऐसे में प्राथमिक विद्यालयों में शास्त्रीय संगीत के संस्कार डालने पर ध्यान क्यों नहीं दिया जा रहा। सरकार मंच दे रही है, छात्रवृत्तियाँ दे रही है परन्तु प्राथमिक स्तर पर शास्त्रीय संगीत के पाठ्यक्रम पर एवं नीतियों पर गम्भीरतापूर्वक विचार क्यों नहीं कर रही ?

पाठ्यक्रम को गंभीरता से केवल उच्च शिक्षा में ही लिया गया है, जबकि प्राथमिक और माध्यमिक स्तर पर ग्रेड का प्राविधान है। इसके अलावा इस स्तरों में संगीत की भूमिका केवल सांस्कृतिक कार्यक्रम कराने तक ही सीमित क्यों ? विद्यालयों में संगीत का तात्पर्य सरस्वती वंदना, देशगीत, स्वागत गीत आदि तक सिमट कर रह गया। संगीत की नींव स्वर अभ्यास है, छोटे–छोटे सरगमों को अभ्यास, रागों का परिचय आदि तक सोच क्यों नही जाती ?

हमें प्राथमिक विद्यालयों में भारतीय शास्त्रीय संगीत का सुनियोजित और रुचिकर बनाने पर विचार करना होगा अन्यथा उच्च स्तर की संगीत शिक्षा प्रणाली ध्वस्त हो रही है। आज ऐसा नहीं कि बालक में संगीत के प्रति रुचि नहीं है, किन्तु बाल्यकाल से ही वह फिल्म, संगीत, पाश्चात्य संगीत में इतना आकंठ डूबा होता है कि भारतीय शास्त्रीय संगीत की संवेदनात्मक स्वर लहरियाँ उसे रुचिकर प्रतीत नहीं होती। इसके लिए शासन, अध्यापक, अभिभावक, मीडिया, शास्त्रीय संगीत के वरिष्ठ कलाकार सभी को अपना उत्तरदायित्व समझते हुए जागरुक होना पड़ेगा। वर्तमान में भारतीय शास्त्रीय

संगीत की दशा शिक्षण संस्थानों में संतोषजनक नहीं है, उच्च शिक्षण पर भी संगीत का स्वर गिर रहा है, विद्यार्थी बढ़ रहे है, केवल प्रमाण मिल रहे हैं, कला नहीं प्राप्त हो रही है। शिक्षा एवं शिक्षण में गुणवत्ता नहीं आ रही, क्योंकि विद्यार्थी कमजोर नींव लेकर उच्च शिक्षा हेतु अपना भविष्य बनाने का प्रयास कर रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. अलकनन पालनितकर : भारतीय संगीत शिक्षा, समस्याऐ एवं समाधान
2. अशोक दा. रानोड : हिन्दुस्तानी संगीत
3. तेजपाल पं सिंह : शास्त्रीय संगीत शिक्षण

***

चीन की कुटिलता एवं भारत

*डॉ. विनोद बहादुर सिंह**

चीन के तेवर भारत के खिलाफ़ दिन प्रतिदिन कड़े होते जा रहे हैं अरुणाचल प्रदेश को हड़पने के लिए चीन तैयारी कर रहा है इसके साथ ही चीन एक ओर तो भारत के खिलाफ़ सक्रिय विद्रोही तत्वों को प्रोत्साहन दे रहा है जबकि दूसरी ओर वह भारत के पड़ोसी देशों में अपना प्रभाव बढ़ा कर उन्हें भारत से दूर कर रहा है विश्व में भारत को अलग थलग करने की चीनी नीतिका यह महत्वपूर्ण अंग है जहाँ तक भारत का संबंध है वहचीन से मैत्री चाहता है जब चीन में माओवादी गृह युद्ध के बाद 1948 में सत्तारूढ़ हुए और राष्ट्रवादी चीन के राष्ट्रपति चांग काई शेक को फारमोसा में शरण लेनी पड़ी तो कम्युनिस्ट चीन को मान्यता देने वालों में भारत सर्वप्रथम था इसके बाद कम्युनिस्ट चीन को सुरक्षा परिषदकास्थायी सदस्य बनने में बनाने में भारत ने एड़ी चोटी का ज़ोर लगा दिया जब चीन ने तिब्बत को हड़पना चाहा तो भारत मूकदर्शक बना रहा तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित नेहरू नदशकों से तिब्बत में रह रहे भारतीय सेना का ब्रिग्रेड वापस बुला लिया इस तरह से चीन के हवाले तिब्बत कर दिया चीन शुरू से ही विस्तारवादी रहा है उसने मैकमोहन लाइन को दोनों देशों की सीमा मानने से इनकार कर दिया हालांकि 1914 में हुए शिमला समझौते पर हस्ताक्षर करने वालों में चीन भी शामिल था जब भारत ने दलाई लामा कोतो भारत के साथ उसके संबंध में कटुता शुरू हुई जिसे कम करने के लिए नेहरू ने तिब्बत पर चीन के दावे को मान्यता दे दी या बहुत बड़ी भूल थी कुछ लोगों की राय है कि पंडित नेहरू अपनी कमजोरी जानते थे इसलिए उन्होंने चीन से टकराने की बजाय मूकदर्शक बने रहना ही उचित समझा चीन ने मिस्र घात करके 1962 में भारत पर हमला कर दिया और हमारी 82,000 वर्ग किलोमीटर की जमीन पर जबरन कब्जा कर लिया चीन इसे अपनी आज भीखाली करने को तैयार नहीं है अब चीन ने अरुणाचल को हड़पने की तैयारी शुरू कर दी है विदेश मंत्री प्रणब मुखर्जी ने तमांग के दौरे के दौरान यह घोषणा की थी की तवांग भारत का अभिन्न अंग है इस पर चीन ने सख्त विरोध प्रकट किया है उसका कहना है कि चीन और भारत में जो सीमा विवाद है उसके अनुसार अरुणाचल प्रदेश।

चीन का है और उस पर भारत ने अवैध कब्जा कर रखा है हमने गैरकानूनी मैकमोहन लाइन को कभी मान्यता नहीं दी चीन की सरकारी एजेंसी सिन्हुआ का दावा है कि भारत और चीन की सीमा का रेखांकन नहीं हुआ इससे साफ है कि चीन के इरादे से एक नहीं है भारत और पाकिस्तान के तनावपूर्ण संबंधों का लाभ चीन ने उठाया 1962 में भारत की पराजय के बाद पाकिस्तान ने चीन से संबंध बढ़ाने शुरू कर किए लद्दाख में रेशम रोड बनाने के लिए पाकिस्तान ने वहाँ भूमि चीन के हवाले कर दी जिसपर 1947 में उसने अवैध कब्जा किया था अब चीन और पाकिस्तान ने भारत के खिलाफ़ संयुक्त मोर्चा बना लिया है इन दिनों भारत को घेरने के लिए चीन पाकिस्तान के बलूचिस्तान क्षेत्र में गवां दौर में एक विशाल नौसैनिक अड्डा बना रहा है इसका उद्देश्य भारत के हिंद महासागर और अरब सागर के प्रभाव को कम करना है

---

*

पाकिस्तान के परमाणु बम बनाने के कार्यक्रम को चीन का पूरा सहयोग प्राप्त हैचीनी विशेषज्ञों ने पाकिस्तान में कहूटा स्थित परमाणु संयंत्र को इसलिए बनाया ताकि पाकिस्तान एटम बम बना सके चीन ने भारत के खिलाफ़ इस्तेमाल करने के लिए पाकिस्तान को काफी मिसाइलें भी दी है जिसका परीक्षण पाकिस्तान इस्लामीकरण करने के बाद करता आ रहा है चीन ने पाकिस्तान को भारी मात्रा में आधुनिक अस्त्र शस्त्र हवाई जहाज पनडुब्बियां भी दी है ताकि पाकिस्तान भारत के खिलाफ़ इनका प्रयोग कर सकें

चीन का मंसूबा यह है कि कूचबिहार की जो 30 किलोमीटर चौड़ी पट्टी भारत को पूर्वोत्तर भारत से जोड़ती है उसमें हिंसा भड़काई जाए ताकि भारत मुख्य भूमि से पूर्वोत्तर भारत में सैनिक सहायता न भेज सके गुप्तचर सूत्रों का दावा है कि हाल ही में पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर के मुख्यालय मुजफ्फराबाद में यूनाइटेड जेहाद काउंसिल की एक उच्चस्तरीय बैठक हुई जिसमें चीनी अधिकारी भी शामिल हुए इस परिषद में या तय हुआ कि जम्मू कश्मीर में पाकिस्तान प्रशिक्षित घुसपैठियों को भेजकर हिंसा की ज्वाला भड़काई जाए दक्षिण भारत में ये इस्लामी उग्रवाद को बढ़ाया जाए इसके साथ ही सिलीगुड़ी में कामतापुरी लिबरेशन ऑर्गेनाइजेशन को भारत के खिलाफ़ विद्रोह करने के लिए भड़काने का फैसला हुआ है चीन सिक्किम और भूटान में अशांति फैलाने के लिए वहाँ रहने वाले नेपाल मूल के प्रवासियों को भारत के खिलाफ़ भड़का रहा है इनमें भारत के खिलाफ़ जहर फैलाने का काम नेपाली माओवादी के हवाले किया गया है इस क्षेत्र में नेपाली मूल के लोग बेखटक बिना वीजा और पासपोर्ट के दाखिल हो सकते हैं

बांग्लादेश का निर्माण इंदिरागांधी ने करवाया था पाकिस्तान के समर्थकों ने बंगबंधु शेख मुजीबुर्रहमान की सपरिवार हत्या कर दी इसके साथ ही बांग्लादेश में इस्लामी कट्टरपंथियों का वर्चस्व बढ़ा पर जो भी सत्ता में आया वह इस्लामी भाई वाद की लहर में बह गया आज बांग्लादेश भारत के लिए सबसे बड़ा सिरदर्द बना हुआ है बांग्लादेश में पाकिस्तान और चीन दोनों ही सक्रिय है सुनियोजित ढंग से भारत में बांग्लादेशियों की घुसपैठ चल रही है इस समय पूर्वोत्तर भारत में सक्रिय उग्रवादी 24 संगठनों का मुख्यालय ढाका और चटगांव में हैं इनके कैडर को छापामार युद्ध का प्रशिक्षण देने के लिए 94 गुप्त प्रशिक्षण शिविर बांग्लादेश में चल रहे हैं भारत सरकार इन प्रशिक्षण शिविरों के बारे में पूरी जानकारी बांग्लादेश सरकार को उपलब्ध करवा चुकी है मगर वहाँ की सरकार इन शिविरों को बंद करवाना नहीं चाहती पूर्वोत्तर भारत के विभिन्न राज्यों में जो उत्पाद जारी है उसका सूत्रधार बांग्लादेश ही है

नेपाल में माओवादियों का सत्ता में आना भारत के लिए गंभीर संकट बन गया है नेपाल और भारत के बीच 3000 किलोमीटर लंबी खुली सीमा है जिससे माओवादी घुसपैठ करके भारत में उत्पात मचा सकते हैं नक्सलवादी चीन के इशारे पर गत तीन दशक से भारत में अपने पैर पहले ही फंसा चूके हैं इस समय देश के 14 राज्यों में नक्सली 175 जिलों में अपने कदम जमा चूके हैं

नेपाल भले ही कभी हिंदू राष्ट्र रहा हो मगर 1962 में भारत की पराजय के बाद नेपाल में शाम महेंद्र के शासनकाल से चीन और पाकिस्तान दोनों का प्रभाव बढ़ा चीन एक और तो नेपाल के राजपरिवार से मैट्रिक के गीत गाता रहा है जबकि दूसरी ओर उसने नेपाल में सक्रिय माओवादियों को आर्थिक और सैनिक सहायता देकर नेपाल को गृह युद्ध की ओर धकेल दिया शाह ज्ञानेन्द्र को

माओवादियों के साथ समझौता करके सत्ता उनके हवाले करनी पड़ी नेपाल में जो चुनाव का नाटक माओवादियों के बंदूक के साए में हुआ उसमें माओवादियों ने सत्ता हथिया ली नेपाल के माओवादी नेता प्रधानमंत्री बनते ही सबसे पहले आशीर्वाद लेने के लिए चीन गए उन्होंने भारत नेपाल मैत्री संघ को रद्द करके और भारतीय सेना में गोरखाओं की भर्ती बंद करने की घोषणा कर दी माओवादी भारत से शताब्दियों पुराने सांस्कृतिक एवं धार्मिक संबंध विकसित करने पर कटिबद्ध है संस्कृत पाठशालाएं बंद करा दी गई पशुपतिनाथ के भारतीय मूल के प्रधान पुजारी को हटा दिया गया हिंदी फिल्मों का प्रदर्शन बंद करवाया गया

नेपाल के राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति भले ही भारतीय मूल के हूँ मगर उनकी स्थिती माओवादियों की कठपुतली से ज्यादा नहीं है उपराष्ट्रपति ने जब हिंदी में शपथ ली तो नेपाल में माओवादियों ने तूफान मचा दिया अंत में उन्हें क्षमा याचना करनी पड़ी नेपाल में चीन की पर्वत रूप से शासन कर रहा है नेपाल को चीन ने भारत से दूर कर दिया है चीन ने नेपाल को 100,00,00,00 के हथियार सप्लाई करने का फैसला किया है जो कि भारत नेपाल मैत्री संधि का खुला उल्लंघन है क्योंकि इस संधि के तहत नेपाल सिर्फ भारत से ही हथियार खरीद सकता है

श्रीलंका ने लिट्टे के खिलाफ़ जो सैनिक अभियान शुरू किया है उसके कारण श्रीलंका और भारत के संबंधों में तनाव आया है लिपटे तमिल मूल के लंका वासियों का संगठन है तमिलनाडु के मुख्यमंत्री एम करुणानिधि ने भारत सरकार पर दबाव डाला था कि वह श्रीलंका सरकार पर लिट्टे के साथ समझौता करने के लिए दबाव डाले मगर श्रीलंका की सरकार ने भारत की बात सुनने तक से इनकार कर दिया श्रीलंका के राष्ट्रपति महिंदा राजपक्षे चीन गए थे चीन दोहरी चाल चल रहा है एक और तो और समुद्री मार्ग से लिट्टे को हथियार सप्लाई कर रहा है जबकि दूसरी ओर से उसने श्रीलंका को सैनिक सहायता भी देना शुरू कर दिया है इस समय श्रीलंका अत्यधिक कर्ज में डूब गया है उसकी स्थिती एकदम बद से बदतर हो रही है म्यांमार में सैनिक तानाशाही चीन के बल पर टिक्की हुई है म्यांमार के सैनिक शासक इसलिए भारत से नाराज है क्योंकि भारत ने यहाँ पर रहने वाले म्यांमार के लोकतंत्रवादी नेताओं को पकड़ कर वहाँ की सरकार के हवाले नहीं किया

माल्दीव कभी भारत का खास मित्र समझा जाता था वहाँ की गायों सरकार को बचाने के लिए राजीव गाँधी ने वहाँ पर भारतीय सैनिक तक भेजे थे अब गायु सरकार चुनाव में चुकी हार गई ने इसलिए नए राष्ट्रपति कट्टरवादी सुन्नी मुस्लिम हैं माल्दीव में अपने कदम जमाने के लिए पाकिस्तान और चीन दोनों ही सक्रिय हो गए हैं

इस प्रकार यदि देखा जाए तो चीन अपनी कुटिल नीती से कभी बाज नहीं आएगा और भारत सरकार को चीनी कुटिलता का जवाब कुटिलतापूर्वक ही देना चाहिए तभी चीन को समझ में आएगा

***

इतिहास के चिंतनात्मक-दर्शन का अर्थ

*संत कुमार उपाध्याय**

इतिहास–दर्शन घटनाओं में एक घटना मात्र को देखता है जबकि दर्शन इतिहास के प्रामाण्य अर्थ और वास्तविकता को निश्चित करने का दावा करता है। इतिहास के लिए प्रामण्य का प्रश्न नहीं उठता। उसके लिए महत्त्वपूर्ण प्रश्न सामर्थ्य है। जो सफल होता है उसी का इतिहास होता है। इतिहास में ईसा मसीह का महत्त्व ईसाई धर्म की विजय से है। मार्क्स का लेनिन और स्टालिन के कारण। अन्यथा ईसा के नाम का पता नहीं होता और मार्क्स का पता केवल सामाजिक विज्ञान तक ही सीमित रहता। परिणाम स्वरूप इतिहास–दर्शन का अभिप्राय अतीतकालिक घटना में निहित मानसिक प्रक्रिया अथवा विचार को वर्तमान और भविष्य में प्रतिरोपित करना मात्र होता है।

वाल्श के अनुसार ज्ञान के सिद्धांत के रूप में इतिहास–दर्शन एक प्रकार का ज्ञान है। इतिहास–दार्शनिकों का प्रमुख कार्य वैज्ञानिक विश्लेषण के माध्यम ऐतिहासिक घटना को बोधगम्य बनाना है। ऐतिहासिक ज्ञान की प्रक्रिया प्रामाणिक उपादानों की प्रक्रिया है। वह कल्पना मात्र न होकर निश्चित प्रमाणानुसंधान है, उसका सार अनुभव मूलक सम्भावना है और अंतर्दृष्टि परख या विवके बुद्धि के द्वारा निर्णयन है। इतिहास–ज्ञान न विशेष विषयक प्रत्यक्ष है और न सामान्य विषयक अनुमान, उसे विशेष विषयक निर्णय कहा जा सकता है।

कॉलिंगवुड ने भी इस तर्क को स्वीकार किया है कि इतिहास को मानसिक प्रक्रिया स्वीकार करने का यह तात्पर्य नहीं है कि इतिहास मनोविज्ञान है। ऐतिहासिक ज्ञान एक चिंतन की प्रक्रिया है। दार्शनिक ज्ञान पर आधारित प्रक्रिया का अध्ययन करता है। इतिहास विचार की एक प्रमुख शाखा है। ऐतिहासिक ज्ञान को अपनी विशेषताएँ होती हैं। प्रकृति विज्ञान तथा धर्मशास्त्र की भांति इतिहास में विचार प्रधान होता है। इसीलिए कॉलिंगवुड ने सभी इतिहास को विचार का इतिहास माना है। ऐतिहासिक ज्ञान के दो स्तर होते हैं– तथ्यात्मक तथा सत्यात्मक। तथ्य से तात्पर्य किसी वास्तविक घटना के अभिधायक वाक्य के अर्थ से है। सत्य से अभिप्राय मूल्यसंहित अर्थ अथवा मानवीय सार्थकता से है। तथ्य का निर्णय प्रमाणमूलक उपादान से है।

विधाओं एवं संस्थाओं के समान दर्शन को भी एक जीवित समाज की उपजों में एक उपज के रूप में देखा जा सकता है। वह भी उन्हीं की तरह उससे पुष्टि पाकर निंरतर क्रियाशील रहता है। इस प्रकार की विधिता इतिहासकार के लिए महत्त्वपूर्ण है न कि दार्शनिक के लिए। दार्शनिक के लिए इतिहास और दर्शन का संबंध एक समस्या के रूप में होगा। यह समस्या इतिहास के क्षेत्र में न होकर दर्शन के क्षेत्र में होगी।

इतिहास प्रकृति से अधिक आधारभूत है। क्योंकि प्रकृति का ज्ञान स्वयं ऐतिहासिक उपज है। चन्द्रमा पर मानव अवतरण ऐतिहासिक तथ्य है। क्योंकि इसकी सफलता के पीछे पूर्ववर्ती मानवीय प्रयासों का इतिहास सन्निहित है। इसी प्रकार प्रकृति का ज्ञान भी ऐतिहासिक होता है। कॉलिंगवुड के अनुसार प्राकृतिक विज्ञान सम्पूर्ण रूप से ज्ञान नहीं है, अपनी सत्ता के लिए किसी दूसरे ज्ञान पर निर्भर करना पड़ता है। यह ज्ञान एक प्रकार से ऐतिहासिक होता है। क्योंकि वैज्ञानिक तथ्य ऐतिहासिक तथ्यों की एक जाति है।

इतिहास को यथार्थ के बढ़ते हुए आत्मप्रकाश के रूप में समझा गया है और इस अर्थ में उसे दर्शन से अभिन्न माना गया है। आत्मभिव्यक्ति के रूप में इतिहास समाज की एक अभिव्यक्ति है। इसे सम्पूर्ण मानवता की अभिव्यक्ति समझ लेना एक महान भूल है। क्योंकि सम्पूर्ण मानवता का एक समाज नहीं होता हैं काल, भौगोलिक परिस्थितियों के कारण समाज के स्वरूप में विभिन्नता का होना अनिवार्य

* शोधार्थी, इतिहास विभाग, वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा (बिहार)

है। प्रत्येक युग, स्थानविशेष तथा समाजविशेष की अभिव्यक्ति दार्शनिक करते हैं। इसीलिए कॉलिंवुड ने इतिहास–दर्शन को मूल्यसम्पृक्त स्वीकार किया है।

द्वन्द्वों से ऐतिहासिक प्रक्रिया गतिशील होती है। इस गतिशीलता के कारण प्रत्येक युग में समाज के स्वरूप में परिवर्तन होना स्वाभाविक है। दासता, सामंतवाद, निरंकुश शासन, क्रांति, प्रजातंत्र शासन–प्रणाली का उद्‌भव एवं विकास, परिवर्तित समाज एवं इतिहास की गतिशीलता का परिचायक हैं परिवर्तित समाज के इतिहासकार तथा दार्शनिक समसामयिक दृष्टिकोण से ऐतिहासिक तथ्यों को समसामयिक सामाजिक मूल्यों के अनुसार देखते हैं। इस प्रकार इतिहास की गतिशीलता के साथ इतिहास–दर्शन का स्वरूप भी निरंतर परिवर्तनशील होता है। इतिहास–दर्शन अनिवार्यतः चेतना की इतिहासरूपी प्रक्रिया की एक अवस्था है। इतिहास में अतीत अनुचिंतन है। इस प्रकार इतिहास–दर्शन किसी विशेष समाज अथवा ऐतिहासिक युग के चित्त की क्रियात्मक छवि होता है।

समयानुसार इतिहास निरंतर बदलता रहता है। इसलिए इतिहास–दर्शन को भी बदलना होगा। सभी पदार्थों का इतिहास होता है, इसलिये दर्शन भी। इतिहास और दर्शन के तादाम्य का कारण बताते हुए क्रोचे ने कहा है कि दार्शनिक के प्रकथन, लक्षण या संस्थान का अविर्भाव एक निश्चित व्यक्ति के मन में देश काल के एक निश्चित बिंदु पर और निश्चित परिस्थितियों के अधीन है। प्रकृति ऐतिहासिक है क्योंकि प्रकृति–विज्ञान ऐतिहासिक परिस्थितियों के अधीन है। इस प्रकार दर्शन भी ऐतिहासिक है क्योंकि दार्शनिक चिंतन ऐतिहासिक परिस्थियों के अधिन है।

विधियुक्त ऐतिहासिक शोध के माध्यम से किसी समस्या के अध्ययन को इतिहास–दर्शन की संज्ञा दी जा सकती है। ऐतिहासिक गवेषण इतिहास–दर्शन का मूल तत्व है। दर्शन का अभिप्राय सार्वभौमिक सत्य का अन्वेषण है। इतिहास दर्शन ऐतिहासिक घटनाओं के माध्यम से सत्यम् शिवम्, सुन्दरम् का अन्वेषण करता है। वह सत्य जो समसामयिक मानवीय समाज के लिये. कल्याणकारी हो। मानव कल्याण के लिए ऐतिहासिक तथ्यों का स्वरूप सुन्दर होता है। प्रत्येक युग का दार्शनिक इतिहासकार सामाजिक मूल्यों के संदर्भ में उन्हीं तथ्यों को प्रकाश में लाता है जो समान के लिये कल्याणकारी सिद्ध हो सके। परिणामस्वरूप इतिहास–दर्शन में सत्यम् शिवम् सुन्दरम् का अन्वेषण होता है। इसका प्रमुख उद्देश्य तथ्य एवं सत्य का यथार्थ निरूपण है। इस प्रकार इतिहास–दर्शन ज्ञान पर आधारित एक विशेष प्रकार की गवेषणा है। दार्शनिक इतिहासकार समसामयिक सामाजिक समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करता है। इसीलिये कालिंगवुड ने कहा है कि प्रत्येक दार्शनिक का अपना दर्शन होता है। वह अपने ढंग से काल और परिस्थितियों के संदर्भ में घटना विशेष पर चिंतन करता है तथा समाधान ढूँढता है। दर्शन को सामाजिक विज्ञान, इतिहास, मनोविज्ञान तथा शरीर विज्ञान का अध्ययन माना जा सकता है।

युग की सामाजिक समस्याओं के परिवेश में हीगेल, कांट, हर्डर तथा फित्से ने ऐतिहासिक ज्ञान के माध्यम से संतोषजनक समाधान ढूँढने का प्रयास किया है। ब्यूरी, ब्लैंक, बेकर तथा बियर्ड ने भी ऐतिहासिक साम्यवाद को युग की सामाजिक समस्याओं के परिवेश में हीगेल, कांट, हर्डर तथा फित्से ने ऐतिहासिक ज्ञान के माध्यम से संतोषजनक समाधान ढूँढ़ने का प्रयास किया है।[2] ब्यूरी, ब्लैंक, बेकर तथा बियर्ड ने भी ऐतिहासिक साम्यवाद को युग की आवश्यकता स्वीकार किया है। कार्ल मार्क्स ने भौतिकवादी दृष्टिकोण से सामाजिक समस्याओं का निरूपण किया। बीसवीं सदी की पुकार विश्व भ्रातृत्वाद है। स्पेंगलर तथा टायन्बी ने विश्व की संस्कृतियों का तुलनातमक अध्ययन करके मानव एकता के रूप में अपना इतिहास–दर्शन प्रस्तुत किया। इन विद्वानों ने ऐतिहासिक साक्ष्य का सहारा लिया है। उन लोगों ने समसामयिक सामाजिक आवश्यकता के अनुसार मनोनुकूल निष्कर्ष निकाला है। परिणामतः युग की सामाजिक आवश्यकता के अनुसार इतिहास–दर्शन भी निरंतर परिवर्तनशील रहा है।

डिल्थे, रिकर्ट, क्रोचे तथा बोसांके ने स्वीकार किया है कि इतिहास एक ज्ञान है तो इसका स्वरूप दार्शनिक होना चाहिये। इतिहास–दर्शन की अपनी उपादेयता है। इतिहास हमें स्वयं को समझने में सहायता प्रदान करता है। ऐतिहासिक अध्ययन वस्तुतः आत्मगवेषण की प्रक्रिया जिसके परिणामस्वरूप अत्यधिक आत्मबोध से मनुष्य अपने वर्तमानकालिक जीवन को सुचारू रूप से नियंत्रित

कर सकता है। वर्तमान अतीत से सर्वथा भिन्न नहीं है; क्योंकि अतीत का भार जाने अथवा अनजाने में सदैव हमारे साथ रहता है। कॉलिंगवुड ने ठीक ही कहा है कि प्रत्येक विचार का स्वरूप ऐतिहासिक होता है। इतिहास–दर्शन एक आत्मशासित शिक्षण है जिसकी अपनी ज्ञानमीमांसी समस्याएँ है।

इतिहास–गवेषणा को यदि ज्ञानमीमांसी स्वीकार किया जाय तो इसे सम्पूर्ण मानवीय क्रियाओं का अध्ययन कहा जा सकता है। मानवीय क्रियाओं में अंतर्निहित विचारों को प्रतिबिम्बत करना ही इतिहास–दर्शन का अभिप्राय है। उसकी दो प्रमुख विशेषताएँ हैं– सम्पूर्ण मानवीय क्रिया–कल्पना तथा वर्तमान में उसकी पुर्नरचना। प्रथम भाग का संबंध घटना की वास्तविकता से है तथा दूसरे का संबंध उस घटना के विषय में वैज्ञानिक चिंतन होता है। प्रो० ब्राड के शब्दों में प्रथम परिकल्पनात्मक है तथा दूसरा विश्लेषणात्मक दोनों साधनों का लक्ष्य इतिहास–दर्शन के माध्यम से सत्यम् शिवम् सुन्दरम् का प्रस्तुतिकरण है। इसी को इतिहास–दर्शन कहा जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ :

1. झारखण्डे चौबे, इतिहास दर्शन
2. बनर्जी, एन.बी., कन्सेप्ट ऑफ फिलोसोफी
3. डॉ0 गोविन्दचन्द्र पाण्डे : इतिहास, स्वरूप एवं सिद्धान्त
4. सेबाइन, राजनीतिक दर्शन का इतिहास
5. कौशिक, कुंवर बहादुर : इतिहास–दर्शन एवं प्राचीन भारतीय इतिहास–लेखन

***

दलित महिलाओं की आर्थिक एवं सामाजिक संघर्ष बिहार के संदर्भ में (एक विश्लेषणात्मक अध्ययन)

*सुनैना कुमारी**
*डॉ. जावेद अंजुम***

सार– भारतीय संविधान में सभी को समान रूप से बिना भेद–भाव के उन्नति करने का अधिकार है। परंतु देश की स्वाधीनता के समय देश के विकास में वंचितों की भागीदारी सुनिश्चित करने तथा उनकी सामाजिक–आर्थिक सबलता के किए गए वायदे सत्ता के शीर्ष में बैठे अभिजात्यों द्वारा भुला दिए गए।

लगभग तीन दशकों तक दलितों की स्थिति पर किसी की निगाह तक नहीं गई, जिनकी प्रखर आलोचना दलित चेतना की अभिव्यक्तियों में प्रमुखता से देखी जा सकती है। भारत में जाति और वर्ण–व्यवस्था ने एक ऐसी समाज–व्यवस्था को जन्म दिया जिसकी गतिशीलता न केवल जाति शोषण को निरंतर विकसित करती थी बल्कि स्वयं में भी एक परानुक्रम को सृजित एवं विकसित करती थी।

हिंदू वर्ण–व्यवस्था हजारों वर्ष तक इस कारण भी विकसित होती रही कि इसकी अर्थव्यवस्था भी श्रमजीवियों को इतना ही अलगाव में डालती है जितनी समाज व्यवस्था। इससे भी भयानक सत्य यह है कि यहॉ सामाजिक रूप से दैवीय दासता का सांस्कृतिक विकास हुआ।

*शब्द **कुंजी** :* दलित, महिला, आर्थिक, सामाजिक, साक्षरता, वर्ण, जाति, इत्यादि

प्रस्तावना :– निरंकुश हिन्दू समाज–व्यवस्था ने अन्यायपूर्ण, अवैज्ञानिक मर्यादाओं की रेखाएं उसके चारो ओर ऐसे खींच दी कि उनके उल्लंघन मात्र पर भी प्राणदंड अंगविच्छेद, जीवित गाड़ दिए जाने, तपते लोहे से दागने, जीभ उखाड़ने, देश–गांव सीमा से खदेड़ने जैसी क्रूरतम सजाएं स्मृतियों, पुराणों, उपनिषदों, वेदों, गीता और रामायण जैसे हिन्दू धर्म ग्रंथों में तय की गई।

लगभग तीन दशकों तक दलितों की स्थिति पर किसी की निगाह तक नहीं गई, जिनकी प्रखर आलोचना दलित चेतना की अभिव्यक्तियों में प्रमुखता से देखी जा सकती है।[1] भारत में जाति और वर्ण–व्यवस्था ने एक ऐसी समाज–व्यवस्था को जन्म दिया जिसकी गतिशीलता न केवल जाति शोषण को निरंतर विकसित करती थी बल्कि स्वयं में भी एक परानुक्रम को सृजित एवं विकसित करती थी।

धार्मिक उदाहरण में भी अगर देखेगे तो यह समझ सकते है कि यह विडंवना और मनुवादी सोच बहुत पहले से हमारे धर्म एवं संस्कारों के अंग बन चुके है। जैसे द्रोणाचार्य ने एकलव्य के अंगुठे को कटवाकर हिंदू धर्म प्रणीत जाति–व्यवस्था की मर्यादाओं को बचाया। योग्यताओं के बावजूद कर्ण और विदूर दास–पुत्र ही कहलाए गए। आज भी राज्य पर धर्म की अधिसत्ता कायम हो जाती है तो अस्पृश्यों–स्त्रियों और शूद्रो को त्रासदी झेलते हुए जिंदगी गुजारनी पड़ती है।[2]

इन सभी के अलावा हमे यह जानना अत्यंत आवश्यक है कि दलित महिलाओ की सामाजिक एवं शैक्षणिक स्थिति क्या है?

चूँकि मेरा यह आलेख शोध पत्र के रूप में लिखित है इसलिए शीर्षक के अनुसार बिहार के संदर्भ में भी दलित महिलाओं की सामाजिक स्थिति पर चर्चा करना अनिवार्य होगा।

इसके लिए सबसे पहले बिहार राज्य की साक्षरता दर भी देखना होगा जिसमें बिहार राज्य की साक्षरता दर भारत के अन्य राज्यों से बहुत कम है। बिहार की साक्षरता दर 2011 के ऑकड़े के अनुसार 64% है। पुरूष साक्षरता दर 72.2% है, तो वही महिला साक्षरता दर 51.5% दर्ज किया गया है।[3]

---

* शाधार्थी स्त्री अध्ययन विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोधगया।
** शोध निर्देशक, प्राध्यापक, स्नात्तकोत्तर दर्शनशास्त्र विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोधगया।

इन आँकड़े के अनुसार स्पष्ट है कि बिहार राज्य की शिक्षा की स्थिति और उसमें भी महिलाओं की शिक्षा की दशा और दिशा अभी तक अर्थात 2021 तक में भी अच्छी स्थिति में नहीं है। बिहार में दलित महिलाओं में शैक्षणिक स्थिति अभी भी नग्न के समान है।[4]

अभी तक उपरोक्त चर्चा में मैने केवल ऐतिहासिक, धार्मिक, प्राचीन नियम एवं बिहार में पुरूष एवं महिला की शैक्षणिक स्थिति की चर्चा की है। परंतु मेरे शोध शीर्षक ''बिहार की दलित महिलाओं की सामाजिक स्थिति और उनके संधर्षः एक अध्ययन'' जो बिहार के संदर्भ में है। मुख्य चर्चा करनी है। जिसमें सबसे पहले मैं दलित शब्द को स्पष्ट करना चाहूँगी।

दलित शब्द की उत्पति कब और कैसे हुई, किस वर्ग को दलित कहा गया, इसका निश्चित प्रमाण जुटा पाना मुश्किल है। क्योंकि इस विषय पर विभिन्न विद्वानों के बीच मतभेद है। परन्तु इतना अवश्य कहा जा सकता है कि दलित शब्द आधुनिक है। इस नये शब्द के नामकरण में समाज के सबसे नीचे के तल की कुछ जातियों को दलित कहा गया है। दलित शब्द आधुनिक होते हुए भी दलितो का इतिहास प्राचीन है।

भारतीय वर्ण व्यवस्था ने जब जातियों का रूप धारण किया तब शुद्रो मे से एक वर्ग को अछूत कहा गया। इस वर्ग की आर्थिक स्थिति दयनीय हो गयी।

फलतः यही से दलितपन का आरम्भ हुआ। वर्तमान समय में इस शब्द का प्रयोग व्यापक रूप से हो रहा है। इसलिए उत्पत्ति के आधार पर इसके सही अर्थ को जानना अवश्यक है। दलित शब्द की उत्पति संस्कृत भाषा के दल धातु से हुई है, जिसका अर्थ होता है तोड़ना, हिस्सा करना और कुचलना, अर्थात दलित का अर्थ होता है जिस वर्ग का दलन हुआ है, जिसे दबाया गया है जिसे रौंदा, कुचला और मसला गया है।

जिस वर्ग को पनपने या बढ़ने नहीं दिया गया है, जिसे ध्वस्त और नष्ट कर दिया गया है। वही वर्ग समाज में दलित कहलाए। अर्थात हम साधारण भाषा में कह सकते है कि सवर्णो एवं उच्च वर्गो के द्वारा समाज के जिस वर्ग के लोगो का शोषण हुआ, जिसे दबाया गया, रौंदा गया, कुचला गया उसे ही दलित, अछूत और कानूनी भाषा में अस्पृश्य कहा गया है।[5]

वर्ण व्यवस्था, जातिवाद एवं अस्पृश्यता तीनों एक ही श्रृंखला की तीन कड़ियाँ है। जिससे भारत वर्ष का हिन्दू समाज दो सहस्त्र वर्षो तक बंधा रहा और आज भी पूर्ण रूप से मुक्त नहीं हुआ है।

ऋग्वेद के दसवें मंडल की दो ऋचाओं ने सर्वप्रथम वर्ण व्यवस्था का संबंध धर्म से जोड़ा और यहीं से अनर्थ का सूत्रपात प्रारंभ हो गया।[6] लेकिन लंबी त्रासदी के उपरांत भारत में दलितो के उद्वार के लिए उनके हको को सामाजिक एवं संवैधानिक स्वीकार्यता के लिए डॉ0 अम्बेडकर का जन्म हुआ, जिन्होने दलितो को स्वावलंबी, आत्मनिर्भर बनाने कि कोशिश की।[7]

दलित महिलाओं की सामाजिक संघर्ष भारत में प्रकृति के सानिध्य में हजारों वर्षो तक स्वच्छन्द एवं सुखमय जीवन व्यतीत करता रहा। आखेट के कार्य को छोड़कर किसान बना, जो एक पारिस्थितिकी परिवर्तन था। यह परिर्वतन 10,000 वर्ष ई0 पू0 में हुआ था। इस संदर्भ में प्रो0 गार्डन चाइल्ड के अनुसार ''अपने वातावरण के प्रति एक संघर्षात्मक प्रवृति विकसित की। मानव अब घुमन्तु जीवन का परित्याग कर एक स्थान पर टिक गए।

भारतवर्ष के सांस्कृतिक इतिहास में वर्ण व्यवस्था को धर्म एवं अध्यात्म से जोड़ देना एक ऐसा कार्य था जिसकी तुलना हम एक भयावह दुर्घटना से कर सकते है। इस वर्ण व्यवस्था रूपी दुर्घटना के परिणामस्वरूप हिंदू समाज में विघटन, विसंगति, विद्वेष, घृणा, शोषण, दमन आदि प्रवृतियों के विषाक्त जीवाणुओं का संक्रमण हो गया। ब्राहणों द्वारा परिचालित एवं निरंतर विकासमान धर्म ने जब वर्ण व्यवस्था का पाणिग्रहण कर लिया तब उनके परस्पर सहयोग से अनेक नयी जातियों का जन्म हुआ। जिस तथ्य का उल्लेख हमें ऋग्वेद के दसवें मंडल के पुरूषसूक्त में किया गया है।

ऋग्वेद की इस ऋचा में कहा गया है कि एक विराट पुरूष के मुँह से ब्राह्मण, भुजा से क्षत्रिय, जंघा से वैश्य और पैर (पाद) से शूद्र की उत्पत्ति हूई है।

यही से पहली बार वर्ग विभाजन की सूचना मिलती है। उपर्युक्त तथ्यों से स्पष्ट होता है कि ब्राह्मणों के हाथ में धर्म का अमोघ शास्त्र था, वे पृथ्वी के देवता अथवा भूदेव कहे जाते थे, और यहीं से दबे, कुचले जिसे हम दलित वर्ग कहते है उसका शोषण एवं उत्पीड़न प्रारम्भ हुआ।[8]

वैसे देखा जाये तो यह ऐतिहासिक साक्ष्य से स्पष्ट होता है कि ऋग्वैदिक समाज में जाति प्रथा तो क्या वर्ण व्यवस्था का भी अभाव था। डॉ0 रिगोजिन ने समान मत व्यक्त करते हुए यह स्पष्ट किया है कि ऋग्वैदिक समाज में दो तरह के लोग थे– आर्य एवं दास या दस्यु। इस तथ्य को प्रायः सभी विद्वानों ने स्वीकार किया है कि ऋग्वैदिक समाज का आन्तरिक वर्गीकरण जन्म पर आधारित नहीं था। उनका विभाजन कर्म पर आधारित था और व्यक्ति को अपने कर्म का चयन करने की स्वतंत्रता थी।[9]

इस प्रकार हम पाते है कि वर्ण एवं जाति व्यवस्था की उत्पत्ति वैदिक युग में हुई किंतु उतर वैदिक काल आते–आते यह व्यवस्था काफी जटिल रूप धारण कर ली। इसी का फायदा ब्राह्मणों ने उठाया।

समाज में अपनी सर्वश्रेष्ठता, सर्वोपकारिता, लाभ, सुरक्षा और हितों को ध्यान में रखकर उन्होनें वर्ण व्यवस्था का विचार प्रस्तुत किया। आगे चलकर यह जाति व्यवस्था के रूप में प्रस्फुटित हुआ और जाति से कितनी ही उपजातियाँ बनी।

किन्तु वर्ण व्यवस्था एक भ्रम उत्पन्न करने वाला शब्द है जिसे ब्राह्मणों ने खूब प्रचार करके यह भ्रम फैलाया कि यह ईश्वरीय व्यवस्था है। जो अपरिवर्तनीय है। गीता के रचयिता ने कृष्ण के मुँह से यह कहलाया कि उन्होने ही अर्थात (भगवान) ने ही गुण, कर्म के अनुसार चारों वर्ण बनाया।

जबकि नवीनतम ऐतिहासिक खोज यह है कि वैश्य और शूद्र (अछुत) तो भारत में आर्यो के आने के पहले से ही मौजूद थे। लेकिन क्षत्रियों और ब्राह्ममणों की उत्पत्ति बाद में हुई। जहाँ तक शूद्रो अथवा अछूत की बात है, उस समय वे दलित नहीं थे, बल्कि सम्मानित कारीगर थे।

आर्यो के आगमन के पूर्व शूद्र जनजाति थे जो सिन्ध के सप्तसिंधु भू–भाग में विचरण करते थे। अथर्ववेद के आरम्भिक भाग में जो शूद्र शब्द का प्रयोग हुआ है उसे वर्ण के अर्थ में नहीं बल्कि जाति के अर्थ में लेना चाहिये, जो अधिक न्यायसंगत प्रतीत होगा।

इसके बाद उतर वैदिक काल की राजव्यवस्था में जो एक महत्वपूर्ण परिर्वतन हुआ, वह है– वैश्य और शूद्रो से विभेद करते हुए ब्राह्मण और क्षत्रियों को विशेष स्थान प्राप्त कराने की प्रवृति।[10]

भविष्य पुराण में लगभग एक दर्जन ऋषियो के नाम गिनाए गये है, जिनकी माँ शूद्र वर्ण के किसी न किसी शाखा से थी।[11] मामूली हेरफेर के साथ यह सूची कई आई अन्य पुराणों एवं महाभारत में आई है।[12] इससे पता चलता है कि व्यास का जन्म मछुआरिन से, पराशर ऋषि का श्वपाक नामक महिलाओं से, वशिष्ट ऋषि का गणिका से, कर्शिजलाद का चंडाल महिलाओं से और मुनिश्रेष्ठ मदनपाल का मल्लाहिन से हुआ था। इस सूची से यह स्पष्ट है कि इन ऋषियों की वास्तविक जीवन काल के बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता है। किंतु यह सूची प्रमाणित करती है कि परवर्ती वैदिक काल में यह प्रथा थी कि ऋषि और पुरोहित शूद्र कन्या या दास कन्या से विवाह करते थे। राजा और प्रमुख भी शूद्र महिलाओं से विवाह करते थे। लेकिन निम्न वर्ग के पुरूष से उच्च वर्ग की महिलाओं को विवाह करने की अनुमति नहीं दी जाती थी। केवल शूद्र महिला उच्च वर्ग के लोगों के लिए सुखभोग की वस्तु थी। इससे भी स्पष्ट होता है कि शूद्र महिला जिसे आज हम दलित महिला कहते है उन्हे प्रारंभ से भी कोई सम्मानजनक स्थान एवं अधिकार प्राप्त नहीं था, उन पर जोर जुल्म होता रहा अर्थात राजा का जब जी चाहा शादी कर लिया वो भी सुखभोग के लिए और जब चाहा उसे त्याग दिया।[13] परंतु गुप्त काल में वैष्णव सम्प्रदाय के उदय के कारण शूद्रो को धार्मिक समानता प्राप्त हुई। इसका प्रमुख कारण था वैष्णव सम्प्रदाय के लोगो ने कट्टरपंथी ब्राह्मण परम्परा को ठुकरा कर शुद्रों एवं अस्पृश्यों के लिए अपना द्वार खोल दिया और उन्हें भी ईश्वर को जानने एवं मोक्ष प्राप्त करने का अधिकार दिया।

उदाहरण के रूप में वैष्णव ग्रंथों में इस बात पर हमेशा जोर डाला गया कि कृष्ण, नारायण या वासुदेव की भक्ति के द्वारा स्त्रियाँ और शूद्र भी मुक्ति पा सकते है।[14]

हर्षकाल में शूद्रों की स्थिति पर प्रकाश डालते हुए चीनी यात्री हेनसांग ने लिखा है कि चारों वर्ण के लोग पवित्रता का जीवन जीते थे। एक जाति के लोग दूसरी जाति में विवाह नहीं करते थे। वैश्य व्यापार कार्य में संलग्न थे और शूद्र का मुख्य कार्य कृषि था।[15]

हरियाणा के जाट आर्य थे लेकिन गोपालक और कृषि कार्य के चलते वह शूद्र कहलाये।[16] हर्ष के शासन काल में अस्पृश्यों अर्थात दलितों की स्थिति पर हेनसांग ने प्रकाश डालते हुए लिखा है कि कसाई, नट, जल्लाद और भंगी के निवास स्थानों में एक विशिष्ट चिन्ह बना रहता था ताकि लोग बाहर से देखकर ही समझ जाय कि अंदर रहने वाले लोग अस्पृष्य (दलित) जाति के है। इन्हे नगर से बाहर रहने के लिए बाध्य किया जाता था और सड़क पर चलते हुए उन्हें बायी ओर से लोगो से बचकर चलना पड़ता था।

अलबरूनी ग्यारहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में भारत आये थे। उन्होने भारतीय जाति व्यवस्था पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि वैश्यों और शूद्रों में कोई विशेष अंतर नहीं था।[17] लेकिन वैश्य और शूद्रो को वेदमंत्र सूनने या पढ़ने का अधिकार नहीं था।[18]

इस प्रकार लम्बे समय के संघर्ष के उपरांत भारत में जब नवजागरण काल आया तब भारतीय उदारवादी, बुद्धिजीवी एवं समाज सुधारको ने अछूत, दलित एवं महिलाओं के कल्याण के लिए खुलकर आगे आये।

इन लोगो ने पुनर्जागरण, पश्चिमी सभ्यता, संस्कृति तथा विदेशी से अपनी विशेष जानकारी प्राप्त की और भारतीय सभ्यता और संस्कृति से उसकी तुलना कर उसकी अच्छाईयों को अपने समाज में समाहित करने की भी वकालत की ।इन लोगों ने इतना ही नहीं बल्कि अछूत एवं दलित पर हो रहे अनेक प्रकार के अत्याचार, उत्पीड़न, कुप्रथा, रूढ़िवादी परम्परा, अन्याय, अमानवीयता को समाप्त करने के लिए ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन व्यवस्था से सिफारिश की तथा संवैधानिक मान्यता द्वारा इसे अवैध घोसित कर उन्हें मुक्ति दिलाने की अपील की।

यही से अछूत, दलित एवं अस्पृश्य जातियों में सुधार और कल्याण की प्राकिया प्रारम्भ हुई। इन सुधारवादियों में राजा राम मोहन राय, ज्योतिबा फूले जो दलित लड़कियों के शिक्षा के लिए पाठशालाऐ प्रारम्भ की। स्वामी विवेकानंद, स्वामी दयानन्द सरस्वती, रान्डे, रामाबाई, ईश्वर चन्द्र विद्यासागर, महात्मा गॉधी, डॉ0 अम्बेदकर, राम मनोहर लोहिया, राजकुमार शुक्ला और जयप्रकाश नारायण का नाम अग्रणीय है।

भारत में अछूतों एवं दलितों की दशा को देखकर डॉ0 अम्बेडकर ने कहा था कि बहुत से महात्मा आये और चले गये लेकिन अछूत अछूत ही बने रहे।

मध्यकालीन उदारवादी संतो का सामान्य जनता पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ा। यही कारण था कि सामाजिक उत्पीड़न और शोषण से तंग आकर लाखों की संख्या में अस्पृश्यों ने इस्लाम धर्म को स्वीकार कर लिया।

मध्यकाल में शुरू होने वाली यह अछूतो की धर्म परिवर्तन कर मुस्लिम बन जाने की प्रकिया आधुनिक काल तक चलती रही और इसका सबसे आधुनिक तथा विस्मयकारी उदाहरण स्वयं डॉ0 अम्बेदकर का सैकड़ों सहयोगियों के साथ हिन्दू धर्म को छोड़कर बौद्ध बन जाना है। इसका कारण स्पष्ट है कि सामान्य हिन्दू जनता की उत्पीड़न एवं शोषण की चीख को सुनने वाले कोई नहीं थे।[19]

उस समय हिन्दू समाज में इतनी आपसी विषमता मौजूद थी कि जिस नदी–तालाब में पशु जाकर पानी पीता था और मल–मूत्र त्याग करता था वहॉ से पानी लेना अछूतों के लिए वर्जित था। वे मंदिर में प्रवेश नहीं कर सकते थे। मेला या किसी सार्वजनिक स्थानों पर नहीं जा सकते थे। दलितों के बच्चे को सवर्णो के बच्चों के साथ स्कूल में पढ़ना वर्जित था।[20]

इसी समय अछूतों की निम्न सामाजिक स्थिति को देखते हुए महात्मा गॉधी ने उनके लिए हरिजन शब्द का प्रयोग किये। गॉधी जी को हरिजन शब्द इतना अच्छा लगा कि उन्होनें ''द अनटबेबल्स सोसाइटी'' का नाम बदलकर 9 दिसम्बर 1932 ई0 को हरिजन रखा। एवं हरिजन साप्ताहिक समाचार पत्र को प्रकाशित किया।

लेकिन गाँधी जी द्वारा दलितो के लिए हरिजन शब्द का प्रयोग करने पर डॉ0 अम्बेदकर ने आपत्ति उठायी। क्योकिं 1800 ई0 में गुजराती कवि नरसी मेहता ने हरिजन शब्द का प्रयोग दक्षिण भारत में देवदासियों की अवैध संतान के लिए किया था।[21] इसलिए डॉ0 अम्बेदकर को हरिजन नाम से घृणा था।

अतः अम्बेदकर के प्रयासों से सन् 1935 ई0 के गवर्नमेंट ऑफ इंण्डिया एक्ट में ब्रिटिश सरकार ने अछूतों का नाम अनुसूचित जाति रखा।

इस प्रकार हम पाते है कि जहाँ दलित और हरिजन शब्द हिन्दू समाज की भीतर का उपज है वही अनुसूचित जाति ब्रिटिश प्रशासकों की देन है। इस प्रकार भारत को स्वतंत्रता मिलने के बाद संविधान के अनुच्छेद 341(1) और 342(2) में ऐसी जातियों को सूचीबद्ध करने के पश्चात उन्हें अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के नामों से सम्बोधित किया गया एवं उन्हें संवैधानिक अधिकार दिया गया। इन जातियों के लिए कई कल्याणकारी योजनाएं चलाई गयी। 1949ई0 में बिहार सरकार ने दलितों की पहचान के लिए एक नौ सदस्यीय समिति का गठन किया। इस समिति के रिपोर्ट में कहा गया था कि समाज के दलित वर्ग के लोग दैनिक मजदूरी करके अपना गुजर–बसर करता है। वह भूमिहीन है, उनके पास कुछ नहीं है। वह जमींदारों और सामंतों की दया पर जीता है। उन्हें अपने काम के बदले न्यूनतम मजदूरी भी नहीं मिल पाता है और उसे मार –पीटकर बेगारी करने के लिए प्रताड़ित किया जाता है। एवं मार–पीट के विरोध करने पर जमींदारों द्वारा उनकी झोपड़िया भी जला दी जाती है।

अतः इन सभी यातनाओं एवं शोषण को ध्यान में रखकर 1956 ई0 में बिहार सरकार द्वारा सम्पूर्ण राज्य के 21 जातियों को अनुसूचित अर्थात दलित जातियों की सूची में डाल दिया गया।

1961 ई0 की जनगणना के अनुसार बिहार में अनुसूचित जातियों की संख्या 24 कर दी गई।[22] फिर 1971ई0 की जनगणना में संशोधित करके 23 तथा फिर[23] 1991 की जनगणना के द्वारा बिहार में 23 दलित जातियों को अनुसूचित जाति की सूची में शामिल किया गया।[24] फिर सन् 2000 ई0 में बिहार के मुख्यमंत्री नीतिश कुमार के द्वारा दलित में भी जो अत्यंत पिछडें थे उन्हें महादलित शब्द के नाम से वर्गीकृत किया गया।

फिर नवम्बर 2005 ई0 में बिहार में विद्यान सभा के चुनाव परिणाम में भी दलित के कुल 39 आरक्षित सीटों में से जद्(यू) को 15 दलित विधायक का बहुमत मिला। और 24 नबम्वर 2005 ई0 को नीतिश कुमार बिहार के मुख्यमंत्री बने थे।[25] फिर 2010 ई0 के बिहार विद्यान सभा के नये परिसीमन के द्वारा दलित एवं महादलित के लिए 38 सीटे आरक्षित किये गये थे।[26] वर्ष 2020 के बिहार विधानसभा चुनाव में भी 38 सीट अनुसूचित जाति के लिए आरक्षित था।[27] इस प्रकार दलित वर्गो को मुख्यधारा में लाने का बिहार सरकार का भी प्रयास क्रमशः चलता रहा है। क्योंकि अन्य की तुलना में दलित महिलाओं की समस्याऐ सबसे ज्यादा संधर्षमय रहा है। सबसे ज्यादा प्रभाव दलित जाति की महिलाओं पर ही पड़ता है।[28]

निष्कर्षः– निष्कर्ष रूप में हम कह सकते है कि भारत हो या उसका एक प्रांत (राज्य) बिहार सभी दलित वगों की समस्याएँ प्रारंभिक यही रही है परंतु अलग अलग राज्यों में उनकी आर्थिक परिस्थितियों के अनुरूप समस्याऐ अलग अलग है।

उपरोक्त अध्ययन के उपरांत हम कह सकते है कि जब दलित वर्ग के ऊपर शोषण होता है तो उसमें सबसे ज्यादा प्रभावित महिला ही होती है। जैसे घर का जल जाने पर बेघर होना, बच्चों को देखरेख करना, मजदूरी भी करना एवं कभी–कभी तो जमींदार वर्ग द्वारा शारीरिक शोषण का भी शिकार बनना।

अतः समाज के बुद्धिजीवि वर्ग को यह समझना होगा कि महिलाऐं सम्मान की हकदार होनी चाहिये न कि शोषण की। तभी हम अपने को सभ्य कहे जायेगें। तभी दलित वर्ग को भी एक मानव के रूप में देखने का सामाजिक सोच सार्थक होगी एवं समाज के वंचित वर्ग की श्रेणी से मुक्त हो सकेगी।

संदर्भ –सूची :

1. विमल थोराट, दलित साहित्य का स्त्रीवादी स्वर, अनामिका पब्लिशर्स, नई दिल्ली संस्करण– 2010, पृ0–10
2. वही, दलीत स्त्री आत्मकथनः विगत से संवाद, नई दिल्ली, पृ0–13
3. रजनी कोठारी, 1973,कास्ट, एंड पालिटिक्स इन इंडिया, पृ0–76–87
4. रजनी कोठारी, दिल्ली, 1999, कास्ट इन इंडियन पॉलिटिक्स, ओरियन्ट, सोशल चेंज, 1968, वोल्यूम –6, पटेल बन्धु–1913
5. डॉ0 महेश्वर दत, गॉधी, अम्बेडकर और दलित, राधा प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ0 –33
6. ऋग्वेद –10/90
7. अनुशीलना, शोध जर्नल, वर्ष 2013, वोल्यूम XLVIII, प्रकाशन वाराणसी, पृ0 –257
8. ऋग्वेद –10/90
9. ऋग्वेद की ऋचा, 9/112/1–3, उद्यम, भिन्न–भिन्न है और उद्देश्य धर्नोपार्जन है।
10. घोषाल, हिन्दू पब्लिक लाईफ–1, पृ0–75–80
11. वैदिक इंडेक्स, 42, 22–26
12. अनुशासन पर्व, (कुम्ब संस्करण), 53 13–19
13. छांदोग्य उपनिषद, 23,1–2
14. भगवद्गीता, IX 32
15. सी0 वी0 वैध, हिस्ट्री ऑफ मेडियेवल इण्डिया, वोल्यूम–1, पृ0 –60–63
16. वही, पृ0 –75–76
17. अलबरूनीज, इण्डिया, वोल्यूम –1, पृ0 –102–103
18. वही, पृ0–125
19. द्वारका प्रसाद गुप्ता, महात्मा गॉधी और अस्पृश्यता, समस्या और विकल्प, ज्ञान भारती प्रकाशन, दिल्ली, 1998, पृ0–22
20. डॉ0 बी0 एल0 मेहरजा/सुनीता पचौरी। रवि प्रकाश मेहरदा, अम्बेकर और सामाजिक न्याय, रावत प्रकाशन, नई दिल्ली, 1992, पृ0–123
21. बिहार सरकार का रिर्पोट, अनुसूचित जाति कार्यालय, पटना, 1956ई0
22. सेन्सस बुक, सूचना एवं प्रसारण विभाग, दिल्ली, 1961
23. सेन्सस बुक, रिपोर्ट, सूचना एवं प्रसारण विभाग, दिल्ली।
24. सेन्सस बुक रिपोर्ट, 1991, सूचना एवं प्रसारण विभाग, नई दिल्ली।
25. रिपोर्ट, बिहार सरकार, अनुसूचित
26. चुनाव आयोग कार्यालय, पटना, रिपोर्ट –2010 ई0
27. विकिपिडिया, रिपोर्ट–बिहार चुनाव आयोग, अनुसूचित जाति
28. उन्नति, शोध जर्नल, जबलपुर, वोल्युम–III, अंक – मार्च 2021, पृ0–81.

***

जनसंख्या नीति एवं प्रजनन दर

*डॉ. संगीता कुमारी**

जनसंख्या नीति का तात्पर्य उस सरकारी नीति से है जिसके अनुसार किसी देश की सरकार जनसंख्या वृद्धि, जनसंख्या को कम करने अथवा यथावत बनाये रखने हेतु निर्धारित करती है। इस समय हमारे देश में कई ज्वलंत समस्यायें हैं जो कि जनसंख्या में वृद्धि के कारण मूलतः उत्पन्न हो रही है। यथा–गरीबी, भूखमरी, बेरोजगारी, आतंकवाद, सामाजिक अव्यवस्था, स्वास्थ्य समस्या, अराजकता, निरक्षरता। भारत की जनसंख्या आज 775 करोड़ को पार कर गयी है। चीन के बाद भारत विश्व में दूसरा सबसे आबादी वाला देश है। भारत का क्षेत्रफल विश्व के कुल क्षेत्रफल का 2.4% है जबकि जनसंख्या का प्रतिशत विश्व के कुल आबादी 775 करोड़ का 17.7% (137.28 करोड़) है। स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत की आबादी 34 करोड़ थी जो आज 137.08 करोड़ से अधिक हो गयी है। यदि हमारी आबादी इस तरह बढ़ती रही तो हमारे व्यक्तिगत जीवन एवं राष्ट्र जीवन में सम्पन्नता के स्थान पर लगातार ह्यास होता जाएगा एवं सारी व्यवस्था टूटने लगेगी।

इस भयंकर समस्या को रोकने हेतु ही सरकार द्वारा जनसंख्या नीति बनायी जाती है। जनसंख्या नीति के संबंध में **बर्नाड वेरेल्सन (Bernard Berelson)** ने अपना मत दिया है कि ''जनसंख्या नीति का तात्पर्य उस सरकारी नीति से होता है जो जनसंख्या संबंधी घटनाओं को परिवर्तित करने हेतु किया जाता है अथवा जिनसे वास्तव में परिवर्तन होता है।'' इस परिभाषा में तीन बात महत्वपूर्ण है

(i) यह समस्त लघु एवं दीर्घ सरकारी प्रयासों, नियमों, उपनियमों, आदेशों तथा प्रशासनिक कार्यक्रमों से संबंधित है;

(ii) इसका संबंध उद्देश्य तथा परिणामें से होता है।

(iii) इसमें अनेक जातीय, सामाजिक एवं धार्मिक परिस्थितियों में ध्यान में रखा जाता है।

विश्व के विभिन्न देशों की जनसंख्या संबंधी समस्या के भिन्न रहने के कारण सभी देशों की जनसंख्या नीति समान नहीं होती।

यह उन देशों की आवश्यकता पर आधारित होता है।

जनसंख्या नीति के उद्देश्यों को दो दृष्टिकोणों में वर्णित किया जा सकता है।

(i) गुणात्मक दृष्टिकोण

(ii) परिणात्मक दृष्टिकोण

मानव जीवन के गुणात्मक मूल्यों में सुधार को मानव पूंजी निर्माण भी कहा जा सकता है। जनसंख्या के गुणात्मक पहलू में प्रत्याशित आयु साक्षरता, स्वास्थ्य, श्रम की उत्पादकता, जोखिम लेने की क्षमता इत्यादि समावेशित रहते हैं।

परिणात्मक दृष्टिकोण में प्रजनन दर अथवा जन्म दर, मृत्यु तथा अस्वस्थता को कम करना, देश में आंतरिक एवं वाह्य प्रवास को देशवासियों के हितों के अनुरूप निर्धारित करना जनसंख्या नीति का एक महत्वपूर्ण अंग होता है।

भारत की जनसंख्या नीति को दो भागों में विभक्त कर किया जा सकता है।

(i) स्वतंत्रता के पूर्व जनसंख्या नीति

(ii) स्वतंत्रता के पश्चात जनसंख्या नीति

(i) स्वतंत्रता के पूर्व जनसंख्या नीति–ब्रिटिश शासनकाल में जनसंख्या नीति बनाने में रूचि नहीं ली गयी। ब्रिटिश शासन जनसंख्या वृद्धि में नियंत्रण करने के विरूद्ध थे, परन्तु भारत के बुद्धिजीवी

* असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, जे. डी. वीमेन्स कॉलेज, पटना।

इसकी मांग कर रहे थें सन् 1866 में प्यारे कृष्ण बत्तल ने अपनी प्रकाशित पुस्तक "The Population Problem India" में सर्वप्रथम परिवार नियोजन को आवश्यक बताया। वर्ष 1925 में रविन्द्र नाथ ठाकुर ने लिखा था कि ''परिवार नियोजन स्त्रियों को अनावश्यक मातृत्व तथा भूखमरी से बचाता है। भारत जैसे भूखग्रस्त देश में अधिक बच्चे पैदा करना बेकसुर बच्चों को मौत बुलाना है।

सन् 1935 में जवाहर लाल नेहरू की अध्यक्षता में राष्ट्रीय नियोजन समिति का गठन भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा की गयी, जिसने अपनी सुझाव में वर्णित किया कि भारत की जनसंख्या का आकार उनके जीवन स्तर पर बुरा प्रभाव डाल रहा है। परिवार कल्याण के लिए परिवार नियोजन राज्य की नीति का अंग होना चाहिए। विवाह की आयु में वृद्धि एवं बहुपत्नि प्रथा की समाप्ति जनसंख्या को सीमित करने हेतु आवश्यक है। जननांकी सर्वेक्षण नियमित अंतराल पर कर इसे नियंत्रित करने हेतु नीति निर्धारित की जानी आवश्यक है। मुन्नार मिर्डल के शब्दों में ब्रिटिश शासन काल की समाप्ति आने तक भारत के बुद्धिजीवियों में ऐसा वातावरण तैयार कर दिया था कि स्वतंत्र भारत की सरकार को एक प्रभावी जनसंख्या नीति अपनानी आवश्यक हो जाएगी।

(ii) स्वतंत्रता के पश्चात जनसंख्या नीति–स्वतंत्रता के पश्चात योजना आयोग ने निर्देशन में पंचवर्षीय योजनायें लागू की गयी एवं जनसंख्या नीति का भी मूल्यांकन पंचवर्षीय योजनाओं के साथ होता गया। जनसंख्या नीति का प्रमुख लक्ष्य जन्म दर में कटौती था। जनसंख्या में नियंत्रण हेतु अप्रैल 1972 से गर्भपात को वैध घोषित किया गया। आज अनुमान के अनुसार हर वर्ष करीब 40 लाख औरतें गर्भ समापन करवाती हैं। अप्रैल 1976 में विवाह की न्यूनतम आयु लड़कियों के लिए 18 वर्ष एवं लड़कों के लिए 21 वर्ष कर दी गयी। केन्द्रीय सहायता बढ़ाकर एवं शिक्षा प्रणाली में सुधार कर परिवार नियोजन हेतु प्रोत्साहन दिया जाना भी जनसंख्या नीति में शामिल किया गया। सन् 1977 में जनसंख्या नीति पुनः नये सिरे से परिभाषित किया गया। इसे परिवार नियोजन के स्थान पर परिवार कल्याण नाम दिया गया। इसमें माता एवं शिशु के स्वास्थ्य को सर्वाधिक महत्व दिया गया।

मई 2000 में जब भारत की जनसंख्या एक अरब हो गयी तो देश में काम कर रही महिला संगठनों एवं स्वास्थ्य संगठनों ने सरकार को वर्तमान जनसंख्या नीति एवं उसके कार्यान्वयन पर पुनर्विचार करने हेतु दबाव डाला। इसी समय 1994 में 31 M.S स्वामीनाथन की अध्यक्षता में गठित समिति के दिये गये सुझाव के आधार पर नई जनसंख्या नीति 2000 की घोषणा भारत सरकार द्वारा 15 फरवरी 2000 को की गयी। इस नीति के अनुसार परिवार नियोजन की स्वैच्छिक रहने दिया गया, प्रोत्साहन एवं हतोत्साहन को बाह्यकारी नहीं बनाया गया एवं प्रजनन दर को 2010 तक 2 के नीचे लाना तथा 2045 तक जनसंख्या को स्थिर कर लेने का लक्ष्य निर्धारित किया गा। भारत की जनसंख्या नीति की उपलब्धियों में जन्म दर में उल्लेखनीय कमी आयी। 1980 के दशक में पहली बार 1951 के पश्चात जनसंख्या वृद्धि दर में कमी आयी। अब यह कमी 2 प्रतिशत तक पहुँच गयी है। शिशु मृत्यु दर भी घटकर 70 प्रति हजार रह गयी है। जनसंख्या नीति को सभी संस्थाओं विचारधारा, सरकारी विभाग, श्रम संगठन एवं सभी वर्गों का समर्थन मिल रहा है। विभिन्न राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय संस्थाये जनसंख्या अनुसंधान कार्य कर रही है। गर्भपात को कानूनी मान्यता प्राप्त है। वस्तुतः भारत की जनसंख्या नीति लक्ष्य मुक्त दृष्टिकोण पर आधारित है। लोगों को स्वतः उत्प्रेरित होकर इसके भागीदारी सुनिश्चित की जा रही है। भारत की जनसंख्या नीति की आलोचनायें भी की जाती है। इसे व्यवहारिक कम एवं सैद्धान्तिक अधिक कहा जाता है। इस नीति को लागु करने हेतु बनायी जा रही कार्यक्रमों को सभी धर्मों एवं वर्गों में समान रूप से लागू करने में कठिनाई प्रतीत होती है। इसमें मौद्रिक प्रलोभनों को दोषपूर्ण कहा जाता है। नीति का निर्माण केन्द्र सरकार द्वारा किया जाता है, परन्तु कार्यक्रम का दायित्व राज्य सरकारों का है। राज्य सरकार को दायित्व निर्वहन में अभिरूचि का अभाव भी उल्लेखनीय है।

जनसंख्या नीति में सुधार के लिए दो संभावित उपाय को अपनाया जाना श्रेयष्कर हो सकता है। पहला आर्थिक विकास कार्यक्रम को जनसंख्या वृद्धि की तुलना में अधिक तेजी से विकसित करना तथा दूसरा जनसंख्या वृद्धि को नियोजित प्रयासों के द्वारा नियंत्रित करके अप्रत्याशित वृद्धि को रोकना।

भारत के संदर्भ में उपयुक्त होगा कि हम एक तरफ उत्पादन में वृद्धि करें तथा दूसरी तरफ जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रित करें, जिससे कि विकास कार्यक्रमों का संचालन सुचारू ढंग से हो सके।

प्रजननता :–प्रजननता का अर्थ किसी महिला या उसके समूह द्वारा किसी नियत समय विशेष में कुल सजीव जन्में बच्चों की वास्तविक संख्या से होता है। किसी क्षेत्र विशेष का सामान्य प्रजनन दर एक वर्ष में कुल जीवित जन्में बच्चों की संख्या एवं उस वर्ष प्रजनन आयु वर्ग को स्त्रियों की कुल संख्या के अनुपात के हजार गुणा से परिभाषित होता है। नीति आयोग के अनुसार बिहार का प्रजनन दर अन्य राज्यों की तुलना में सर्वाधिक है। राष्ट्रीय औसत 2.3 की तुलना में बिहार का प्रजनन दर 3.3 है जो सर्वाधिक है। भारत में 15 से 50 वर्ष तक (प्रजनन आयु) की स्त्रियों की प्रजनन क्षमता 5 से 8 बच्चे तक हैं। प्रतिवर्ष औसतन 210 लाख व्यक्ति जन्म लेते हैं एवं 80 लाख की मृत्यु हो जाती है। इस प्रकार 130 लाख की वार्षिक वृद्धि जनसंख्या में हो जाती है।

सर्वाधिक प्रजनन दर कम आयु विवाह वाली श्रेणी में है। विवाह की आयु घटेगी तो प्रजनन दर बढ़ेगी। आर्थिक स्तर बढ़ने के साथ–साथ बच्चों की संख्या परिवार में घटती जाती है। उच्च आर्थिक स्तर में बच्चों की संख्या कम है, जहाँ गरीबी बेरोजगारी एवं भूखमरी है वहाँ बच्चों की संख्या अधिक है। नगरीय क्षेत्रा के महिलाओं में परिवार नियोजन प्रविधियों के अपनाने में उत्साह पाया गया जबकि ग्रामीण क्षेत्र के लोगों में परिवार नियोजन के प्रति उदासीनता पायी गयी। ग्रामीण क्षेत्रों में परिवार नियोजन केन्द्रों की भी कमी होती है। एकल परिवार में औसतन संयुक्त परिवार से प्रजनन दर कम है। श्रमिक वर्ग (खेतिहर मजदूर) में सर्वाधिक प्रजनन दर है, गृह कार्य में संलिप्त महिलाओं का प्रजनन दर का औसत है, जबकि नौकरी पेशा महिलाओं में प्रजनन दर कम 2 है। शिक्षा में बढ़ोतरी के साथ प्रजनन दर घटता गया। अशिक्षित महिलाओं की अपेक्षा उच्च शिक्षित महिलाओं में कम बच्चे पाये गये।

पुत्र प्राप्ति की उच्च आकांक्षा भी प्रजनन दर को प्रभावित करता है। ग्रामीण एवं कम शिक्षित समाज पुत्र का होना अत्यंत आवश्यक मानते हैं। पुरूष प्रधान समाज के मूल्यों से ग्रसित होने के कारण जब तक पुत्र संतान की उत्पति नहीं हो जाती है तब तक संतान की अपेक्षा बनी रहती है जो प्रजनन की वृद्धि का कारक है। एक नये आयाम की ओर भी ध्यान आकृष्ट करना आवश्यक समझती हूँ, ग्रामीण समाज में लड़कियों को बोझ एवं लड़कों को बुढ़ापे की लाठी भी समझा गया है।

विश्व के विकासशील देशों की तरह भारत भी तीव्र जनसंख्या वृद्धि की समस्या झेल रहा है। देश की आबादी एवं उपलब्ध संसाधन के बीच असंतुलन बढ़ता जा रहा है। भारतीय जनसंख्या पहले ही अनुकूलतम स्तर को पार कर चुकी है।

यदि भारत और बिहार को आर्थिक एवं सामाजिक विकास की क्षितिज पर चमकना है तो जनसंख्या वृद्धि दर को नियंत्रित करना ही होगा।

संदर्भ :

(i) Census of India 1991, 2001 and 2011.
(ii) National Family Health Survey I, II, III.
(iii) India Population Policy - Changing Paradigm New Delhi, B.R. Publication.
(iv) Monika Das Gupta :- Fertility decline in Punjab.
(v) Planning Commission Reports.
(vi) Radha Krishna Mukherjee :- Family and Planning in India.
(vii) V.S. Nagpaul :- Modernization and urbanization in India.
(viii) A.R. Kamat :- Population Problem of India.

***

किशोर न्याय (बालको की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम 2015 के अनुरुप गठित "बाल कल्याण समिति'' की भूमिका का एक अध्ययन, सिवनी जिला मध्यप्रदेश के विशेष संदर्भ में

*शोभाराम डेहरिया**

प्रस्तावनाः– किशोर न्याय (बालको की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम 2015 (जेजे एक्ट) के नाम से भी जाना जाता है जो वर्तमान में सम्पूर्ण भारत में लागू है।

अधिनियम की पृष्ठभूमि : संविधान के अनुच्छेद 15 के खण्ड (3), अनुच्छेद 39 के खण्ड (ड) और खण्ड (च), अनुच्छेद 45 और अनुच्छेद 47 के उपबन्धों के अधीन यह सुनिश्चित करने की कि बालकों की सभी जरूरतों को पूरा किया जाए और उनके मूलभूत मानव अधिकारों की पूर्णतया संरक्षा की जाए, शक्तियाँ प्रदान की गई है, और कर्तव्य अधिरोपित किए गए हैं

और, भारत सरकार ने संयुक्त राष्ट्र की साधारण सभा द्वारा अंगीकृत बालकों के अधिकारों से सम्बन्धित अभिसमय को, जिसमें ऐसे मानदण्ड विहित किए गए हैं, जिनका बालक के सर्वोत्तम हित को सुनिश्चित करने में सभी राज्यों द्वारा पालन किया जाना है, 11 दिसम्बर, 1992 को अंगीकार किया थाः और, विधि का उल्लंघन करने के अभिकथित और उल्लंघन करते पाए जाने वाले बालकों तथा देखरेख और संरक्षण के जरूरतमंद बालकों के लिए बालक के अधिकारों से सम्बन्धित अभिसमय, किशोर न्याय के प्रशासन के लिए संयुक्त राष्ट्र मानक न्यूनतम नियम, 1985 (बीजिंग नियम), अपनी स्वतंत्रता से वंचित संयुक्त राष्ट्र किशोर संरक्षण नियम (1990), बालक संरक्षण और अन्तरदेशीय दत्तक ग्रहण की बाबत् सहयोग सम्बन्धी हेग कन्वेंशन (1993) तथा अन्य सम्बन्धित अन्तरराष्ट्रीय लिखतों में विहित मानकों को ध्यान में रखते हुए वृहत् उपबन्ध करने के लिए किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम, 2000 (2000 का 56) को पुनः अधिनियमित करना समीचीन है ।

अध्ययन का उद्देश्य–

1. बाल कल्याण समिति के कार्यो का अध्ययन करना जिससे की बाल कल्याण समिति के कार्य कलापों को आम जन तक पहुचाया जा सकें जिससे बच्चों के हितों की रक्षा को बढ़ावा मिल सकें।
2. बाल कल्याण समिति के समक्ष बालकों को संज्ञान में लेना एवं समस्या का निराकरण करने में।
3. बाल कल्याण समिति के सदस्यों को समिति के बारें में ओर अधिक पढ़ने जानने को मिल सके।
4. जेजे एक्ट–2015 की जानकारी अधिक लोगों को मिल सके।
5. बाल कल्याण से जुडें लोगों को बालकों की समस्या का निराकरण में सहायता मिल सके।
6. पास्को एक्ट 2012 की जानकारी जन सामान्य एवं बालकों को मिल सके।

अध्ययन विधि–

1. सामाजिक अनुसंधान कारी वैज्ञानिक विधि को प्रयोग में लाया गया है। डाटा कलेक्शन की प्राथमिक एवं द्वितीयक विधि का प्रयोग। कार्य क्षेत्र में अनुभव को साझा करने का भी प्रयास किया गया है।
2. डाटा कलेक्शन
3. सारणीयन।
4. प्रत्यक्ष अवलोकन।

अध्ययन का महत्वः–

1. बालकों की देखरेख एवं संरक्षण में कार्य करने वाली ऐजेंसियों को बाल कल्याण समिति को समझने का मौका मिलेगा। जिससे समस्या ग्रस्थ कोई भी बालको को बाल कल्याण समिति के समक्ष प्रस्तुत किया जा सकता है।

---

* सहायक प्राध्यापक एवं पूर्व विभागाध्यक्ष (समाज कार्य) एवं सदस्य बाल कल्याण समिति, जिला सिवनी मध्यप्रदेश शासन

2. बालकों की काउसलिंग व समस्या को सुलझाने में सहायता मिल सकें।
3. जेजे एक्ट को अधिक लोगों की पहुंच में लाना जिससे बाल काल्याण को बढावा मिल सकें।
4. पाक्सों एक्ट 2012 की जानकारी जन समान्य एवं बालकों को मिल सके।
5. चाइल्ड हेल्प लाइन 1098 बालकों व आम लोगों की जानकारी में लाया जाना।
6. शासकीय योजनाओं एवं बाल कल्याण समिति से लोग अवगत होगें।

अध्ययन क्षेत्र का परिचयः–

अध्ययन क्षेत्र सिवनी जिला मध्यप्रदेश राज्य में स्थित आदिवासी बहुल्य क्षेत्र होने के साथ ही वन एवं कृषि पर आधारित जीवन शैली है। सिवनी जिला का गठन 1956 में हुआ था। सिवनी जिला सतपुडा पर्वत श्रृखला पठार पर स्थित क्षेत्र है। सियोना वृक्ष जो ढोलक बनाने के काम आता है इससे सिवनी का नामकरण हुआ। सिवनी राष्ट्रीय राजमार्ग–7 पर स्थित है जो भारत को उत्तर से दक्षिण बनारस से कन्याकुमारी तक जिला को जोडती है। सिवनी जिला दक्षिण में महाराष्ट्र की सीमा से लगा हुआ है जो नागपुर को जोडती है। सिवनी जिला में पेंच राष्ट्रीय उद्यान जो टाइगर रिजर्व के अंतर्भाग में स्थित है। साथ ही संजय सरोवर बाध एशियां का मिटटी से बना सबसे बडा बाध है जो कृषि एवं पीने के पानी का बडा स्त्रोंत है। जिला की जनसंख्या लगभग 15 लाख के करीब है। जिला में 9 विकासखण्ड है जिनमें से 5 विकासखण्ड आदिवासी विकासखण्ड के अन्तर्गत है। सिवनी जिला में कृषि के अलावा जीवन यापन या रोजगार के लिए कोई प्रमुख व पर्याप्त ईकाई नहीं है इस कारण खाली समय में या परिवार के अतिरिक्त सदस्य नागपुर महाराष्ट्र में काम की तलाश व रोजगार के लिए पलायन करते है। यहां मक्का एवं गेहू का अच्छा उत्पादन के साथ दलहन व धान का उत्पादन भी पर्याप्त मात्र में होगा है। वन क्षेत्रों में उच्च किस्म की सागोन की लकड़ी व पेड़ के घनें वन है।

बाल कल्याण समिति सिवनीः– किशोर न्याय (बालको की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम 2015 के अन्तर्गत सिवनी जिला में बाल कल्याण समिति का गठन नियमानुसार मध्यप्रदेश शासन द्वारा किया गया है। जिसके गठन कि अधिसूचना मध्यप्रदेश शासन के असाधारण राजपत्र प्रकाशित दिनांक 07/04/2021 से तीन वर्ष के लिए कार्यकाल निर्धारित किया गया है। जिसमें समिति सदस्यों को शासन के नियमानुसार मानदेय दिया जाता है।

वर्तमान में सिवनी जिला में धारा 27 के अधीन नियुक्त बाल कल्याण समिति के सदस्यों के नाम की सूचीः–

बाल कल्याण समिति का गठन– राज्य सरकार इस अधिनियम की **धारा 27** के अधीन प्रत्येक जिले के लिए **बालकल्याण समिति** का गठन करेगी। समिति **एक अध्यक्ष और चार सदस्यों से मिलकर बनेगी**, जिनमें कम से कम एक महिला सदस्य होगी। किसी व्यक्ति को सदस्य के रूप में **तीन वर्ष** से अधिक अवधि के लिए नियुक्त नहीं किया जाएगा। बाल कल्याण समिति न्यायपीठ के रूप में कार्य करेगी और उसे दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) द्वारा, यथास्थिति, **महानगर मजिस्ट्रेट** या **प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट** को प्रदत्त शक्तियाँ प्राप्त होंगी। **(धारा 27(9)**

क्रमांक	नाम	पद	पुरुष/महिला
1.	श्री विनोद शुक्ला	अध्यक्ष	पुरुष
2.	श्री शोभाराम डेहरिया	सदस्य	पुरुष
3.	श्रीमती संध्या चंदेल	सदस्य	महिला
4.	श्रीमती शशिबाला डेहरिया	सदस्य	महिला
5.	श्री मुकेश कुमार सेन	सदस्य	पुरुष

धारा 29. समिति की शक्तियाँ–(1) समिति को, देखरेख और संरक्षण के लिए जरूरतमन्द बालकों की देखरेख, संरक्षण, उपचार, विकास और पुनर्वास के मामलों का निपटारा करने और उनकी मूलभूत आवश्यकताओं तथा संरक्षण के लिए उपबन्ध करने का प्राधिकार होगा।

(2) जहां किसी क्षेत्र के लिए समिति का गठन किया गया है, वहां तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी, किन्तु इस अधिनियम में अभिव्यक्त रूप से जैसा उपबन्धित है, उसके सिवाय, ऐसी समिति को, देखरेख और संरक्षण के लिए जरूरतमन्द बालकों से सम्बन्धित इस अधिनियम के अधीन सभी कार्यवाहियों के सम्बन्ध में अनन्यतः कार्य करने की शक्ति होगी।

30. समिति के कृत्य और उत्तरदायित्व–समिति के कृत्यों और उत्तरदायित्वों में निम्नलिखित सम्मिलित होंगे,

(1) उसके समक्ष प्रस्तुत किए गए बालकों का संज्ञान और उन्हें ग्रहण करना

(2) इस अधिनियम के अधीन बालकों की सुरक्षा और भलाई से सम्बन्धित और उसको प्रभावित करने वाले सभी मुद्दों की जांच करना

(3) बालक कल्याण अधिकारियों या परिवीक्षा अधिकारियों या जिला बालक संरक्षण एक या गैर–सरकारी संगठनों को सामाजिक अन्वेषण करने और समिति के समक्ष रिपोर्ट प्रस्तुत करने का निदेश देना

(4) देखरेख और संरक्षण के लिए जरूरतमन्द बालकों की देखरेख करने हेतु योग्य व्यक्ति की घोषणा करने के लिए जांच करना

(5) पोषण देखरेख के लिए किसी बालक के स्थान का निदेश देना।

(6) बालक विशिष्ट देखरेख योजना पर आधारित देखरेख और संरक्षण के लिए जरूरतमन्द बालकों की देखरेख, संरक्षण, समुचित पुनर्वास या प्रत्यावर्तन को सुनिश्चित करना और इस सम्बन्ध में माता–पिता या संरक्षक या योग्य व्यक्ति या बाल गृहों या सुविधा उपयुक्त तंत्र के लिए आवश्यक निर्देश पारित करना

(7) संस्थागत सहायता की अपेक्षा वाले प्रत्येक बालक के स्थान के लिए, बालक की आयु, लिंग, निर्योग्यता और आवश्यकताओं पर आधारित तथा संस्था की उपलब्ध क्षमता को ध्यान में रखते हुए रजिस्ट्रीकृत संस्था का चयन करना

(8) देखरेख और संरक्षण के लिए जरूरतमन्द बालकों की आवासिक सुविधाओं का प्रत्येक मास में कम से कम दो बार निरीक्षण दौरा करना और जिला बालक संरक्षण एकक और राज्य सरकार को, सेवाओं की क्वालिटी में सुधार करने के लिए कार्रवाई करने की सिफारिश करना

(9) माता–पिता द्वारा अभ्यर्पण विलेख के निष्पादन को प्रमाणित करना और यह सुनिश्चित करना कि उन्हें विनिश्चय पर पुनःविचार करने और कुटुम्ब को एक साथ रखने हेतु सभी प्रयास करने का समय दिया गया है।

(10) यह सुनिश्चित करना कि ऐसी सम्यक् प्रक्रिया का, जो विहित की जाए, अनुसरण करते हुए परित्यक्त या खोए हुए बालकों का, उनके कुटुम्बों को प्रत्यावर्तन करने के लिए सभी प्रयास किए गए हैं

(11) ऐसे अनाथ, परित्यक्त और अभ्यर्पित बालक की घोषणा करना जो सम्यक् जांच के पश्चात् दत्तक ग्रहण के लिए वैध रूप से मुक्त है।

(12) मामलों का स्वप्रेरणा से संज्ञान लेना और ऐसे देखरेख और संरक्षण के लिए जरूरतमन्द बालकों तक पंहुचाना, जिन्हें समिति के समक्ष पेश नहीं किया गया है, परन्तु ऐसा विनिश्चय कम से कम तीन सदस्यों द्वारा लिया गया हो

(13) लैंगिक रूप से दुर्व्यवहार से ग्रस्त ऐसे बालकों के पुनर्वास के लिए कार्रवाई करना जो लैंगिक अपराधों से बालकों का संरक्षण अधिनियम, 2012 (2012 का 32) के अधीन, यथास्थिति, विशेष किशोर पुलिस एकक या स्थानीय पुलिस द्वारा समिति को, देखरेख और संरक्षण के लिए जरूरतमन्द बालकों के रूप में ज्ञापित है

(14) धारा 17 की उपधारा (2) के अधीन बोर्ड द्वारा निर्दिष्ट मामलों में कार्रवाई करना

(15) जिला बालक संरक्षण एकक या राज्य सरकार के समर्थन से बालकों की देखरेख और संरक्षण में अन्तर्वलित पुलिस, श्रम विभाग और अभिकरणों के साथ समन्वय बनाना

(16) समिति, किसी बालक देखरेख संस्था में किसी बालक से दुर्व्यवहार की शिकायत के मामले में जांच करेगी और यथास्थिति, पुलिस या जिला बालक संरक्षण एकक या श्रम विभाग या बालबद्ध सेवाओं को निदेश देगी

(17) बालकों के लिए समुचित विधिक सेवाओं तक पहुंच बनाएगी और

(18) ऐसे अन्य कृत्य और उत्तरदायित्व, जो विहित किए जाए।

31. समिति के समक्ष पेश किया जाना–(1) देखरेख और संरक्षण के लिए जरूरतमन्द किसी बालक को निम्नलिखित किसी व्यक्ति द्वारा समिति के समक्ष पेश किया जा सकेगा, अर्थात ––

(1) किसी पुलिस अधिकारी द्वारा या विशेष किशोर पुलिस एकक या पदाभिहित बालक कल्याण पुलिस के अधिकारी या जिला बालक कल्याण एकक के किसी अधिकारी या तत्समय प्रवृत्त किसी श्रम विधि के अधीन नियुक्त निरीक्षक द्वारा

(2) किसी लोक सेवक द्वारा

(3) ऐसी बालबद्ध सेवाओं या किसी स्वैच्छिक या गैर–सरकारी संगठन या किसी अभिकरण द्वारा, जिन्हें राज्य सरकार द्वारा मान्यता दी जाए

(4) बालक कल्याण अधिकारी या परिवीक्षा अधिकारी द्वारा

(5) किसी सामाजिक कार्यकर्ता या लोक भावना से युक्त नागरिक द्वारा

(6) स्वयं बालक द्वारा या

(7) किसी नर्स, डॉक्टर, परिचर्या गृह (नर्सिंग होम), अस्पताल या प्रसुति गृह के प्रबन्धक द्वारा

परन्तु बालक को समय नष्ट किए बिना, किन्तु चौबीस घण्टे की अवधि के भीतर यात्रा के लिए आवश्यक समय को छोड़कर, समिति के समक्ष पेश किया जाएगा ।

बाल कल्याण समिति के समक्ष प्रस्तुत प्रकरण एवं निराकरण वर्ष 2021–22 तकः–

बाल कल्याण समिति जैसे कि, नाम से ही स्पष्ट है यह समिति बाल कल्याण एवं देखरेख व संरक्षण के लिए शासन द्वारा गठित समिति है जो बालकों के हित एवं कल्याण व सर्वागीण विकास, पुर्नावास आदि के लिए कार्य एवं अपनी शक्तियों का प्रयोग करती है। बाल कल्याण समिति के अध्ययन का उद्देश्य बाल संरक्षण को बढ़ावा मिलें एवं जनसमान्य तक बाल संरक्षण अधिनियम की जानकारी लोगों तक पहुचें एवं बाल अपराध पर रोक लगने के साथ ही बालकों को दुरुपयोग को रोकना व बालको के संर्वागीण विकास के समान अवसर पैदा हो सकें।

बालक कौन है– यहां पर अध्ययन कर्ता द्वारा बालक को परिभाषित किया जा रहां है कि, आखिर बालक कौन है? यह बहुत महत्वपूर्ण प्रश्न है। बाल कल्याण समिति के समक्ष भी जब कोई बालक जब भी प्रस्तुत होता है तो उसकी आयु का पता लगाया जाता है। बालकों को निम्नलिखित रुप से परिभाषित किया जा सकता है।

1. एक ऐसा मानव (व्यक्ति) जिसकी आयु 18 बर्ष से कम है बालक की श्रेणी में आता है।
2. मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी बाल्य अवस्था को निम्नानुसार परिभाषित किया गया है।

1. पूर्व बाल्यावस्था – 0 से 06 वर्ष।
2. उत्तर बाल्यावास्था – 06–12 वर्ष।
3. किशोरावस्था – 12 से 18 वर्ष।

बाल कल्याण समिति के सदस्यों को बालकों के आयु समूह व उसके शारिरीक मानसिक परिवर्तनों की जानकारी होना जरुरी है जिससे कि, बालकों के देखरेख व संरक्षण में उचित निर्णय लेते समय आयु समूह को भी ध्यान रखा जा सके।

बाल कल्याण समिति के समक्ष प्रस्तुत प्रकरण में कुछ प्रकरण पुर्नावास, पोस्को पीडिता, एवं कोविड़ 19 से प्रभावित बच्चें, घर से भाग जाने वाले बच्चें प्रस्तुत हुए जिनमें से कुछ प्रकरण पुलिस द्वारा, कुल प्रकरण परिवार के सदस्यों या पालकों द्वारा, एवं कुछ प्रकरण **चाइल्ड लाइन 1098 के** माध्यम से प्राप्त हुए जिनकी समस्या का निराकरण एवं कुछ प्रकरणों का सूक्ष्म अध्ययन एवं प्रकरण बाल कल्याण समिति के समक्ष प्रचलन में है। एक वर्ष के दौरान बाल कल्याण सिवनी के समक्ष 95 के

लगभग प्रकरण पंजीकृत बाल कल्याण समिति ने संज्ञान में लिया। जिनमें से 89 करीब प्रकरण निराकृत कर दिया गया है। कोविड़ 19 एवं स्पांसरशिप से जुड़े मामलें भी है। कुछ प्रकरण समिति की देखरेख व संरक्षण में है। कुछ प्रकरणों से पीडित बालकों से जुड़े मामलें न्यायालय में विचाराधीन भी है। उसी प्रकार कोविड 19 से प्रभावित बच्चों के लिए योजना बनाने वाला मध्य प्रदेश राज्य भारत का पहला राज्य बना एवं बच्चों के जीवन यापन से लेकर पढाई के खर्च की पूरी जिम्मेंदारी सरकार ने उठाया। उसी प्रकार पीडित बच्चों को प्राइवेट स्पोन्सरशिप एवं कुछ बच्चों को कैलास सत्यार्थी फाउन्डेशन से भी स्पान्सरशिप सहायता राशि प्राप्त हो रहीं है।

बाल कल्याण समिति के समक्ष प्रस्तुत प्रकरण :–

क्रमांक	प्रकरण का स्वारुप	संख्या	बालक	बालिका
1.	घर से भाग जाना	15	07	08
2.	दोस्त या प्रेम प्रसंग के चलते घर से चलें जाना या पुलिस द्वारा प्रस्तुत करना।	12	02	10
3.	गर्भधारण होने की स्थिति में	03	00	03
4.	परिवार/संरक्षक द्वारा त्याग देना।	14	06	08
5.	कोविड़ 19 के चलते माता–पिता की मृत्यु होने पर वैद्य संरक्षक घोषित करना	09	4	05
6.	स्पांसररशिप योजना का लाभ प्राप्त बालक करना।	42	18	22
7.	पी.एम./सीएम केयर फण्ड/कोविड़ 19 योजना का लाभ	07	03	04
8.	बाल विवाह से संबन्धित प्रकरण	04	00	04
9.	चाइल्ड लाइन 1098 के माध्यम से प्रस्तुत	16	07	09

परिवार /करीबी रिस्तेदार में बालकों पुर्नावासः–

बाल कल्याण समिति सिवनी के समक्ष किशोर बालक एवं बालिकाओं से संबन्धि कुछ ऐसे प्रकरण भी आए जिसमें परिवार द्वारा परिवारिक व सामाजिक कारणों से बालकों को घर में नहीं रखना चाहतें थे। ऐसे प्रकरणों में बालक/बालिका व परिवार के सदस्यों की काउसंलिग करके लगभग 23 बालक/बालिकाओं को परिवार में पुर्नावास कराया गया। एवं कुछ बालको के बैद्य संरक्षक घोषित कर करीबी रिस्तेदारों के यहां बालकों को रखा गया।

अध्ययन के उपरान्त ध्यान रखने योग्य महत्वपूर्ण बिन्दूः–

1. बाल कल्याण समिति बालकों के मामलें में बहुत शक्तिशाली एवं प्रभावशील है। साथ ही बाल संरक्षण में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहीं है।
2. बाल कल्याण समिति की सहायता के लिए विशेष पुलिस ईकाई का गठन किया गया है।
3. चाइल्ड लाइन 1098 का बाल कल्याण समिति एवं बालकों के बीच पुल का कार्य करती है।
4. शासन द्वारा बालक/बालिकाओं को रखने के लिए विशेष बालक/बालिका/शिशु गृह स्थापित किए है।
5. बाल कल्याण समिति के संचालन में महिला एवं बाल विकास विभाग द्वारा हर संभव सहायता प्रदान की जाती है।
6. नव नियुक्ति योग्य एवं अनुभवी सदस्यों की नियुक्ति शासन द्वारा विशेष प्रक्रिया के माध्यम से किया जाता है।

सुझावः–

1. बाल कल्याण समिति के सदस्यों को जेजे एक्ट 2015 व नये संशोधनों का अध्ययन करते रहना चाहिए।
2. पास्को एक्ट 2012 एवं इससे संबंधिय नियम प्रवधानों को अध्ययन एवं जन मानस एवं किशोरों के बीच पार्याप्त प्रचार प्रसार किया जाना चाहिएँ।
3. चाइल्ड लाइन 1098 की जानकारी जनमानस में हो एवं प्रत्येक जिला में इसकी स्थापना हो।
4. बाल कल्याण समिति एवं संबन्धित उपक्रमों के बीच प्रत्येक माह एक बैंठक अनिवार्य रुप से होना चाहिए।
5. विशेष किशोर पुलिस ईकाई एवं प्रत्येक थाना में पदस्थ बाल कल्याण पुलिस अधिकारियों को समय समय पर प्रशिक्षण प्राप्त होना चाहिए।
6. जिला अधिकारी एवं विभिन्न आवश्यक विभाग के अधिकारियों के साथ समय–समय पर अनिवार्य बैठक होती रहें।
7. बाल संरक्षण अधिनियम, पास्को एक्ट, श्रम अधिनियम, बाल विवाह अधिनियम, दत्तक ग्रहण अधिनियम की जानकारी बाल कल्याण समिति के सदस्यों को होना चाहिएँ एंव समय समय पर प्रशिक्षण।
8. बाल कल्याण समिति के सदस्यों के बीच आपसी समंजस्य अच्छा होना चाहिए।

निष्कर्षः– किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम 2015 के अन्तर्गत गठित समिति में एक अध्यक्ष एवं चार सदस्य है। बाल कल्याण समिति का कार्यकाल समाप्त होने की स्थिति में अन्य जिला की बाल कल्याण समिति को उक्त खाली जिला का प्रभार तब तक के लिए सौप दिया जाता है जब तक की वहां नई बाल कल्याण समिति की नियुक्ति न कर दिया जाएँ। हाल ही में सिवनी जिला की समिति को बालाघाट जिला का प्रभार दिया गया था। इस प्रकार बालकों की देखरेख एवं संरक्षण में बाल कल्याण समिति की बहुत अहम भूमिका है। बाल कल्याण समिति न्यायपीठ के रुप में कार्य करती है। समिति बाल कल्याण एवं हित में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका एवं दायित्व का निर्वान करती है। पद और प्रतिष्ठा से परे समाज सेवी एवं कुशल अनुभवी सदस्यों बालकों के कल्याण में सदैव तत्पर रहते है। सरकार द्वारा गठित चयन समिति द्वारा सदस्यों का चयन किया जाता है।

सन्दर्भ :

1. जी.आर मदन : समाज कार्य, विवेक प्रकाशन, दिल्ली।
2. बाजपेयी डॉ.एस.आर. : सामाजिक अनुसंधान तथा सर्वेक्षण,किताब घर–कानपुर–2007, पृ. .233.
3. देवेन्द्र बागड़ी : किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम 2015, इंडियन लॉ हाउस।
4. देवेन्द्र बागड़ी : लैंगिक अपराधों से बालकों का संरक्षण अधिनियम–2012, इंडियन लॉ हाउस।
5. मध्यप्रदेश राजपत्र (असाधारण), भोपाल दिनांक 07 अप्रैल 2021, मध्यप्रदेश शासन।
6. वृदा सिंह : बाल मनोविज्ञान।
7. ए.बी. भटनागर–एजुकेशनल साइकोलॉजी, आर .लाल बुक डिपों, 2003.

***

नाबार्ड और अन्य संस्थाओं की कृषि के विकास सूक्ष्म वित्त प्रदान करने में महत्व

*शुभम सिंह**

सूक्ष्म वित्त एक ऐसी व्यवस्था है, जो छोटे–छोटे कामगारों को आय अर्जक रोजगार के लिए वित्त की व्यवस्थाकराता है। यह बहुत ही कम धन राशि का कर्ज होता है, जो गरीब एवं कमजोर वर्ग के लिए बेहतर होता है यह प्रति भूति रहित कर्ज होता है। सामान्यतः कर्ज का आकार ₹500000 से कम होता है। इसका उपयोग करने से समाज के कमजोर वर्गों को अपना व्यवसाय प्रारम्भ करने और उघमिता का विकास करने का अवसर मिल जाता है। विश्व के तमाम हिस्सों में इसका उपयोग कर के लोग अपनी गरीबी दूर कर रहे हैं। महिला सशक्तिकरण में भी इसका महत्वपूर्ण योगदान है। सूक्ष्म वित्त संस्थाएं अपनी गतिविधियों को हमेशा गरीबों पर केन्द्रित कर योजनाएं बनाती हैं।

सूक्ष्म वित्त वह व्यवस्था है जिसके अंतर्गत लोगों को अपनी छोटी–छोटी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए इसकी जरूरत पड़ती है। गांव में निवास करने वाले गरीबों, किसानों, मजदूरों को अपनी जरूरतों के लिए ऐसे वित्त की आवश्यकता पड़ती है। किसानों को खेती के लिए वित्त की उतनी ही जरूरत है, जितना कि उद्योगों एवं अन्य क्रियाकलापों में। भारत जैसे विकासशील देश में मुख्य व्यवसाय होने के कारण कृति राष्ट्रीय आय का प्रमुख स्रोत, रोजगार एवं जीवन यापन का प्रमुख साधन, वाणिज्य,औघौगिक, विकास एवं विदेशी व्यापार की आधार शिला है।

भारत एक विकासशील कृषि प्रधान देश है और यहां के लगभग 60% जनसंख्या गांव में निवास करती है। यहां का प्रमुख व्यवसाय कृषि हैं।अतः कृषि विकास में सूक्ष्म वित्त के महत्व को नकारा नहीं जा सकता है। भारतीय किसान को इसकी जरूरत और भी बढ़ जाती है। क्योंकि उसके पास खेत आर्थिक जोत के नहीं हैं। किसान की आय इतनी कम होती है कि कृषि पर अस्थाई सुधार करने के लिए या नया खेत खरीदने के लिए रुपया बचाना तो दूर रहा वह दैनिक खेती के कार्यों के लिए भी कर्ज लेकर ही काम चलाता है एफ0 निकलसन के अनुसार–''जिन कार्यों के लिए किसान ऋण लेता है वे ये है खेती के चालू खर्चे जैसे बीज, खाद खरीदने के लिए नई भूमि खरीदने के लिए सीचने,निराने, व रोपने के लिए, बैल औजार तथा कच्चा माल खरीदने के लिए, खाद्यान्न तथा अन्य उपयोगी सामान खरीदने के लिए, सरकार को मालगुजारी देने के लिए आभूषण के लिए, तथा मुकदमे बाजी के लिए।

गांव में निवास करने वाले किसानों को अनेकों उद्देश्यों के लिए ऋण की जरूरत पड़ती है। ऋण को जरूरत के अनुसार निम्नलिखित वर्गों में बांटा जा सकता है।

1. ऋण की जरूरत की कोटि के अन्तर्गत उत्पादन उपज को बेंचने बीज यंत्र खरीदने, मजदूरी एवं लगान का भुगतान करने को कुए खुदवाने, पम्पसेट लगवाने, आदि के लिए ऋण की जरूरत पड़ती है। यह ऋण उत्पादन के तमाम गतिविधियों से संबंधित होते हैं अतः इन्हें उत्पादक ऋण कहा जा सकता है।
2. फसल की बुवाई से लेकर उसकी बिक्री तक किस समय में किसान को अपनी जरूरतों को पूरा करने हेतु ऋण की आवश्यकता पड़ती है इस प्रकार के कर्ज को उपभोग रीड कहा जा सकता है
3. इस तरह के ऋण के अंतर्गत लोग अपने सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कर्ज लेते है। जैसे : आभूषण बनवाने, मुकदमा लड़ने, जन्म–मृत्यु तथा अन्य सामाजिक और धार्मिक रीति–रिवाजों को पूरा करने के लिए कर्ज लेते हैं। इन ऋणों का संबंध उत्पादन से नहीं होता है।

उपर्युक्त समस्त प्रकार के ऋणों को पाने के लिए हमारे देश में विशेष व्यवस्था का अभाव है। आज भी कहने को तो इस लिए अनेक साधन गिनाए जाते हैं लेकिन, गांव का महाजन ही इसके लिए एकमात्र स्रोत है।

---

* शोध छात्रा, टी. डी. पी. जी. कॉलेज जौनपुर उत्तर प्रदेश

सूक्ष्म वित्त के स्रोतः– कृषि ऋण से सम्बन्धित सूक्ष्म वित्त के स्रोतों को दो भागों में बांटा जा सकता है। गैर संस्थागत एवं संस्थागत संस्थाए।

1.गैर संस्थागत संस्थाएंः– इसके अंतर्गत ग्रामीण साहूकार या महाजन व्यापारी एवं कमीशन एजेण्ट मित्र एवं संबंधी आदि को सम्मिलित किया जा सकता है।

2.संस्थागत संस्थाएं:– इसके अंतर्गत प्रमुख संस्थागत संस्थाएं–साधन सहकारी समितियाँ भूमि विकास बैंक, व्यापारिक बैंक, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, नाबार्ड आदि है।

सहकारी संस्थाएं:– सहकारी संस्थाएं समितियां सूक्ष्म वित्त की महत्वपूर्ण साधन है। कृषि वित्त का लगभग 40% भाग सहकारी समितियों द्वारा पूरा किया जाता है। भारत में इसका त्रिस्तरीय ढांचा है ग्रामीण स्तर पर प्राथमिक सहकारी समितियाँ जनपद स्तर पर जिला सहकारी बैंक और राज्य स्तर पर राज्य सहकारी बैंक कार्य कर रहे हैं। यह संस्थाएँ लोगों को सूक्ष्म वित्त की सुविधाएं प्रदान करती हैं।

भूमि विकास बैंक या भूमि बन्धक बैंक:– यह बैंक भूमि की गारंटी पर लोगों को ऋण प्रदान करते हैं। इनका उद्देश्य राज्य की सन्तोषजनक नीति को दूर करना है। यह बैंक दिए गए ऋण की ब्याज दर को कम कर के उत्पादन उपायों को किसानों तक पहुंचाते हैं। यह बैंक लोगों को दीर्घकालीन ऋण उपलब्ध करवाते हैं।

व्यापारिक बैंक:– बैंकों के राष्ट्रीयकरण से पूर्व लोगों को ऋण देने में व्यापारिक बैंकों का सहयोग महत्वपूर्ण नहीं था। सन् 1969 में 14 और सन् 1980 में 6 बैंकों का राष्ट्रीयकरण हो जाने के बाद कृषि वित्त में इन बैंकों का योगदान बढ़ गया है। मार्च 2004 के अंत में इन सभी व्यापारिक बैंकों के 18991 हजार खातों में कृषि वित्त के रूप में 84435 करोड़ रुपया बकाया थे। जबकि जून 1969 के अन्त में इन बैंकों के 164000 खातों के रूप में 162 करोड़ रुपया बकाया था। व्यापारिक बैंकों ने वर्ष 2008–09 में 2,02856 करोड़ रुपए का ऋण वितरित किया गया था। जून 2008 को संपूर्ण देश में व्यापारिक बैंक की कुल शाखाओं संख्या 76,885 थी। जिसमे 31,210 शाखाएं ग्रामीण क्षेत्रों में थी। इस प्रकार देश की कार्यशील बैंकों में 40.59% शाखाएं ग्रामीण क्षेत्रों में थी।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक:– इन बैंकों की स्थापना का प्रमुख उद्देश्य ग्रामीण गरीबी को दूर करना, खेतिहर, मजदूर, लघु एवं सीमांत किसानों तथा अन्य ग्रामीण कारीगरों को वित्तीय जरूरतों को पूरा करना है। 30 जून 2005 की समाप्ति तक देश में कुल 197 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक थे तथा इनकी 14497 शाखाएं थी। इन बैंकों द्वारा कृषि दिए गए ऋण की मात्रा वर्ष 2001–2002 में 4854 करोड़ रुपया और वर्ष 2006 में 11146 (लगभग अनुमानित) करोड़ रूपया थी।

राष्ट्रीय कृषि ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड):– देश में कृषि एवं ग्रामीण कार्यों की वित्त व्यवस्था का पहले भी अभाव था और आज भी है।, इस अभाव के कारण भारत में कृषि का बहुत कम विकास हो पाया है। सन 1947 के बाद से ही स्थाई और चालू पूंजी को कृषि में लगाने की जरूरत को लेकर विद्वानों, योजना बनाने वाले और सरकार के लिए एक बहस का मुद्दा रहा है और आज भी है।

नाबार्ड संगठित ग्रामीण ऋण के ढांचे में एक शीर्षस्थ संस्था के रूप में अपनी भूमिका को ध्यान में रखते हुए अनेक वित्तीय संस्थाओं को पुनर्वित्त सुविधाएं प्रदान करता है। जो ग्रामीण क्षेत्रों में उत्पादक गतिविधियों के विस्तृत क्षेत्रों को बढ़ावा देने के लिए ऋणमित्र देती है। नाबार्ड समय–समय पर उपयुक्त नीतियों और परिचालन सम्बन्धी व्यवसाय प्रदान करता है। इस व्यवस्था से ग्रामीण वित्त प्रणाली को बढ़ावा दिया जाये और ग्रमीण विकास की गति को बढ़ाया जा सके एवं ग्रामीण विकास के लिए ऋण प्रवाह को पूरा किया जा सके। अपनी वित्त सम्बन्धी जरूरतों से वित्त प्राप्त करता है। नाबार्ड केन्द्र सरकार की गारण्टी प्राप्त बॉण्ड और ऋण पर जारी करके भी संसाधन एकत्रित कर सकता है इसके अलावा यह राष्ट्रीय ग्रामीण साख (स्थिरीकरण) निधि में संसाधनों के भी प्रयोग करता है।

उपर्युक्त समस्त जरूरतों को पूरा करने के लिए कृषि पुनर्वित्त और विकास निगम (Agriculture Retincance and Development Corporation -ARDC) की स्थापना की गयी। इसके बाद इस संस्था के स्थान पर 12 जुलाई 1982 को राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक

(नाबार्ड)(National Bank for Agriculture And Rual Development-NABARD) की स्थापना की गयी। नाबार्ड ने 15 जुलाई 1982 से अपना कार्य प्रारम्भ कर दिया । इसका मुख्यालय मुम्बई में है।इसके चार जोनल कार्यालय और प्रत्येक राज्य में क्षेत्रीय कार्यालयों की स्थापना की गई है।

उद्देष्यः– नाबार्ड का उद्देश्य कृषि,ग्रामीण लघु एवं कुटीर उघोगों,दस्तकारी एवं ग्रामीण कला के विकास के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करना है। जो इस प्रकार है–

1. बैंकिग प्रणाली द्वारा कृषि विकास के लिए शीर्ष पुनर्वित्त संस्था का कार्य करना।
2. विकास बैंक की प्रभावशाली भूमिका निभाना।
3. नाबार्ड द्वारा समस्त ग्रामीण विकास के लिए रूपया उधार देने के कार्य का विकेन्द्रीकरण का किया करना।
4. पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत ग्रामीण विकास के कार्य को तेजी से विकसित करना।
5. पिछडे तथा अविकसित क्षेत्रों के विकास के लिए अधिक धन देकर कृषि में क्षेत्रीय असमानताओं को घटाना।
6. विशेष रूप से छोटे किसानों को अर्थिक सहायता प्रदान करना।
7. व्यापारिक बैंकों को पुनर्वित्त प्रदान करके उनकी वित्तीय कमी को पूरा करना।
8. व्यापारिक बैंकों को कृषि तथा ग्रामीण विकास के लिए ज्यादा धन प्रदान करने के लिए प्रेरित करना।
9. विभिन्न बैंको के कर्मचारियों को प्रशिक्षण देना।
10. कृषि में ऋण देने के बारे में बैंक अधिकारियों को तकनीकि जानकारी देना।

किसान क्रेडित कार्ड योजना :– यह योजना 1998–99 में प्रारम्भ की गयी। इसमें अच्छी साख वाले किसान को कृषि कार्ड जारी किया जाता है। जिन किसानों के पास यह कार्ड होते हैं, उन्हे सम्बन्धित बैंक से उत्पादन ऋण तत्काल प्राप्त हो जाते है। उन किसानों के लिए आवेदन देने,भूमि सम्बन्धी रिकार्ड प्रस्तुत करने,प्रमाण–पत्र देने और अन्य दस्तावेजो को प्रस्तुत करने की जरूरत नही होती है।

अग्रणी बैंक योजना :– इस योजना के अन्तर्गत 1 अप्रैल 1989 को ग्रामीण वित्त की नयी नीति के अनुसार व्यापारिक बैंको और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की ग्रामीण और अर्द्ध शहरी शाखाओं को विशेष क्षेत्र सौपे गये हैं। उन्हें इस क्षेत्रों के आर्थिक विकास के लिए ऋण योजनायें तैयार करनी हैं। इस नीति को निम्नलिखित दशाओं मे लागू किया जायेगा।

1. ग्रमीण और अर्द्धशहरी क्षेत्रों के लिए सेवा क्षेत्र की पहचान।
2. सेवा क्षेत्र का सर्वेक्षण किया जायेगा।
3. इसका उद्देश्य बहुद्देषीय क्रियाओं के लिए उधार क्षमता का अनुमान लगाना और लाभाथियों की पहचान करना आदि है।
4. वार्षिक आधार पर योजनाएं तैयार करना आदि।

स्वयं सहायता समूह (S.H.G.) बैंक लिकेज कार्यक्रमः–यह कार्यक्रम मुख्यतया उन गरीबों पर आधारित है,जिनकी औपचारिक बैंकिग प्रणाली तक कोई मजबूत पॅहुच नहीं है।अतःइसके लक्ष्य समूह में आमतौर पर लघु एवं सीमान्त किसान,खेतिहर और गैर खेतिहर मजदूर,कारीगर–दस्तकार तथा खोमचे फेरी आदि जैसे–छोटे कारोबार मे लगे अन्य निर्धन शामिल हैं।

सूक्ष्म वित्त के सम्बन्ध में सुझावः–सूक्ष्म वित्त की कमी शताब्दियों से भारतीय कृषि के लिए अभिशाप रही है। ग्रामीण गरीब घरेलू जरूरतों के कारण जमींदारों,साहूकारों,महाजनों आदि से उँची व्याज दर पर कर्ज लेने को मजबूर रहा है। फलस्वरूप इन लोगो का क्रूर शिकंजा गरीबों पर कसता गया। यह लोग ग्रामीण ऋण ग्रस्तता की भयंकर बीमारी के शिकार होते चले जा रहे है।इस सम्बन्ध में शाही कृषि आयोग(1968) ने अपनी रिपोर्ट में लिखा है कि भारतीय किसान ऋण में जन्म लेता है ऋण में ही बड़ा होता है, ऋण में ही मर जाता और ऋण अपनी संततियो को विरासत में छोड़ जाता है।

गैर संस्थागत ग्रामीण ऋण ग्रस्तता की जड़ता को तोड़ने के उद्दश्य से तत्कालीन प्रधानमंत्री स्व0 इन्द्रिरा गॉधी ने वर्ष 1969 में 14 व्यापारिक बैंको को राष्ट्रीयकृत करने का एक

साहसिक, क्रान्तिकारी व ऐतिहासिक निर्णय लिया। शहरोन्मुखी मानसिकता के धनी ये बैंक ग्रामीणों की जरूरतों को पूरा करने में असफल रहे। उधर सहकारिता आन्दोंलन अकुशल अनियमित वेतन रहित सेवा,कुप्रबन्धन,अप्रतिबद्धता,लापरवाही,खराब,ऋण वसूली,भाई–भतीजेवा, और स्थानीय राजनीति का शिकार हो गये।

जैसा कि पूर्व में उल्लेख किया गया है कि लोगों के वित्तीय मांग को देखते हुए यह संपूर्ण व्यवस्था पर्याप्त है। अतः इस संबंध में निम्नलिखित सुझाव दिए जा सकते है।

1. सहकारी साख संस्थाओं के पूंजीगत संस्थानों में बढ़ोतरी की जाए, जिससे वह लोगों की वित्तीय आवश्यकताओं को ज्यादा मात्रा में पूरा कर सके।
2. इन संस्थाओं के प्रबंध प्रणाली व्यवस्था के लिए कुशल एवं कर्मठ व्यक्ति को नियुक्त किया जाए।
3. उपज ऋण प्रणाली प्रथा को प्रोत्साहित किया जाय।
4. सरकारी ऋण को लोकप्रिय बनाने के लिए तकावी पद्धति को आसान बनाया जाए।
5. व्यापारिक बैंकों और राज्य बैंकों को रिजर्व बैंक द्वारा कम ब्याज पर ऋण उपलब्ध कराया जाय।
6. सहकारी साख संस्थाओं एवं विवरण समितियों में उचित संबंध की व्यवस्था की जाए
7. एक जनपद के लिए एक ही केंद्रीय सहकारी बैंक हो और जिला सहकारी बैंक का पुनर्गठन किया जाए
8. व्यापारिक बैंक गांव में शाखाएं खोलने में रुचि लें, इसके साथ ही गरीब लोग को अधिक से अधिक ऋण देने में भी रूचि लें।
9. लोगों को वित्त प्रदान करने वाले विभिन्न संस्थाओं में उचित समन्वय स्थापित किया जाए
10. साहूकारों के शोषण से लोगों से बचाने के लिए उनके गलत क्रियाकलापों पर रोक लगाई जाए।

संदर्भ :

1.	आर्थिक विकास के सिद्धांत	डॉ. रेणु त्रिपाठी
2.	कृषि अर्थशास्त्र के सिद्धांत एवं भारत–	डॉ. के. एन. जोशी एवं
3.	में कृषि विकास	डॉ. मंजुला मिश्रा
4.	ग्रामीण अर्थशास्त्र	डॉ. बी एल माथुर
5.	कृषि अर्थशास्त्र	डॉ पी. के. गुप्त
6.	कृषि अर्थशास्त्र	डॉ. शिवभूषण गुप्त
7.	भारतीय अर्थव्यवस्था	डॉ. एन.सी. त्रिपाठी एवं एस.एन. सिंह
8.	श्रम अर्थशास्त्र	डॉ. वी. सी. चिन्हा
9.	कृषि अर्थषास्त्र	प्रो. हरसरन दास
10.	भारतीय अर्थव्यवस्था	डॉ. जे. पी. मिश्र
11.	आर्थिक समीक्षा –	2015–016, 2018–019

***

जनपद औरैया (उत्तर प्रदेश) में सस्य-गहनता एवं सिंचाई - गहनता सहित उनकी सापेक्षता के स्थानिक वितरण-प्रतिरूप

*डॉ. पूनम मिश्रा**

यह एक सर्वमान्य तथ्य है कि साधन और संसाधन सम्पन्न क्षेत्रों के उपयुक्ततम विकास के लिए भी समय–समय पर उनकी समीक्षा किया जाना एक लाभप्रद प्रक्रिया का स्वरूप होता है। समीक्षात्मक प्रक्रिया से साधन और संसाधनों की वास्तविक स्थिति का तो ज्ञान होता ही है वरन् उनके सुधार का मार्ग भी प्रशस्त होता है तथा संसाधनों के उपयुक्ततम प्रयोग की दशा भी स्पष्ट होती है और साथ ही साथ साधन और संसाधनों के वांछित विकास के नियोजन की दिशा भी सुनिश्चित करने में सहायता प्राप्त होती है। औरैया जनपद मध्य उत्तर प्रदेश के दक्षिणी पश्चिमी भाग में अवस्थित कृषि साधन और संसाधनों से सम्पन्न क्षेत्र है। अतः उपर्यक्त दृष्टिकोण को ध्यानगत रखते हुए औरैया जनपद की कृषि विषयक समस्या को लेकर सस्य–गहनता व सिंचाइ– गहनता तथा उनकी सापेक्षता के स्थानिक वितरण प्रतिरूपों का विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

समंक एवं समंक स्रोत

प्रस्तुत शोध–पत्र में द्वैतीयक आँकड़ों का प्रयोग किया गया है। कृषि सम्बन्धी आँकड़ें सांख्यिकीय पत्रिका जनपद औरैया[1] से प्राप्त किये गये हैं। शेष पाठ्य–सामग्री सम्बन्धी जानकारी प्रस्तुत समस्या से सन्दर्भित शोध–ग्रन्थों, शोध–पत्रों तथा विभिन्न सन्दर्भ ग्रन्थों से संकलित की गयी है। औरैया जनपद की अवस्थिति[2] तथा विकास खण्डवार जनपद के मानचित्र[3] विभिन्न सन्दर्भित अभिलेखों से प्राप्त किये गये हैं।

विधि–तन्त्र

प्रस्तुत शोध–पत्र की निर्मिती में जिन विधि–तान्त्रिक क्रियाओं का अनुगमन किया गया है उनका क्रमवार विवरण निम्नलिखित रूप में दृष्टव्य है।

(i) वर्ष 2019–20 के लिए शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल, सकल बोया गया क्षेत्रफल, शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल तथा सकल सिंचित क्षेत्रफल का आँकड़ा विकास खण्डवार, सकल ग्रामीण एवं सकल नगरीय क्षेत्रों के लिए तालिका बद्ध किया गया है।

(ii) विकास खण्डवार ग्रामीण क्षेत्रों के लिए सकल बोये गये क्षेत्रफल एवं शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल की सापेक्षतानुसार प्रमाणिक सूत्र का प्रयोग कर सस्य–गहनता का परिकलन किया गया है।[4]

(iii) विकास खण्डवार सस्य–गहनता की भाँति ही कुल सिंचित क्षेत्रफल एवं शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल की सापेक्षतानुसार प्रामाणिक सूत्र का प्रयोग कर सिंचाई–गहनता का प्रयोग किया गया है।

(iv) सस्य–गहनता के सापेक्ष सिंचाई–गहनता की स्थिति के आधार पर विकास खण्डवार सापेक्षता सूचकांक (Relativity Index) परिकलित किया गया है।

(v) सस्य–गहनता, सिंचाई–गहनता तथा सापेक्षता–सूचकांक के विकास खण्डवार स्थानिक विवरण के स्तरों का निर्धारित विभाज्यमान मूल्य विधि की पंचमांशीय तकनीक (Pentiling Technique) के आधार पर किया गया है।[5]

(vi) विकास खण्डवार स्थानिक विवरण के स्तरों का मानचित्र में प्रदर्शन वर्णमात्री विधि (Choropleth Method) द्वारा किया गया है।[6]

अध्ययन क्षेत्र

प्रस्तुत शोध–पत्र का अध्ययन क्षेत्र जनपद औरैया मध्य उत्तर प्रदेश के दक्षिणी–पश्चिमी भाग में अवस्थित है। जनपद औरैया की स्थापना 1997 में जनपद इटावा के पूर्वी भाग को अलग कर की

* असिस्टेन्ट प्रोफेसर (भूगोल), ज्वाला देवी विद्या मन्दिर परास्नातक महाविद्यालय (छत्रपति शाहूजी महाराज विश्वविद्यालय), कानपुर (उत्तर प्रदेश) भारत।

गयी थी इसके पूरब में जनपद रमाबाई नगर (कानपुर देहात), पश्चिम में जनपद इटावा, उत्तर में जनपद कन्नौज तथा दक्षिण में जनपद जालौन (चित्र–1ए) अवस्थित है। यहाँ की जलवायु उपोष्णार्द्र (Humid sub-tropical) है वार्षिक वर्षा का औसत 792 mm है वर्ष 2019–20 के लिए उपलब्ध आँकड़ों के आधार पर जनपद औरैया का सकल प्रतिवेदित क्षेत्रफल 201626 हेक्टेयर (2021.26 वर्ग कि0मी0) है जिसका 99.79 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्र है। जनपद की 2011 की जनगणनानुसार अध्ययन क्षेत्र की जनसंख्या 1372287 व्यक्तियों की है जिसमें 53.66 प्रतिशत पुरुष जनसंख्या है। जनपद की 83.3 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण जनसंख्या है। यहाँ का लिंगानुपात 864 तथा साक्षरता दर 80.25 प्रतिशत है।

जनपद औरैया कृषि प्रधान क्षेत्र है। इसके प्रतिवेदित क्षेत्रफल का 69.83 प्रतिशत भाग शुद्ध सस्य–क्षेत्रफल है तथा शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल 62.78 प्रतिशत है। जनपद में सिंचाई के लिए 808 किमी0 नहरों की लम्बाई है तथा सरकारी एवं प्राइवेट नलकूपों/पम्पिंग सेटों की संख्या क्रमशः 358 व 43730 है। जनपद में कुल ग्रामों की सख्या 841 है जिनमें से 709 ग्राम आबाद है तथा शत–प्रतिशत विद्युतीकृत है। जनपद में 9 नगर अधिवास है। सम्पूर्ण जनपद में गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों की संख्या 69780 है जिनमें 2680 परिवार नगरीय हैं।

सुरक्षा व्यवस्था के लिए जनपद में 11 पुलिस थाने हैं जिनमें से 4 ग्रामीण क्षेत्र में हैं। जनपद में 52 राष्ट्रीयकृत बैंक शाखाओं के साथ कूल सभी तरह के बैंकों की संख्या 112 है। पत्राचार की सुविधा के लिए 156 डाकघर, चिकित्सा सुविधा के लिए विभिन्न प्रकार के 33 अस्पताल तथा 198 विभिन्न प्रकार के सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र और उपकेन्द्र अवस्थित हैं।

शिक्षा संस्थाओं के नेटवर्क में जनपद में 1253 प्राथमिक पाठशालायें, 850 उच्च प्राथमिक पाठशालायें, 288 माध्यमिक विद्यालय, 66 महाविद्यालय, 17 स्नातकोत्तर महाविद्यालय, 12 औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान (ITI), 2 पालीटेक्नीक तथा एक शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान (DITE) हैं। जनपद में विभिन्न प्रकार के 20 कारखाने हैं। पविहन परिदृश्य की सुविधाओं में जनपद में 110 बस स्टेशन एवं स्टाप सहित सड़कों की लम्बाई 2972 कि0मी0 है। जनपद में गुजरती हुई रेलवे लाइन की लम्बाई 31 कि0मी0 है, जिस पर 6 रेलवे स्टेशन अवस्थित हैं। राजनीतिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था के अन्तर्गत जनपद में 3 विधान सभा, 7 तहसीलें, 7 सामुदायिक विकास खण्ड, 75 न्याय पंचायतें तथा 477 ग्राम पंचायतें हैं।

सस्य–गहनता

संकल्पना

सस्य–गहनता का सम्बन्ध एक ही खेत में वर्ष में उत्पन्न की जाने वाली फसलों की संख्या के क्षेत्रफल से है। यदि किसी प्रक्षेत्र (Field) में वर्ष पर्यन्त एक ही फसल पैदा होती है तो वहाँ का शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल तथा कुल बोया गया क्षेत्रफल बराबर होगा और वहाँ की सस्य–गहनता शत–प्रतिशत होगी ''किसी भी क्षेत्र में शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल की अपेक्षा सकल सस्य– क्षेत्रफल का अधिक होना सस्य–गहनता की मात्रा को प्रदर्शित करता है।''[7] सस्य–गहनता का तात्पर्य एक ही खेत में एक ही वर्ष में एक से अनेक फसलें पैदा करने में प्रयुक्त सस्य–क्षेत्रफल से होता है।[8] प्रस्तुत शोध–पत्र में सस्य– गहनता की गणना निम्नलिखित सूत्र के आधार पर की गयी है :–

$$Ci = \frac{GCA}{NCA} \times 100$$

जबकि,

ci = Cropping Intensity (सस्य–गहनता)

GCA = Gross Cropped Area (सकल सस्य–क्षेत्रफल)

NCA = Net Cropped Area (शुद्ध सस्य–क्षेत्रफल)

शुद्ध सस्य–क्षेत्रफल

शुद्ध सस्य–क्षेत्रफल (NCA) से तात्पर्य है कि कितना एक बार में बोया गया फसल क्षेत्रफल (Net Aea Sown-NAS) है। प्रदत्त आँकड़ों के अनुसार (परिशिष्ट I) में औरैया जनपद का शुद्ध सस्य–क्षेत्रफल वर्ष 2019–20 में 143939 हेक्टेयर था जिसमें ग्रामीण क्षेत्र का शुद्ध सस्य–क्षेत्रफल 143827 हेक्टेयर (99.92%) रहा तथा मात्र 112 हेक्टेयर (0.08%) नगरीय क्षेत्र में था। विकास खण्ड औरैया में सर्वाधिक शुद्ध सस्य–क्षेत्रफल (24542 हेक्टेयर) है जो विकास खण्ड में प्रतिवेदित (Reporting) क्षेत्रफल (41185 हेक्टेयर) का 66.97 प्रतिशत तथा जनपद के सकल शुद्ध सस्य–क्षेत्रफल (143939 हे0) का 19.16 प्रतिशत है। जनपद के विकास खण्डों में सबसे कम शुद्ध सस्य–क्षेत्रफल वाला विकास खण्ड अजीतमल है जिसका शुद्ध सस्य–क्षेत्रफल 15027 हेक्टेयर है अपने प्रतिवेदित क्षेत्रफल (22131 हे0) का 67.90 प्रतिशत है और जनपद के सकल शुद्ध क्षेत्रफल का 10.44 प्रतिशत भाग है।

सकल सस्य–क्षेत्रफल

सकल बोये गये क्षेत्रफल (Gross Cropped Area Sown) को ही हम सकल सस्य–क्षेत्रफल कहते हैं। जनपद औरैया का वर्ष 2019–20 में सकल सस्य–क्षेत्रफल, प्रदत्त आँकड़ों (परिशिष्ट I) के अनुसार 250597 हेक्टेयर रहा है जिसका 99.92 प्रतिशत (250409 हेक्टेयर) भाग ग्रामीण क्षेत्र में तथा मात्र 0.08 प्रतिशत (188 हे0) नगरीय क्षेत्र में रहा है। जनपद का सकल सस्य–क्षेत्रफल प्रतिवेदित क्षेत्रफल का 121.57 प्रतिशत है।

विकास खण्डों में सर्वाधिक सकल सस्य–क्षेत्रफल 42441 हे0 भी औरैया विकास खण्ड में ही है जो अपने प्रतिवेदित क्षेत्रफल का 103.05 प्रतिशत भाग है तथा जनपद के सकल सस्य–क्षेत्रफल का 16. 94 प्रतिशत है। जनपद में सबसे कम सकल सस्य–क्षेत्रफल (27133 हे0) अजीतमल विकास खण्ड का है जो अपने प्रतिवेदित क्षेत्रफल का 122.60 प्रतिशत तथा जनपद के सकल सस्य–क्षेत्रफल का 10.83 प्रतिशत है।

सस्य–गहनता

जनपद औरैया के वर्ष 2019–20 के प्रदत्त आँकड़ों के विश्लेषण (परिशिष्ट I तथा तालिका–1) के अनुसार सकल जनपद, ग्रामीण क्षेत्र, नगरीय क्षेत्र तथा विकास खण्डवार सस्य–गहनता का परिकलन निर्दिष्ट सूत्र [Ci = (GCA/NCA) x 100] का प्रयोग करते हुए किया गया है।

तालिका–1

विकास खण्डवार सस्य–गहनता (Cropping Intensity) सिंचाई–गहनता (Irrigation Intensity) तथा उनका सापेक्षता–सूचकांक (Relativity Index) जनपद औरैया, वर्ष 2019–20

क्रमांक	सामुदायिक विकास खण्ड	सस्य–गहनता (Ci) (%)	सिंचाई–गहनता (Ii) (%)	सस्य–गहनता एवं सिंचाई–गहनता सापेक्षता –सूचकांक (RI)	अभ्युक्ति
1	2	3	5	5	6
1.	एरवाकटरा	180.59	187.48	0.96	Ci = (GCA/NCA) x 100 Ii = (GIA/NIA) x 100 AI = Ci / Ii Ci = सस्य–गहनता GCA =सकल सस्य–क्षेत्रफल NCA = शुद्ध सस्य–क्षेत्रफल Ii = सिंचाई–गहनता Gia =सकल सिंचित क्षेत्रफल NIA = शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल
2.	बिधूना	179.62	167.91	1.03	
3.	अछल्दा	198.42	174.98	1.03	
4.	सहार	174.33	157.44	1.11	
5.	अजीतमल	180.56	179.17	1.04	
6.	भाग्यनगर	177.69	120.85	1.47	
7.	औरैया	153.87	118.70	1.30	
सकल ग्रामीण क्षेत्र		174.10	165.14	1.05	
सकल नगरीय क्षेत्र		167.86	173.02	0.97	

सकल जनपद	174.10	165.76	1.05	RI = सापेक्षता सूचकांक

तालिका–1 से स्पष्ट है कि जनपद औरैया की वर्ष 2019–20 में सस्य–गहनता 174.10 प्रतिशत है जबकि सकल ग्रामीण क्षेत्र की सस्य–गहनता भी 174.10 प्रतिशत परिकलित हुई है क्योंकि सकल ग्रामीण क्षेत्र का सकल सस्य–क्षेत्रफल तथा शुद्ध सस्य–क्षेत्रफल जनपद के सापेक्ष 99.92 प्रतिशत भाग है और मात्र 0.08 प्रतिशत भाग पर सकल नगरीय क्षेत्र का सकल सस्य–क्षेत्रफल तथा शुद्ध सस्य–क्षेत्रफल वितरित है।

जनपद के अछल्दा विकास खण्ड की सस्य–गहनता (198.42 प्रतिशत) सर्वाधिक है जबकि न्यूनतम सस्य–गहनता (153.87 प्रतिशत) औरैया विकासखण्ड में परिकलित हुई है। इससे स्पष्ट होता है कि जनपद के विकास खण्डों की सस्य–गहनता 153.87 प्रतिशत से लेकर 198.42 प्रतिशत के मध्य होने के फलस्वरूप जनपद एक कृषि प्रधान एवं समुन्नत कृषि कार्यकरण वाला क्षेत्र कहा जा सकता है।

सस्य–गहनता के स्तर

प्रदत्त समंक तथा परिकलित समंक (परिशिष्ट–1) के आधार पर वर्ष 2019–20 के लिए विकास खण्डवार (जनपद औरैया) विभाज्यमान मूल्य विधि (Partitioned Value Method) की पंचमांशन तकनीक (Pentiling Technique)[9] का प्रयोग करते हुए, सस्य–गहनता के स्तरों का परिकलन किया गया है जिनका चित्रण, मानचित्र (चित्र–1सी) में प्रदर्शित है। सस्य–गहनता स्तरों की सीमा–निर्धारण के बाद विकास खण्डवार जनपद के मानचित्र में वर्णमात्री विधि (Choropleth Method)[10] का प्रयोग करते हुए सस्य–गहनता के स्थानिक विवरण के स्तरों का चित्रण किया गया है।

प्रस्तुत मानचित्र से स्पष्ट है कि अछल्दा विकासखण्ड में सस्य–गहनता का स्तर उच्च (High) है जबकि औरैया विकास में सस्य–गहनता का स्तर निम्न (Low) है। मध्यम स्तर की सस्य–गहनता एरवाकटरा, अजीतमल तथा भाग्यनगर विकास खण्डों में परिलक्षित है। शेष दो विकासखण्ड बिधूना तथा सहार की सस्य–गहनता मध्य निम्न सतर की परिकलित हुई है। सारांशतः मानचित्र (चित्र–1सी) से स्पष्ट है कि विकासखण्ड औरैया, सहार और बिधूना में सस्य–गहनता में वृद्धि के प्रयास अपेक्षित हैं।

सिंचाई–गहनता

संकल्पना

सस्य–गहनता की भाँति ही सिंचाई–गहनता का परिकलन किया जाता है। सिंचाई–गहनता के द्वारा सकल–सस्य सिंचित क्षेत्रफल तथा शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल का अनुपातिक मूल्य प्रतिशत में ज्ञात किया जाता है। जिसके लिए प्रयुक्त सूत्र निम्नलिखित है :

$$Ii = \frac{GIA}{ANIA} \times 100$$

जबकि,

Ii = सिंचाई–गहनता (Irrigation Intensity)

GIA = सकल सिंचित क्षेत्रफल (Gross Irrigated Area)

NIA = शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल (Net Irrigated Area)

शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल

वर्ष 2019 के आँकड़ों के अनुसार (परिशिष्ट I) जनपद औरैया में शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल 129400 है0 है जो कुल प्रतिवेदित क्षेत्रफल का 62.78 प्रतिशत है। जनपद का 99.95 प्रतिशत (129337 हे0) ग्रामीण क्षेत्र में पड़ता है। जनपद के विकास खण्डों में सर्वाधिक शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल (21964 हे0) बिधूना विकासखण्ड में पड़ता है जो अपने प्रतिवेदित क्षेत्रफल का 66.60 प्रतिशत भाग है और जनपद के शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल के 16.97 प्रतिशत के बराबर है। विकासखण्ड अजीतमल में न्यूनतम शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल (15042 हे0) है जो अपने प्रतिवेदित क्षेत्रफल का 67.97 प्रतिशत है तथा जनपद के शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल के 11.62 प्रतिशत भाग के बराबर है। इससे स्पष्ट है कि जनपद के प्रतिवेदित

क्षेत्रफल के 62.78 प्रतिशत भाग पर सिंचाई की सुविधा है अर्थात् जनपद में अभी भी सिंचाई की सार्थक सुविधा व्यवस्था की आवश्यकता है।

सकल सिंचित क्षेत्रफल

जनपद औरैया के वर्ष 2019–20 के उपलब्ध आँकड़ों एवं उनके परिकलित परिणामों (परिशिष्ट I) के अनुसार स्पष्ट है कि जनपद में सकल सिंचित क्षेत्रफल 214687 हेक्टेयर है जो जनपद के प्रतिवेदित क्षेत्रफल के 104.06 प्रतिशत भाग के बराबर है। जनपद के ग्रामीण क्षेत्र का सकल सिंचित क्षेत्रफल 214578 हेक्टेयर है जो जनपद के सकल सिंचित क्षेत्रफल 99.95 प्रतिशत है और नगरीय क्षेत्र में मात्र 109 हेक्टेयर (0.05 प्रतिशत) सकल सिंचित क्षेत्रफल है।

जनपद के विकास खण्डों में सर्वाधिक सकल सिंचित क्षेत्रफल अछल्दा विकासखण्ड में है जो 3695 हेक्टेयर है और अपने प्रतिवेदित क्षेत्रफल के 115.20 प्रतिशत भाग के बराबर है और जनपद के सकल सिंचित क्षेत्रफल का 17.21 प्रतिशत भाग है। जनपद के औरैया विकासखण्ड में न्यूनतम सकल सिंचाई क्षेत्रफल है जो 21985 हेक्टेयर है और अपने प्रतिवेदित क्षेत्रफल के 53.38 प्रतिशत भाग के बराबर है और जनपद के सकल सिंचित क्षेत्रफल के 10.24 प्रतिशत भाग के बराबर है।

सिंचाई–गहनता

जनपद औरैया के वर्ष 2019–20 के उपलब्ध आँकड़ों के फलस्वरूप प्राप्त परिणामों के आधार पर परिशिष्ट I तथा तालिका–1 में सिंचाई–गहनता के समंक अंकित किय गये है। इसके लिए निर्दिष्ट सूत्र [Ii = (GIA/NIA) x 100] का प्रयोग करते हुए विकासखण्डवार सिंचाई–गहनता परिकलित की गई है।

तालिका 1 से स्पष्ट है कि जनपद औरैया में सिंचाई–गहनता 165.76 प्रतिशत है जबकि जनपद के ग्रामीण क्षेत्र की सिंचाई–गहनता 165.14 प्रतिशत है तथा नगरीय सिंचाई–गहनता 173.62 प्रतिशत है। जनपद के कुल सात विकासखण्डों में अधिकतम सिंचाई–गहनता (187.48 प्रतिशत) एरवाकटरा विकास खण्ड की है जबकि न्यूनतम सिंचाई–गहनता (118.70 प्रतिशत) औरैया विकास खण्ड में अभिज्ञापित हुई है।

सिंचाई–गहनता के वितरण स्तर

सिंचाई–गहनता के परिकलित समंकों (तालिका–1 तथा परिशिष्ट–I) को विभाज्यमान मूल्य विधि की पंचमांशन तकनीक (Pentiling Technique of Partitioned Value Method)[11] का प्रयोग करके सिंचाई–गहनता के स्थानिक वितरण के स्तरों की सीमायें ज्ञात करके उनके स्तर निर्धारित किये गये हैं तथा वर्णमात्री मानचित्र कला (Cartography) की वर्णमात्री विधि (Choropleth Method)[12] का प्रयोग कर मानचित्र (चित्र–1डी) पर स्थानिक वितरण स्तरों को प्रदर्शित किया गया है।

प्रस्तुत मानचित्र (चित्र–1डी) से स्पष्ट है कि एरवाकटरा विकास खण्ड में सिंचाई–गहनता का वितरण स्तर उच्च है जिसकी सिंचाई–गहनता 177 प्रतिशत से अधिक है। भाग्यनगर और औरैया विकास खण्ड निम्न सिंचाई–गहनता के वितरण स्तर में पड़ते हैं जिनकी सिंचाई–गहनता 124 प्रतिशत से कम है। अछल्दा तथा अजीतमल ऐसे विकास खण्ड हैं जिनका सिंचाई–गहनता का वितरण स्तर मध्योच्च (Moderately High) है और सिंचाई–गहनता की परास (Range) 171 प्रतिशत से लेकर 177 प्रतिशत है। सहार विकास खण्ड सिंचाई–गहनता के मध्य निम्न (Moderately Low) विवरण स्तर में पड़ता है जिसकी परास 124 प्रतिशत से लेकर 158 प्रतिशत तक है। मानचित्र से स्पष्ट संकेत मिलता है कि विकास खण्ड औरैया, भाग्यनगर और सहार में सिंचाई–गहनता में वृद्धि के प्रयास प्राथमिकता के आधार पर किये जाने चाहिए।

सस्य सिंचाई सापेक्षता

सापेक्षता सूचकांक

सामान्यतौर पर यह माना जाता है कि जहाँ सिंचाई–गहनता अधिक होगी तो स्वाभाविक है कि वहाँ सस्य–गहनता भी अधिक होगी किन्तु किसी क्षेत्र के अवयवी क्षेत्रीय इकाइयों (Component Areal Units) में भौगोलिक वैभिन्य के कारण सस्य–गहनता और सिंचाई–गहनता में विषमतायें भी व्याप्त हो

जाती हैं। इस तथ्य को सरलता से स्पष्ट करने के लिए सस्य गहनता तथा सिंचाई–गहनता की सापेक्षता के सूचकांक (Relativity Index of Cropping Irrigation Intensities) की निर्मिती (Formulation) कर प्रयुक्त किया जा सकता है। इस सापेक्षता सूचकांक द्वारा सस्य–गहनता और सिंचाई–गहनता का आनुपातिक सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है जिसका सूत्र निम्नलिखित रूप में दृष्टव्य है :

$$RI = Ci / Ii$$

जबकि

RI = Relativity Index (सापेक्षता सूचकांक)

Ci = Cropping Intensity (सस्य–गहनता)

Ii = Irrigation Intensity (सिंचाई–गहनता)

इस प्रकार स्पष्ट है कि किसी क्षेत्र की यदि सस्य–गहनता अधिक होगी तो सापेक्षता सूचकांक का मान (Value) 1.0 से अधिक होगा और यदि सिंचाई–गहनता, सस्य–गहनता से अधिक होगी तो सापेक्षता सूचकांक का मान 1.0 से कम होगा। प्रस्तुत तालिका–2 में सस्य–गहनता तथा सिंचाई–गहनता के परिकलित समंकों का जनपद औरैया के विकास खण्डों के लिए परिकलन कर उनकी सापेक्षता के सूचकांक अभिज्ञापित किये गये हैं।

तालिका–2

जनपद औरैया के विकासखण्डवार सस्य–गहनता, सिंचाई–गहनता तथा उनके सापेक्षता सूचकांक (Relativity Indices) के परिकलित समंक (Data) एवं उनके स्थानिक वितरण के अभिज्ञापित स्तर, 2019–20

क्रमांक	सामुदायिक विकास खण्ड	सस्य–गहनता (Ci) (%)	सिंचाई–गहनता (Ii) (%)	सापेक्षता सूचकांक (RI) = (Ci/Ii)	स्थानिक वितरण स्तर		
					सस्य–गहनता के स्तर	सिंचाई–गहनता के स्तर	सापेक्षता सूचकांक के स्तर
1	2	3	4	5	6	7	8
1.	एरवाकटरा	180.59	187.48	0.96	M	Md. H	L
2.	बिधूना	173.62	167.91	1.03	Md. L	M	Md. L
3.	अछल्दा	198.42	174.98	1.13	H	Md.H	L
4.	सहार	174.33	157.44	1.11	Md.L	Md.L	L
5.	अजीतमल	180.56	173.17	1.04	M	Md.H	Md.L
6.	भाग्यनगर	177.69	120.85	1.47	M	L	H
7.	औरैया	153.87	118.70	1.30	L	L	Md.H
सकल ग्रामीण क्षेत्र		174.10	165.14	1.05	Md.L	M	Md.L
सकल नगरीय क्षेत्र		167.80	173.02	0.97	L	Md.H	L
सकल जनपद		174.10	165.76	1.05	Md.L	M	Md.L

प्रयुक्त संक्षिप्ताक्षर (Abbreviations) : H = High (उच्च), Md.H = Moderately High (मध्योच्च), M = Medium (मध्यम), Md.L. = Moderate Low (मध्य निम्न), L = Low (निम्न)

सापेक्षता सूचकांक के वितरण स्तर

अभिकलन

उपर्युक्त तालिका–2 के कालम 5 में परिकलित सस्य–गहनता एवं सिंचाई–गहनता के सापेक्षता–सूचकांकों से विभाज्यमान मूलय विधि की पंचमांशीय तकनीक द्वारा उनके स्थानिक वितरण के स्तरों का अभिकलन किया गया है। तदन्तर वर्णमात्री विधि का प्रयोग कर विकास खण्ड इकाई क्षेत्रों क

लिए वितरण स्तरों को प्रदर्शित किया गया है और उनको मानचित्र (चित्र–1ई) में प्रदर्शित किया गया है।

व्याख्या

परिकलित सापेक्षता–सूचकांकों (तालिका–2) से स्पष्ट है कि भाग्यनगर विकास खण्ड में सापेक्षता–सूचकांक का मान अधिकतम (1.47) है जबकि न्यूनतम सापेक्षता सूचकांक (0.96), एरवाकटरा विकास खण्ड में परिकलित हुआ है। केवल एरवाकटरा विकास खण्ड को छोड़कर बाकी सभी छः विकास खण्डों के सापेक्षता–सूचकांकों का मान 1.0 से अधिक है इसका तात्पर्य है कि एरवाकटरा विकास खण्ड की सस्य–गहनता, सिंचाई–गहनता की तुलना में कम है और शेष विकास खण्डों में अधिक है। इससे स्पष्ट है कि सिंचित क्षेत्रफल अधिक होते हुए भी एरवाकटरा विकास खण्ड में सकल सस्य–क्षेत्रफल कम रहा है जिसे बढ़ाया जाना चाहिए।

प्रदर्शित मानचित्र (चित्र–1ई) से स्पष्ट है कि जनपद औरैया के विकास खण्डवार वर्ष 2019–20 की सस्य–गहनता एवं सिंचाई–गहनता के सापेक्षता के सूचकांकों के स्थानिक वितरण स्तरों से स्पष्ट है कि सस्य–गहनता तथा सिंचाई–गहनता के सापेक्ष सूचकांक का उच्च स्तर भाग्यनगर विकास खण्ड में परिलक्षित है। जबकि निम्न स्तर एरवाकटरा, अछल्दा तथा सहार विकास खण्डों में प्रदर्शित है। विकास खण्ड बिधूना तथा अजीतमल में मध्य–निम्न (Moderately Low) स्तर व्याप्त है। सापेक्षता–सूचकांक का मध्योच्च (Moderately High) स्तर औरैया विकास खण्ड में तथा उच्च स्तर भाग्यनगर विकास खण्ड में परिलक्षित हुआ है। यह तथ्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि जनपद का कोई भी विकास खण्ड मध्यम (Medium) स्तर में नहीं पड़ा है। इससे यह स्पष्ट होता है कि जिन विकास खण्डों में सकल सिंचित क्षेत्रफल कम है उनमें सकल सस्य–क्षेत्रफल अपेक्षतः अधिक है।

वितरण स्तरों का तुलनात्मक विश्लेषण

जनपद औरैया के विकास खण्डों में सस्य–गहनता, सिंचाई–गहनता तथा दोनों के सापेक्षता–सूचकांकों के आधार पर (तालिका–2) स्थानिक वितरण के स्तरों का प्रदर्शन जो मानचित्रण (चित्र–1 C, D, E) में किया गया है से उनकी विकास खण्डवार तुलनात्मक व्याख्या करने पर निम्नलिखित तथ्य स्पष्ट होते हैंः–

(i) एरवाकटरा विकास खण्ड में सस्य–गहनता, सिंचाई–गहनता तथा उनके सापेक्षता–सूचकांक के स्तर क्रमशः मध्यम, मध्य–निम्न तथा निम्न कोटि के हैं।

(ii) बिधूना विकास खण्ड में यह क्रम क्रमशः मध्य–निम्न, मध्यम तथा मध्य–निम्न स्तरों का रहा है।

(iii) अछल्दा विकास खण्ड में सस्य–गहनता, सिंचाई–गहनता तथा सापेक्षता–सूचकांक के स्थानिक वितरण के स्तर क्रमशः उच्च मध्योच्च तथा निम्न श्रेणी के रूप में निर्धारित हुए हैं। यह स्तर समूह क्रम विकास खण्ड की विकसित दशा का द्योतक है।

(iv) सहार विकास खण्ड में उपर्युक्त तीनों घटकों (Components) सस्य–गहनता, सिंचाई–गहनता तथा सापेक्षता–सूचकांक के स्थानिक विवरण क्रमशः मध्य–निम्न, मध्य–निम्न तथा निम्न–स्तर की श्रेणी के हैं जो विकास खण्ड की औसत दशाओं से कम की स्थिति के द्योतक हैं।

(v) अजीतमल विकास खण्ड में उपर्युक्त तीनों घटकों के स्थानिक वितरण के स्तर क्रमशः मध्यम, मध्योच्च तथा मध्य निम्न कोटि के है जो विकास खण्ड के विकास की औसत दशाओं के व्याप्त होने वाले लक्षण प्रतीत होते हैं।

(vi) भाग्यनगर विकास खण्ड में भी अजीतमल विकास खण्ड जैसी औसत विकास की दशाओं के व्याप्त होने की स्थिति प्रतीत होती है क्योंकि सस्य–गहनता, सिंचाई–गहनता तथा सापेक्षता–सूचकांक के वितरण स्तर क्रमशः मध्यम, निम्न तथा उच्च स्तर की श्रेणी में परिकलित हुए हैं।

(vii) औरैया विकास खण्ड में उपर्युक्त तीनों घटकों के वितरण स्तर क्रमशः निम्न, निम्न तथा मध्य–निम्न कोटि के हैं जो औरैया विकास खण्ड की कृषि–भूदृश्यावली का कमजोर स्वरूप प्रदर्शित करते हैं।

(viii) सकल जनपद औरैया की सस्य–गहनता, सिंचाई–गहनता तथा उनकी सापेक्षता के सूचकांक के स्थानिक वितरण स्तर क्रमशः मध्य, निम्न, मध्यम तथा मध्य निम्न श्रेणी के हैं जो कृषि की औसत दशाओं वाले जनपद के रूप में प्रस्तुत करते हैं। इससे स्पष्ट है कि जनपद में कृषि के क्षेत्र में अभी काफी विकास करने की दिशा में प्रयास करने की आवश्यकता है।

उपसंहार

प्रस्तुत शोध–पत्र से प्राप्त निष्कर्षों से निम्नलिखित प्रमुख तथ्य परिलक्षित होते हैं :–

(i) जनपद औरैया के नगरीय क्षेत्रों की सिंचाई–गहनता (173.14 प्रतिशत) ग्रामीण क्षेत्रों की सिंचाई–गहनता (165.14 प्रतिशत) से अधिक है क्योंकि नगरीय क्षेत्रों में साग–सब्जी की खेती अधिक होती है।

(ii) जनपद के ग्रामीण क्षेत्रों में सस्य–गहनता (174.10 प्रतिशत), नगरीय क्षेत्रों की सस्य–गहनता (167.86 प्रतिशत) से अधिक है क्योंकि वहाँ खाद्यानों का उत्पादन अधिक होने के कारण अधिक सस्य–क्षेत्रफल की आवश्यकता होती है।

(iii) विकास खण्डों में सिंचाई–गहनता निम्नतम औरैया विकास खण्ड में 118.70 प्रतिशत से लेकर अधिकतम एरवाकटरा विकास खण्ड में 187.48 प्रतिशत तक है जबकि सकल जनपद की सिंचाई–गहनता 165.76 प्रतिशत ही है। इससे स्पष्ट होता है कि जनपद में अभी और भी अधिक शुद्ध सिंचाई क्षेत्रफल में वृद्धि करने की आवश्यकता है।

(iv) औरैया और भाग्यनगर विकास खण्डों में सकल सिंचाई क्षेत्रफल कम होते हुए भी सकल सस्य–क्षेत्रफल अपेक्षतया अधिक है। इसका तात्पर्य यह निकलता है कि इन विकास खण्डों में वर्षा आधारित (Rainfed) फसलें अधिक बोई जाने के कारण सकल सस्य–क्षेत्रफल, सकल सिंचित क्षेत्रफल से अधिक है।

(v) सारांशतः सस्य–गहनता, सिंचाई–गहनता तथा उनके सापेक्षता– सूचकांकों के स्थानिक वितरण स्तरों के तुलनात्मक विश्लेषण से स्पष्ट है कि विकास खण्ड औरैया, भाग्यनगर तथा सहार कृषि विकास के कमजोर इकाई क्षेत्र हं तथा सकल जनपद औरैया भी कृषि विकास की औसत दशाओं का ही द्योतक है। औरैया में कृषि के क्षेत्र में अभी और भी अधिक विकास करने की आवश्यकता है। इस परिप्रेक्ष्य में यह संस्तुत्य है कि सस्य–गहनता, सिंचाई–गहनता एवं कृषि उत्पादन में वृद्धि सुनिश्चित करने के लिए निरन्तर शोध अध्ययन भी किये जाने के प्रयास भी अपेक्षित हैं।

References :

1. Govt. of U.P., Sankhyikiya Patrika, Janpad Auraiya, Varsh - 2021, Karyalaya Zila Arth Evam Sankhyadhikari, Auraiya.
2. The Oxford School Atlas, 2015, Oxford University Press, Delhi.
3. Govt. of U.P., Mahafishkhana (Record Room), Office of the District Magistrate, Auraiya.
4. Poonam Mishra, "Manav Sansadhan Vikas Niyojan - Tehsil Auraiya (Janpat Etawah, Uttar Pradesh) Ka Ek Bhaugolik Vishleshan", An Unpulished Ph.D., Thesis (in Hindi) of Kanpur University, 1992, pp. 58-60.
5. A Mahmood, Statistical Methods in Geographial Studies, Rajesh Publicatios, New Delhi, 1977, pp. 13-16.
6. F.J. Monkhouse and H.R. Wilkinson (ed.), Maps and Diagrams, Second Edition, First Published as a Uiversity Paperback, 1963, Methuen & Co. Ltd., London, pp. 43-47 and pp. 282-288.
7. R.K. Tandon and SP. Dhondiyal, Principles and Methods of Farm Management, 1967, p. 60.
8. D.S. Chauhan, Studies in Utilization of Agricultural Land, Shivlal and Co., Agra,

1966, p. 166.
9. Poonam Mishra, op. cit. p. 8.
10. J.P. Sharma, Prayogik Bhoogol (Practical Geography) in Hindi, Rastogi and Company, Meerut, 2nd Edition, 1987, pp. 334-342.
11. R.C. Sharma and Poonam Mishra, 'A Statistical Technique Determining Levels of Spatial Distribution : A Methodic Approach' in S.K. Mishra (ed.) in Sustainable Development and Geospetial Technology, Udai Publishing House, Delhi, 2019, pp. 334-342.
12. R.C. Sharma and Poonam Mishra, op. cit. pp. 339-341.

APPENDIX-I

जनपद औरैया के सामुदायिक विकासखण्डवार प्रतिवेदित क्षेत्रफल, शुद्ध सस्य–क्षेत्रफल, सकल सस्य–क्षेत्रफल, शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल, सकल सिंचित क्षेत्रफल के उनके अपने प्रतिवेदित क्षेत्रफल तथा जनपद के सजातीय क्षेत्रफल के सापेक्ष प्रतिशतता के परिकलित आँकड़ें, वर्ष 2019–20

(क्षेत्रफल हेक्टेयर में)

क्रमांक	सामुदायिक विकासखण्ड	प्रतिवेदित क्षेत्रफल	शुद्ध सस्य क्षेत्रफल स्वरूप (Form)			सकल सस्य क्षेत्रफल स्वरूप (Form)			शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल स्वरूप (Form)			सकल सिंचित क्षेत्रफल स्वरूप (Form)		
			शुद्ध सस्य क्षेत्रफल	प्रतिवेदित क्षेत्रफल से प्रतिशत (%)	जनपद के शुद्ध क्षेत्रफल से प्रतिशत (%)	सकल सस्य क्षेत्रफल	प्रतिवेदित क्षेत्रफल से प्रतिशत (%)	जनपद के सकल सस्य क्षेत्रफल से प्रतिशत (%)	शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल (Form)	प्रतिवेदित क्षेत्रफल से प्रतिशत (%)	जनपद के शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल से प्रतिशत (%)	सकल सिंचित क्षेत्रफल	प्रतिवेदित क्षेत्रफल से प्रतिशत (%)	जनपद के सकल सिंचित क्षेत्रफल से प्रतिशत (%)
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15
1.	एरवाकटरा	23941	17227	71.96	11.97	31111	129.95	12.41	17528	73.21	13.55	32861	137.26	15.31
2.	विधूना	32981	22934	69.54	15.93	39819	120.73	15.89	21964*	66.60	16.97	36880	119.04	17.18
3.	अछल्दा	28195	20086	71.24	13.95	37854	134.26	15.11	21118	74.90	16.32	36952	131.06	17.21
4.	सहार	29894	22283	74.54	15.48	38845	129.94	15.50	21873	73.17	16.90	34437	115.20	16.04
5.	अजीतमल	22131	15027	67.90	10.44	27133	122.60	10.83	15042	67.97	11.62	26048	117.70	12.13
6.	भाग्यनगर	27370	18688	60.28	12.98	33206	121.32	13.25	19725	72.07	15.24	25415	92.86	11.84
7.	औरैया	41185	27582	66.97	19.16	42441	103.05	16.94	18522	44.97	14.31	21985	53.38	10.24
	योग ग्रामीण	205697	143827	67.94	99.92	250409	121.74	99.92	129337	62.88	99.95	214578	104.32	99.95
	योग नगरीय	429	112	26.11	0.08	188	43.82	0.08	63	14.69	00.05	109	25.41	00.05
	योग जनपद	206125	143939	69.83	100.00	250597	121.57	100.00	129400	62.78	100.00	214687	104.06	100.00

क्षेत्रफल–समंक स्रोत : सांख्यिकीय पत्रिका, जनपद औरैया, वर्ष 2021

* = संशोधित समंक (Corrected Data)

***

बिहार में गरीबी निवारण का बदलता स्वरूप

*रूपेश कुमार**

सारांश

बिहार में गरीबी का स्वरूप अन्य विकसित राज्यों की अपेक्षाकृत भिन्न है। यहां अधिकतर एक गरीबी व्यक्ति अकुशल मजदूर है जो कृर्षि कार्य पर रोजगार के लिए आश्रित है। अतएव इन कार्यक्रमों में सुनिश्चित रोजगार योजना उल्लेखनीय है और अंत में गरीबी उन्मूलन का क्षेत्रीय विकास उपागम आता है जिसका उद्देश्य क्षेत्र विशेष का विकास एवं आर्थिक संवर्द्धन होता है। इन कार्यक्रमों में प्रत्यक्ष रोजगार के अतिरिक्त ऊपरी पूंजी और संरचना विकास पर अधिक बल दिया जाता है। बिहार में गरीबी की विकट समस्या को दृष्टिगत रखते हुए केन्द्र सरकार ने गरीबी निवारण के लिये प्रयासरत हैं पंचवर्षीय योजनाओं में गरीबी उन्मूलन को प्रमुख प्राथमिकताओं में सम्मिलित किया गया है। पांचवी पंचवर्षीय योजना में गरीबी हटाओं के नारे का प्रमुख प्राथमिकता में सम्मिलित किया गया है। आर्थिक विकास के अलावा लोगों के जीवन स्तर को ऊपर उठाने के लिए बुनियादी सेवाओं की व्यवस्था के लिये सरकारी हस्तक्षेप की आवश्यकता होती है। स्वरोजगार और मजदूरी रोजगार दोनों के सृजन के लिये विशेष रूप से बनाये गये गरीबी रोधी कार्यक्रम पुनः रचित संरक्षित किये गये है।

मुख्य शब्द : गरीबी का स्वरूप, प्रत्यक्ष रोजगार, आर्थिक विकास, गरीबी हटाओ, स्वरोजगार, मजदूरी

गरीबी का अर्थ उस सामाजिक क्रिया से है जिसमें समाज का एक भाग अपने जीवन की मौलिक आवश्यकताओं को पूरा काम में असमर्थ होता है। प्रत्येक व्यक्ति अपना जीवन–यापन करने के लिए बुनियादी आवश्यकताओं पर निर्भर होता है, जब ये अपनी रोजमर्रा की आवश्यकताओं को भी पूरा करने से वंचित रह जाते हैं और केवल जैसे–तैसे निर्वाह स्तर पर गुजारा करते है, तो इस परिस्थिति को कहा जाता है कि समाज में व्यापक निधर्नता व्याप्त है। अतएव बिहार की 90 प्रतिशत आबादी गांवों में रहती है। गरीबी हटाने के तमाम उपायों और दावों के बावजूद बिहार में सर्वाधिक गरीबी है। स्वाभाविक तौर पर बिहार चर्चा के केन्द्र में आ जाता है।

बिहार में गरीबी का स्वरूप अन्य विकसित राज्यों की अपेक्षाकृत भिन्न है। यहां अधिकतर एक गरीब व्यक्ति अकुशल मजदूर है जो कृषि कार्य पर रोजगार के लिए आश्रित है। इनके अतिरिक्त व्यापक ऋणग्रस्तता, सीमांत कृषकों की बदहाली, सामंतवादी शक्तियों का एकजुट होना, सरकार द्वारा भूमि सुधार उपायों का कारगर ढंग से लागू नहीं करना यहां गरीबी के प्रमुख कारण है। बिहार में गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों को तीन श्रेणी में बांटा जा सकता है। पहला, ऐसी परियोजना जो पूर्णतया राज्य द्वारा वित्त पोशित है, जैसे सामुदायिक विकास (मुख्यमंत्री सड़क योजना, मुख्यमंत्री क्षेत्र योजना आदि)। दूसरा, ऐसी परियोजना जो 50–50 के अनुपात में केन्द्र तथा राज्य सरकार द्वार वित्त पोषित है जैसे समेकित ग्रामीण विकास योजना तथा सूखा पीड़ित क्षेत्र योजना। तीसरा, ऐसी परियोजनाएं जिनका अधिकतर वितरण केन्द्र द्वारा होता है, जैसे प्रधानमंत्री रोजगार योजना, सर्व शिक्षा अभियान, इंदिरा आवास योजना आदि।

अतएव उल्लेखनीय है कि राज्य में गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं, उन्हें हम संरचना के आधार पर तीन वर्गों में बांट सकते हैं। सबसे पहला तो आया संवर्द्धन एवं कल्याण योजनाएं हैं जिनका उद्देश्य गरीबी रेखा से नीचे जनमानस को आय संबर्द्धन का अवसर प्रदान करना है जैसे समेकित ग्राम विकास येाजना (IRDP), ग्रामीण स्वरोजगार योजना, ग्रामीण महिला एवं शिशु विकास कार्यक्रम के दौरान गरीब परिवारों को आय संवर्द्धन के साधन उपलब्ध कराए जाते हैं अथवा प्रशिक्षण दिए जाते हैं ताकि इनमें साधनों के वितरण तथा वित्त पोशण में सब्सिडी की व्यवस्था की जाती है। दूसरा संरचनात्मक गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम मजदूरी रोजगार कार्यक्रम है जिनका उद्देश्य

* शोध छात्र (अर्थशास्त्र), बी.आर.ए.बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर

कृषि कार्यों में पहचान किए हुए गरीबी रेखा के नीचे आने वाले परिवारों को मजदूरी रोजगार प्रदान करती है तथा अनेक कार्यक्रमों के अन्तर्गत काम के बदले अनाज भी दिया जाता है। इन कार्यक्रमों में सुनिश्चित रोजगार योजना उल्लेखनीय है और अंत में गरीबी उन्मूलन का क्षेत्रीय विकास उपागम आता है जिसका उद्देश्य क्षेत्र विशेष का विकास एवं आर्थिक संवर्द्धन होता है। इन कार्यक्रमों में प्रत्यक्ष रोजगार के अतिरिक्त ऊपरी पूंजी और संरचना विकास पर अधिक बल दिया जाता है, जैसे सामुदायिक विकास कार्यक्रम, न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम।

मुख्यमंत्री नीतीश कुमार के सतत प्रयास के कारण सात निश्चय के जरिए विकास की संभावनाओं को चौतरफा विस्तार किया जा रहा है। बेरोजगारों, कामगारों व मजदूरों को काम के मौके दिए जा रहे हैं। सरकार के आंकड़े बताते हैं बिहार तेजी से विकास करने वाले अन्य राज्यों की तुलना में आगे निकल रहा है। इसके लिए सरकार के दो स्तरों पर किए जा रहे प्रयास को कारण कहा जा सकता है। पहला गरीबी उन्मूलन एवं दूसरा रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने की दिशा में बेहतर प्रयास।

लेकिन यहां इस बात का उल्लेख किया जाना चाहिए कि अधिकारिक रूप से जारी आंकड़ों के अनुसार बिहार में हर दूसरा आदमी गरीबी रेखा के नीचे है। दो तिहाई से अधिक जनसंख्या को स्वस्थ पौष्टिक आहार तथा स्वच्छ पेयजल उपलब्ध नहीं हैं जो गरीबी रेखा से ऊपर भी माने जाते हैं, उनके उपर हमेशा यह खतरा मंडराता रहता है कि यिद मानसून खराब रहा, प्राकृतिक विपदा आ गई तक वे भी गरीबी रेखा के नीचे जा सकते हैं। 1990 के उपरान्त कृषि में व्यापार शर्तों में सुधार हुआ है। कृषि विकास दर इस बात की पुष्टि करती है। कृषि वस्तओं के मूल्य में वृद्धि होने से कृषि की आवश्यकता लाभदायकता तो जरूर बढ़ी परन्तु साथ ही साथ कमजोर वर्ग के उपभोग स्तर में गिरावट की स्थिति देखी गई है।[1]

गौरतलब है कि प्रमुख प्रदेशों में बिहार देष का सबसे अधिक गरीब राज्य है। जहां आबादी की आधा से भी अधिक भाग गरीबी रेखा के नीचे जीवन व्यतीत कर रहा है। 1988 में राज्य के ग्रामीण क्षेत्र में लगभग 3 करोड़ लोग तथा शहरी क्षेत्र में 36 लाख लोग गरीबी रेखा के नीचे आंके गये थे। 1993 में विशेष बल में इनकी कुल संख्या 4.39 करोड़ आंकी है। इन आंकड़ों से स्पष्ट है कि राज्य में गरीबी का विस्तार ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक है। आंकड़ों के अनुसार 2010–2011 में सर्वभारत में गरीबी रेखा से नीचे 26.10 प्रतिशत आबादी थी। वहीं बिहार में 42.6 प्रतिशत आबादी गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन कर रही है। उड़ीसा में 47 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी रेखा के नीचे है, जबकि केरल में 12.72 प्रतिशत, गुजरात में 14.7 प्रतिशत, आंध्र प्रदेश में 15.77 प्रतिशत, महाराष्ट्र तथा पंजाब में 6.6 प्रतिशत थी। जबकि बिहार की स्थिति अभी भी चिंताजनक बनी हुई थी। जो तालिका से स्पष्ट होता है –

तालिका–01

गरीबी रेखा के नीचे की जनसंख्या का निम्न राज्यवार विवरण[2] (2010–2011)

राज्य	ग्रामीण		शहरी		कुल
	जनसंख्या (लाख में)	गरीबी रेखा (रूपया)	जनसंख्या (लाख में)	गरीबी रेखा	जनसंख्या (लाख में)
आन्ध्र प्रदेश	79.49	163.02	74.47	278.14	153.97
अरूणाचल प्रदेश	3.62	232.05	0.11	212.42	3.73
असम	94.33	232.05	2.03	212.42	96.36
बिहार	450.86	212.16	42.06	238.49	493.35
झारखण्ड	351.64	232.05	45.3	212.42	395.94
उड़ीसा	240.38	194.94	57.2	288.56	48.91
गुजरात	62.16	202.11	43.02	297.22	105.19
मणिपुर	6.33	232.05	0.47	212.42	6.80

इस संदर्भ में ध्यान देने लायक यह है कि बिहार में इन दिनों गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले परिवारों को लेकर राजनीति गरमा गई है। बिहार में गरीबी और विसंगितयां कुछ ज्यादा ही हैं। माना जाता है कि देश में 1.9 प्रतिशत परिवर भूख से पीड़ित हैं। गरीबी औरा गरीबों का सवाल बिहार के लिये नया नहीं है। नया यह है कि अर्थशास्त्री सुरेष तेंदुलकर समिति की रिपोर्ट में बताया गया है कि बिहार में गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले लोगों की तादाद 54.4 प्रतिशत तथा उड़ीसा में 57.2 प्रतिशत, झारखण्ड में 45.3 प्रतिशत है।

वास्तव में बिहार में गरीबी रेखा से नीचे रहने वाली आबादी का सवाल गरीब राज्य के अर्थशास्त्र के साथ सीधे जुड़ा हुआ है। गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले परिवारों को कम कर आंका जायेगा तो केन्द्र से मिलने वाले कोटे का अनाज कम हो जायेगा। स्वभाविक तौर पर गरीबों का आकलन अधिक होगा तो सहायता राशि भी अधिक होगी। यह अलग बात है कि गरीबों की चिंता कौन और कितना करता है। बिहार के जाने–माने अर्थशास्त्री शैवाल गुप्ता का मानना है कि सरकार के गरीबी आकलन का तरका साठ के दशक का बना हुआ है। उस जमाने में यह मान कर चला जाता था कि शिक्षा और स्वास्थ्य सरकार के जिम्मे होगा, लेकिन इस मामले में केन्द्र सरकार पूरी तरह भाग खड़ी हुई। अन्यथा बिहार जैसे गरीब राज्यों के साथ कभी सीधे तो कभी छुपे तौर पर भेदभाव होता ही रहेगा।[3]

इस बात को समझने की जरूरत है कि आज भी बिहार में पलायन रोकने के लिए स्थायी विकल्प नजर नहीं आते। शिक्षा भी पलायन का महत्वपूर्ण पहलू है। लेकिन सरकार उच्च मानदंडों वाले शिक्षण संस्थान न खोल छात्रों के पलायन पर घड़ियाली आंसू बहाती है। इसमें कोई शक नहीं है कि घर पर काम मिलने से मौसमी पलायन पर रोक लगेगी और नरेगा की इसमें अहम भूमिका होगी।

उदाहरण के तौर पर हम कह सकते हैं कि बिहार के मुजफ्फरपुर जिला के अन्तर्गत बन्दरा प्रखण्ड में आपार धन राशि से चलाइ जा रही विभिन्न परियोजनाएं निर्धनता निवारण में लगभग असफल रही । मुजफ्फरपुर जिला के बंदरा प्रखण्ड में विगत तीन वर्षों में महात्मा गांधी राष्ट्रीय रोजगार गारंटी योजना की उपलब्धियां बहुत संतोषजनक रही है। अतः गरीबी उन्मूलन हेतु बिहार की परिस्थतियों के परिप्रेक्ष्य में एक उपयुक्त रणनीति का निर्धारण आवश्यक है क्योंकि हरेक जिले की अपनी कुछ पृथक विशेषताएं और समस्याएं हैं। गरीबी उन्मूलन के लिए अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन दोनों प्रकार के उपाए किये जाने चाहिए। अर्थात् वित्तीय वर्ष 2016–2017, 2017–2018 एवं 2018–2019 में जॉब कार्ड उपलब्ध कारवाये गये परिवारों, रोजगार प्राप्त कर चुके परिवारों एवं 100 दिवस का रोजगार प्राप्त कर चुके परिवारों की संख्या में सराहणीय वृद्धि हुई है।

तालिका – 02
बिहार में मनरेगा के अन्तर्गत अर्जित मानव दिवस आय का विवरण

वर्ष	प्रतिदिन प्रतिव्यक्ति आय (रूपये में)
2017–2018	125.00
2018–2019	152.00
2019–2020	190.00

उपर्युक्त तालिका से यह स्पष्ट होता है कि मनरेगा योजनाओं के अन्तर्गत कार्य करने वाले श्रमिकों की देय मजदूरी दर अधिनियम के आधार पर निर्धारित की जाती है। जो वर्ष 2017–2018 में प्रतिदिन व्यक्ति अर्जित आय 125 रू. वर्ष 2018–2019 में 152 रू. में तथा 2019–2020 में 190 रू. प्रतिदिन प्रति व्यक्ति अर्जित आय निर्धारित की गई है।

तालिका – 03
बिहार के गरीबी निवारण के अनुमान (तेंदुलकर कार्यप्रणाली)

	गरीबी निवारण के अनुपात (प्रतिशत)			गरीबी निवारण की संख्या (करोड़)		
वर्ष	ग्रामीण	शहरी	योग	ग्रामीण	शहरी	संयुक्त योग
1993–1994	50	32	45	329	75	404
2004–2005	42	26	37	326	81	407
2009–2010	34	21	30	278	76	355
2011–2012	26	14	22	217	53	270

स्रोतः आर्थिक सर्वेक्षण 2018 (इंडिया इन फिगर्स, 2018)

तालिका 3 से यह स्पष्ट है कि बिहार में गरीबी अनुपात में वर्ष 1993–94 में लगभग 45 प्रतिशत से वर्ष 2004–2005 में 37.2 प्रतिशत तक महत्वपूर्ण गिरावट आई है। वर्ष 2011–12 में गरीबी रेखा के नीचे के गरीबों का अनुपात और भी गिर कर 22 प्रतिशत पर आ गया। यदि यही प्रवृत्ति रही तो अगले कुछ वर्षों में गरीबी रेखा से नीचे के लोगों की संख्या 20 प्रतिशत से भी नीचे आ जाएगी। यद्यपि गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले लोगों का प्रतिशत पूर्व के दो दशकों (1973–1993) में गिरा है, गरीब लोगों की संख्या वर्ष 2004–2005 में 407 मिलियन से गिरकर 270 मिलियन वर्ष 2011–12 जिसमें औसतन गिरावट 2.2 प्रतिशत वर्ष 2004–2005 से 2011–2012 के बीच में हुई है।

इस प्रकार मनरेगा योजना में श्रमिकों की मजदूरी वृद्धि से महिला एवं पुरुष श्रमिक दोनों शहर की ओर होने वाली पलायन में दिन प्रतिदिन कमी आई और उनके जीवन स्तर में सुधार आई है। इस प्रकार गरीबी निवारण के लिए पंचवर्षीय योजनाओं में किये गये प्रयास का निम्नांकित दिया गया है जो निम्नवत् है –

गरीबी निवारण के लिए पंचवर्षीय योजनाओं के किये गये प्रयास

गरीबी निवारण के लिए कई कदम उठाए गए हो लेकिन सच्चाई यही है कि गरीबी निवारण का कोई भी कार्यक्रम हमारे यहां पूरी तरह से सफल नहीं हो पाया है। किसी भी योजना के उद्देश्य एवं लक्ष्यों की पूर्ति के लिए प्राथमिकताएं निर्धारित करना आवश्यक होता है। यही कारण है कि भारत में सभी पंचवर्षीय योजनाओं के मसौदे में उद्देश्य एवं प्राथमिकताओं का स्पष्ट विवरण मिलता है जिसे निम्नलिखित रूप में देखा जा सकता है।[4]

प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951–56)

द्वितीय विश्वयुद्ध और देश के विभाजन के फलस्वरूप क्षतिग्रस्त अर्थव्यवस्था का पुनर्निर्माण 1 अप्रैल, 1951 से प्रारंभ इस योजना का मुख्य उद्देश्य था। इस योजना के तहत कृषि और सिंचाई को उच्च प्राथमिकता दी गयी।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना (1956–61)

इस योजना में आधारभूत और भारी उद्योग की स्थापना को उच्च प्राथमिकता दी गयी, जिस पर कुल परिव्यय का 28 फीसदी विनियोजित किया गया। भारी उद्योग के लिए यह योजना मील का पत्थर साबित हुई।5

तृतीय पंचवर्षीय योजना (1961–66)

इस योजना का मुख्य उद्देष्य अर्थव्यवस्था को आर्थिक गतिशीलता तक पहुंचाना था। इस योजना में परिवहन और संचार को उच्च प्राथमिकता दी गयी और इस पर कुल परिव्यय का 24.6 फीसदी खर्च किया गया। भारत को मजबूत आधारभूत ढ़ांचे का अधिकतर निर्माण इसी योजना में हुआ ।

चतुर्थ पंचवर्षीय योजना (1969–74)

इस योजना का मुख्य उद्देश्य यह है कि स्थिरता के साथ आर्थिक विकास तथा आत्मनिर्भरता की अधिकाधिक प्राप्ति एवं आत्मनिर्भरता के लक्ष्य की प्राप्ति के लिये आयात प्रतिस्थापक को अधिक महत्व दिया गया।

पांचवी पंचवर्षीय योजना (1974–79)

इस योजना का अभिप्राय यह है कि गरीबी उन्मूलन और आत्मनिर्भरता। यही कारण था कि इस योजना में शक्ति, विज्ञान और प्रौद्योगिकी को उच्च प्राथमिकता दी गयी तथा इसके लिए 26.2 फीसदी संसाधन का बंटवारा किया जाना।

छठी पंचवर्षीय योजना (1980–85)

प्रारंभ में इस योजना का प्रमुख उद्देष्य सामाजिक न्याय, ऊर्जा का विकास एवं आर्थिक अर्थव्यवस्था की स्थापना करना। इस योजना न ऊर्जा तंत्र को उच्च प्राथमिकता दी गयी और इस क्षेत्र पर कुल परिव्यय का 30.4 प्रतिशत भाग व्यय किया गया। इसी सतत् प्रयास से विकास के बारे में चिंतन प्रारंभ किया गया।

सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985–90)

इस योजना के मुख्य उद्देश्य वही थे जिनका उल्लेख पहले की योजनाओं में किया गया था। इस तरह इस येाजना में भी संवृद्धि, आधुनिकीकरण, आत्मनिर्भतरा और सामाजिक न्याय पर जोर था। सातवीं पंचवर्षीय योजना में इसलिए रोजगार को एक सीधा और अपने आप में महत्वपूर्ण उद्देश्य माना गया था। लेकिन यह योजना आयोग की राय में रोजगार को स्थायी रूप से बनाये रखने के लिए उसका उत्पादक होना जरूरी है। तात्पर्य यह है कि रोजगार में विस्तार के द्वारा उत्पादन और आय में निरन्तर वृद्धि होनी चाहिए।

आठवीं पंचवर्षीय योजना (1992–97)

इस योजना का मूलभूत उद्देश्य विभिन्न पहलुओं में मानव विकास करना था। जो इस योजना के अन्तर्गत ऊर्जा और सामाजिक सेवाओं को उच्च प्राथमिकता दी गयी और उन पर क्रमशः 26.6 प्रतिशत तथा 18.2 प्रतिशत तथा 18.2 प्रतिशत संसाधन का व्यय किया गया।

नौवीं पंचवर्षीय योजना (1997–2002)

इस योजना का प्रारंभ सामाजिक समानता और न्यायपूर्ण वितरण के साथ विकास का प्रमुख उद्देश्य था। इस योजना के अन्तर्गत ऊर्जा और सामाजिक सेवा क्षेत्र को उच्च प्राथमिकता दी गयी। जो आगे चलकर सामाजिक न्याय के क्षेत्र में यह योजना बेहद महत्वपूर्ण साबित हुई।[6]

दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002–2007)

इस योजना आयोग के उपाध्यक्ष श्री के.सी. पंत द्वारा प्रस्तुत दसवीं पंचवर्षीय योजना के दृष्टिकोण पत्र के प्रारूप को 1 सितम्बर 2002 को राष्ट्रीय विकास परिषद् की बैठक में स्वीकृत दी गई इस योजना के परिक्षणगत लक्ष्य निर्धनता, योजनावधि, श्रम शक्ति वृद्धि, प्राथमिक शिक्षा एवं साक्षरता दर पर ध्यान केन्द्रित किया गया ।

ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना (2007–2012)

इस योजना में कृषि की कमजोरियों को दूर करने, किसानों के लिये उच्च उत्पादकता व अधिक आय जल संसाधन का कुशल उपयोग रोजगार सृजन आदि बिन्दुओं पर ध्यान दिया गया।

बारहवीं पंचवर्षीय योजना (2012–2017)

इस परियोजना में क्रियान्वयन, बढ़ता प्रशासनिक व्यय, गलत हितग्राहियों का चयन, सामाजिक जागरूकता का अभाव और भ्रष्टाचार इन कार्यक्रमों की असफलता के प्रमुख कारण रहे है।[7] इस स्थिति के बावजूद मुजफ्फरपुर जिला के बंदरा प्रखं डमें महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना से ग्रामीण जनजीवन के कई स्तरों पर खुशहाली आई है तथा आर्थिक स्थिति ने नई करवट ली है।

बिहार में गरीबी की विकट समस्या को दृष्टिगत रखते हुए केन्द्र सरकार ने गरीबी निवारण के लिये प्रयासरत हैं पंचवर्षीय योजनाओं में गरीबी उन्मूलन को प्रमुख प्राथमिकताओं में सम्मिलित किया

गया है। पांचवी पंचवर्षीय योजना में गरीबी हटाओं के नारे का प्रमुख प्राथमिकता में सम्मिलित किया गया है। आर्थिक विकास के अलावा लोगों के जीवन स्तर को ऊपर उठाने के लिए बुनियादी सेवाओं की व्यवस्था के लिये सरकारी हस्तक्षेप की आवश्यकता होती है। स्वरोजगार और मजदूरी रोजगार दोनों के सृजन के लिये विशेष रूप में बनाये गये गरीबी निवारण कार्यक्रम पुनः रचित एवं संरक्षित किये गये है।[8] ताकि इस कार्यक्रम को अधिक कारगर बनाया जा सके।

अतएव आय तथा रोजगार प्राप्त करने वाले गरीबी निवारण कार्यक्रम, गरीबों को अतिरिक्त आय उपलब्ध कराते हैं जिसका उपयोग ये लोग और खाद्यान्नों की खरीदारी के लिए कर सकते है। गरीबी निवारण के कार्यक्रमों को पूरा ध्यान अतिरिक्त आय के सृजन पर केन्द्रित रहा है। परिवार कल्याण, पौष्टिक आहार, सामाजिक सुरक्षा तथा न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति की ओर ध्यान नहीं दिया गया है। इन कार्यक्रमों में अपाहिज, बीमार तथा उत्पादक रूप से काम करने में आयोग्य लोगों के लिए कुछ नहीं किया गया है।[9] साथ ही जनसंख्या के लगातार बढ़ते हुए दबाव की परिस्थितियों में जबकि खेतों का आकार लगातार छोटा होता चला जा रहा है, स्वरोजगार उद्यमों पर या मजदूरी के रोजगार कार्यक्रमों पर निर्भरता सही नहीं है।

निष्कर्ष –

निष्कर्ष तौर पर यह कहा जा सकता है कि जब तक संरचना में आमूल परिवर्तन नहीं होते अर्थात् जब तक उत्पादन संबंधों को बदला नहीं जाता तब तक हमारे जैसे बिहार राज्य के गरीबों के लिए एवं बेरोजगारी के लिए बहुत धिक आशा करना व्यर्थ होगा। इन कार्यक्रमों का लाभ गरीबों को कम, धनी एवं मध्यम वर्ग को अधिक मिला है। उपरोक्त अध्ययन सामान्यतः एक खास दृष्टिकोण से किये गये जिसके परिणाम स्वरूप वे संकीर्ण परिधि में अवरूद्ध होकर रह गए।

संदर्भ :

1. प्रधान, वसंत के.एण्ड एम.आर सलूजा, 'पोवर्टी स्टडी इन इंडिया : एक रिव्यू', एसीएईआर वर्किंग पेपर, नवम्बर 1998
2. सुकान्त, 2003, जड़ता की अतल गहराई में बिहार, हिन्दुस्तान, दिनांक 22 दिसम्बर, 2003, पृ. 1–13
3. वही, पृ. 14–15
4. अहमद, फरजन्द, 2003, बिहार बदहाली में सबसे आगे, इंडिया टूडे, मई 21 2003, पृ. 33
5. गौरीशंकर राजहंश, ''बिहार को दुनिया से जोड़ने का एक अवसर' हिन्दुस्तान, पटना, 23 अप्रैल 2009
6. श्रीकांत, राज और समाज, वाणी प्रकाषन, नई दिल्ली, 2011, पृ. 14
7. वर्ल्ड डेवलपमेंट सूचक 2016, सतत विकास के लक्ष्य की विशेषता, द वर्ल्ड बैंक, ऑक्सफोर्ड यूनीर्वसिटी प्रेस, दिल्ली।
8. टाईम्स ऑफ इंडिया, पटना, 14 जनवरी, 2012
9. अमिताभ, ''नीतीश कुमार ख्याली पुलाव'', 13 दिसम्बर 2012, पृ.14

***